नवनिर्माण की पुकार

अणुव्रत आन्दोलन के प्रवर्तक सन्त प्रवर आचार्य श्री तुलसी गणी की दिसम्बर १९५६ की दिल्ली यात्रा, अवसर पर सन्ध्या दार्शनिक प्रवचनों और देश विदेश के लब्धप्रतिष्ठ विचारकों, पत्रकारों, धार्मिक नेताओं, राजनीतिज्ञों तथा कूटनीतिज्ञों के साथ जीवन निर्माण सम्बन्धी गम्भीर मन्त्रणा एवं चर्चावार्ता का ब्यौरेवार सचित्र विवरण।

सम्पादक

सत्यदेव विद्यालंकार

सहसम्पादक

प्रेमचन्द भारद्वाज

(मूल्य दो रुपया डाकखर्च अलग)

प्राक्कथन

ईसा से २०० वर्ष पहले की लगभग २२०० वर्ष पुरानी एक एतिहासिक घटना है। रोमन सम्राट जूलियस सीजर मिस्र विजय करने गये। वहाँ से लौट कर सीनेट में उनको अपनी विजय यात्रा की रिपोर्ट प्रस्तुत करनी थी। उन दिनों में सेनापति और सम्राट सीनेट में स्वयं उपस्थित होकर अपनी विजययात्राओं का विवरण उपस्थित किया करते थे। सम्राट खड़े हो गये और केवल छोटे छोटे तीन वाक्य बोल कर बैठ गये। उन का भावार्थ यह था कि 'मैं गया मैंने देखा और मैंने जीत लिया। संक्षिप्त विवरण पर सभी सदस्य स्तम्भित रह गये क्योंकि किसी को भी यह आशा नहीं थी कि बिना किसी युद्ध, संघर्ष अथवा प्रतिरोध के मिस्र पर इतनी सरलता से विजय प्राप्त कर ली जायगी।

इतिहास अपने को दोहराता है और एतिहासिक घटनाओं की पुनरावृत्ति होती रहती है। वे घटनायें सर्वांश में एक दूसरे से चाहे न मिलती हों फिर भी उन में पर्याप्त समता रहती है। उनका क्षेत्र भी बदलता रहता है, परन्तु परिणाम उनका एक सा ही होता है। २२०० वर्ष पुरानी उस घटना के प्रकाश में अणुव्रत आन्दोलन के प्रवर्तक आचार्य श्री तुलसी की राजधानी की यात्राओं पर यदि कुछ विचार किया जाय तो उनका विवरण सहज में जूलियस सीजर के शब्दों में दिया जा सकता है। भेद केवल इतना करना होगा कि जूलियस सीजर के उत्तम पुरुष के वाक्यों का प्रयोग प्रथम पुरुष में करना होगा।

आचार्य श्री साम्राज्यवादी राजनीतिक नेता नहीं हैं। जूलियस सीजर की आकांक्षायें उनके हृदय में विद्यमान नहीं हैं। वे किसी साम्राज्य

के प्रतिनिधि अथवा प्रतीक नहीं हैं। वे एक धार्मिक, आध्यात्मिक अथवा सांस्कृतिक महापुरुष अथवा धर्मगुरु हैं। सांस्कृतिक चेतना को जाग्रत कर मानव के नवनिर्माण का बीड़ा उन्होंने उठाया है। उनके पास न कोई सेना है न सैन्य सामग्री है और न युद्ध के किसी प्रकार के आयुध। उनके पीछे कानून या शासन की भी किसी प्रकार की कोई शक्ति नहीं है। तन ढकने मात्र के वस्त्र काष्ठ के कुछ पात्र और स्वयं अपने कन्धों पर सम्हाल सकने योग्य स्वाध्याय सामग्री के अतिरिक्त उनके पास कोई और सांसारिक संग्रह रह नहीं सकता। अपने भोजन की आवश्यकता गोचरी द्वारा इस ढंग से पूरी की जाती है कि उसका अतिरिक्त भार किसी भी गृहस्थ पर नहीं पड़ना चाहिये। अपनी मर्यादा के अनुसार किसी भी गृहस्थ के यहाँ उसकी प्रस्तुत भोजन सामग्री में से कुछ थोड़ा सा लेकर अपनी क्षुधा निवृत्ति कर ली जाती है। सायंकाल सूर्यास्त के बाद खाने या पीने का कोई भी सामान अपने पास रक्खा नहीं जाता। यात्रा भी बिना किसी वाहन व साधन के सर्वथा पैदल की जाती है। सांसारिक दृष्टि से ऐसे बाह्य साधन सामग्री रहित व्यक्ति 'सैनिक आक्रमण' की कल्पना तो क्या करेगा वह किसी से कोई जोर जबर दस्ती अथवा आग्रह भी नहीं कर सकता। उपदेश करना उसकी अन्तिम सीमा है। उससे पार कर कोई आदेश देना भी उसका काम नहीं है। ऐसे महान् व्यक्ति की जूलियस सीजर के साथ तुलना नहीं की जा सकती। फिर भी उनकी धर्म यात्रा किसी भी सेनापति अथवा सम्राट की दिग्विजय करने वाली विजययात्राओं से कम महत्वपूर्ण नहीं है। इसीलिए जूलियस सीजर के शब्दों को कुछ बदल कर हम आचार्य श्री की धर्मयात्राओं का विवरण इन शब्दों में देने का साहस कर रहे हैं—

"वे आये, उन्होंने देखा और उन्होंने जीतलिया"

आचार्य श्री की सात वर्ष पहले की गयी दिल्ली यात्रा की तुलना में तीसरी बार १९५६ के दिसम्बर मास में की गयी यात्रा के साथ

की जा सके तो सहज में पता चल सकता है कि तब और अब म कितना अतर है। तब अणुव्रत आदोलन को उपेक्षा, उपहास, निन्दा और प्रचड विरोध का सामना करना पड़ा था। उस के प्रति तरह तरह क सदेह एव आशकायें प्रकट की गयीं। उस पर साम्प्रदायिक सकोणता, धार्मिक गुटबदी और पूजीपतियो का राजनीतिक स्टट होन क आरोप लगाये गये। परन्तु अब १९५६ मे उसका कया आशातीत स्वागत और कल्पनातीत समथन किया गया। तब भी कुछ समय बाद उसकी सफलता पर लोगों की आखें चौंधिया गयी थीं। बड़े विस्मय के साथ लोगों ने देखा था कि अत्यन्त प्रबल रूप में फले हुए भ्रष्टाचार, अनाचार तथा अनतिकता के विरोध में उठायी गयी आवाज म कसी शक्ति है और उसक पीछे कितनी बडी साधना है। आचाय श्री की तपपूत वाणी ने तब भी राजधानी को झकझोर दिया था और भूकम्प आने पर जसे पक्की टूट-फूट तक डोल जाती है वसे हो दिल्ली को झकझोरने स पदा हुई हलचल की लहरें न केवल हमारे देश क छोट बड़े नगरों तक सीमित रहीं, किन्तु विदेशों तक मे उनका प्रभाव फैल गया। लेकिन अब १९५६ की यात्रा के ४० दिनों में व्यापक नतिक क्रान्ति की जो प्रचड लहरें पदा हुई, उनसे यह सिद्ध हो गया कि अणुव्रतों में ससार को हिला देने वाली वह दिव्य प्राणशक्ति विद्यमान है, जो अणु आयुधों के अभिशाप को वरदान में परिणत कर सकती है। अणुव्रतों के इस दिव्य रूप की जो छाप राजधानी के माध्यम से देश विदेश के विचारकों के मस्तिष्क पर पड़ी, वह आचाय श्री की इस यात्रा की सबसे बड़ी सफलता है। इसको सभी ने एक मत स स्वीकार किया है। यह अवसर भी कुछ ऐसा था कि यूनस्को, बौद्ध गोष्ठी तथा जन गोष्ठी आदि क सास्कृतिक समारोहों के कारण देशविदेश के कुछ विशिष्ट विचारक राजधानी में पहले स हा उपस्थित थे और आचाय श्री क सन्देश को उन तक पहुचाने के लिए अनायास हो अनकूलता उपस्थित हो गयी।

आचाय श्री का यह तीसरी बार का दिल्ली आगमन यों ही नहीं हो

के प्रतिनिधि अथवा प्रतीक नहीं हैं। वे एक धार्मिक, आध्यात्मिक अथवा सांस्कृतिक महापुरुष अथवा धर्मगुरु हैं। सांस्कृतिक चेतना को जागृत कर मानव के नवनिर्माण का बीड़ा उन्होंने उठाया है। उनके पास न कोई सेना है, न सैन्य सामग्री है और न युद्ध के किसी प्रकार के आयुध। उनके पीछे कानून या शासन की भी किसी प्रकार की कोई शक्ति नहीं है। तन ढकने मात्र के वस्त्र काष्ठ के कुछ पात्र और स्वयं अपने कन्धों पर सम्हाल सकने योग्य स्वाध्याय सामग्री के अतिरिक्त उनके पास कोई और सांसारिक संग्रह रह नहीं सकता। अपने भोजन की आवश्यकता गोचरी द्वारा इस ढंग से पूरी की जाती है कि उसका अतिरिक्त भार किसी भी गृहस्थ पर नहीं पड़ना चाहिये। अपनी मर्यादा के अनुसार किसी भी गृहस्थ के यहाँ उसकी प्रस्तुत भोजन सामग्री में से कुछ थोड़ा सा लेकर अपनी क्षुधा निवृत्ति कर ली जाती है। सायंकाल सूर्यास्त के बाद खान या पीने का कोई भी सामान अपने पास रक्खा नहीं जाता। यात्रा भी बिना किसी वाहन व साधन के सर्वथा पैदल की जाती है। सांसारिक दृष्टि से ऐसे बाह्य साधन सामग्री रहित व्यक्ति 'सैनिक आक्रमण' की कल्पना तो क्या करेगा वह किसी से कोई जोर जबर दस्ती अथवा आग्रह भी नहीं कर सकता। उपदेश करना उसकी अंतिम सीमा है। उसको पार कर कोई आदेश देना भी उसका काम नहीं है। ऐसे महान् व्यक्ति की जूलियस सीजर के साथ तुलना नहीं की जा सकती। फिर भी उनकी धर्म यात्रा किसी भी सेनापति अथवा सम्राट की दिग्विजय करने वाली विजययात्राओं से कम महत्वपूर्ण नहीं है। इसीलिए जूलियस सीजर के शब्दों को कुछ बदल कर हम आचार्य श्री की धर्मयात्राओं का विवरण इन शब्दों में देने का साहस कर रहे हैं—

"वे आये, उन्होंने देखा और उन्होंने जीतलिया"

आचार्य श्री की सात वर्ष पहले की गयी दिल्ली यात्रा की तुलना यदि तीसरी बार १९५६ के दिसम्बर मास में की गयी यात्रा के साथ

को आ सके तो सहज मे पता चल सकता है कि तब और अब म कितना अंतर है । तब अणुव्रत आन्दोलन को उपेक्षा उपहास, निन्दा और प्रबल विरोध का सामना करना पड़ा था । उस के प्रति तरह तरह के सन्देह एव आशकायें प्रकट की गयीं । उस पर साम्प्रदायिक सकीर्णता धार्मिक गुटबंदी और पूंजीपतियों का राजनीतिक स्टंट होने के आरोप लगाये गये । परन्तु अब १६५६ मे उसका बना आशातीत स्वागत और कल्पनातीत समर्थन किया गया । तब भी कुछ समय बाद उसकी सफलता पर लोगों की आंखें चौंधिया गयी थीं । बड़े विस्मय के साथ लोगों ने देखा था कि अत्यन्त प्रबल रूप में फैले हुए भ्रष्टाचार अनाचार तथा अनतिकता के विरोध में उठायी गयी आवाज मे कसी शक्ति है और उसके पीछे कितनी बड़ी साधना है । आचार्य श्री की तपःपूत वाणी ने तब भी राजधानी को झकझोर दिया था और भूकम्प प्रान पर जसे पृथ्वी दूर-दूर तक डोल जाती है वसे ही दिल्ली को झकझोरने स पदा हुई हलचल की लहरें न केवल हमारे देश क छोटे बड़े नगरों तक सीमित रहीं, किन्तु विदेशों तक में उनका प्रभाव डोल पड़ा । लेकिन अब १६५६ की यात्रा के ४० दिनों में व्यापक नतिक क्रान्ति की जो प्रबल लहरें पदा हुई, उनसे यह सिद्ध हो गया कि अणुव्रतों में ससार को हिला देने वाली वह दिव्य अणुशक्ति विद्यमान है जो अणु आयुधों के अभिशाप को वरदान में परिणत कर सकता है । अणुव्रतों के इस दिव्य रूप की जो छाप राजधानी के माध्यम से देश विदेश के विचारकों के मस्तिष्क पर पड़ी वह आचार्य श्री की इस यात्रा की सबसे बड़ी सफलता है । इसको सभी ने एक मत स स्वीकार किया है । यह अवसर भी कुछ एसा था कि यूनेस्को, बौद्ध गोष्ठी तथा जैन गोष्ठी आदि के सांस्कृतिक समारोहों के कारण देशविदेश के कुछ विशिष्ट विचारक राजधानी में पहले स ही उपस्थित थे और आचार्य श्री के सन्देश को उन तक पहुचाने के लिए अनायास ही अनुकूलता उपस्थित हो गयी ।

आचार्य श्री का यह तीसरी बार का दिल्ली आगमन मों ही नहीं हो

गया था। उसके पीछे यदि कोई आन्तरिक प्रेरणा थी तो बाहरी प्रेरणा भी कुछ कम न थी। अणुव्रत आन्दोलन के व्यापक नैतिक महत्व को राजनीतिक क्षेत्रों मे भी स्वीकार किया जाने लग गया था। भले ही पहली पंचवर्षीय योजना के निर्माण काल मे नैतिक निर्माण के महत्व को ठीक ठीक न आंका जा सका हो परन्तु दूसरी योजना के निर्माण काल मे उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकी। समाज व्यवस्था के लिए समाजवादी आदर्श को स्वीकार करने के बाद राजनीतिक नेताओं का भी ध्यान देश की अस्त-व्यस्त सामाजिक स्थिति की ओर आकर्षित होना सहज और स्वाभाविक था। उन्हें यह अनुभव होने मे विलम्ब नहीं लगा कि समस्त सामाजिक बुराइयों का मूलभूत कारण वह अनैतिकता है जो हमारे सामाजिक जीवन को भीतर ही भीतर घुन की तरह खाती जा रही है। उन्होंने यह भी जान लिया कि व्यक्तिगत जीवन के निर्माण के बिना राष्ट्र निर्माण के महान स्वप्न और महान योजनायें पूरी नहीं की जा सकतीं। उनके लिए स्वयं राजनीतिक हलचलों से इस महान कार्य के लिए समय निकाल सकना सम्भव न था। इसी कारण उनका ध्यान उन विशिष्ट व्यक्तियों की ओर आकृष्ट हुआ, जो नैतिक उत्थान अथवा नैतिक निर्माण के कार्य में संलग्न थे। आचार्य श्री ने पिछले सात आठ वर्षों में दिल्ली पंजाब राजस्थान खानदेश गुजरात, बम्बई, पूना तथा मध्यभारत आदि की लगभग बारह पन्द्रह हजार माल लम्बी पैदल दिग्विजय की सी जो धर्मयात्राएं की थीं उसमें अणुव्रत का अमर सन्देश उन्होंने घर घर पहुंचा दिया। उसकी गूंज निरन्तर राजधानी में भी सुनी जाती रही और यह ऊंचे राजनीतिक क्षेत्रों मे भी स्वीकार किया गया कि अणुव्रत आन्दोलन राष्ट्र निर्माण की मुख्य नींव तैयार करने के लिए एक अमोघ साधन है। सम्भवतः इसी कारण हमारे महान नेता प्रधान मन्त्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने भी आचार्य श्री को दिल्ली आकर उन से मिलने का सन्देश मुनि श्री नगराज जी से एक मुलाकात मे निवेदन किया था। आचार्य-श्री के दिल्ली मे हुए प्रथम पदार्पण के बाद से ही राज

धानी में उनके सुयोग्य शिष्य मुनि श्री बुद्धमलजी और उनके बाद उनके विद्वान शिष्य एवं प्रखर प्रवक्ता मुनि नगराज जी तथा मुनि महेन्द्र जी आदि अणुव्रत के सतत् प्रसार में लगे हुए थे। उनके ही कारण राजधानी में आन्दोलन के लिए निरंतर अनुकूलता पैदा होती जा रही थी। उन्होंने अणुव्रत के सन्देश को राष्ट्रपति भवन और मन्त्रियों की कोठियों से सामान्य जनता तक पहुंचाने का निरंतर प्रयत्न किया था। अणुव्रत आन्दोलन के अन्य समर्थकों और कार्यकर्ताओं की भी यह प्रबल इच्छा थी कि आचार्य-श्री को इस महत्वपूर्ण अवसर पर राजधानी पधारना ही चाहिये क्योंकि वे यहां आयोजित सांस्कृतिक आयोजनों का लाभ अपने इस महान आन्दोलन के लिए प्राप्त करने की प्रबल इच्छा रखते थे। उनकी इच्छा यह थी कि आचार्य-श्री को उज्जैन से सीधे दिल्ली आकर १९५६ का चातुर्मास राजधानी में ही करना चाहिये। राजधानी के विशिष्ट नेता और कार्यकर्ता भी इसी मत के थे। कांग्रेस महासमिति के महामन्त्री श्री श्री मन्नारायण, श्री गोपीनाथ अमन, श्री मती सुचेता कृपलानी, डा० सुशीला नैयर श्री मती सावित्री देवी निगम डा० युद्धवीर सिंह तथा ऐसे ही अन्य महानुभाव भी समय समय पर अपना आग्रह तथा अनुरोध प्रकट करते रहते थे। आचार्य श्री ने दिल्ली न आ कर सरदारशहर में चातुर्मास करने का निश्चय कर लिया। अनेक सज्जनों ने जिनमें श्री श्री मन्नारायण प्रमुख थे, सरदारशहर पहुंच कर सार्वजनिक रूप से भी दिल्ली पधारने के लिए अनुरोध किया था। चातुर्मास पूरा होने से पहले आचार्य श्री दिल्ली के लिए प्रस्थान नहीं कर सकते थे। फिर भी दिल्ली प्रस्थान के सम्बन्ध में आचार्य श्री ने अन्य सन्तों से विचार विनिमय करना प्रारम्भ कर दिया और अन्त में यह निश्चय प्रकट कर दिया कि चातुर्मास पूरा करके दिल्ली को प्रस्थान किया जायगा।

आचार्य-श्री ने एक प्रवचन में अपनी दिल्ली यात्रा के सम्बन्ध में ठीक ही कहा था कि मेरी दिल्ली यात्रा को लेकर कई लोग भिन्न भिन्न

अनुमान लगाते हैं कई लोगों न अपनी कल्पना मे इसे अत्यधिक महत्व दिया है और ये शायद आपस म बातें करते होंगे कि राष्ट्रपति, पडित नेहरू आदि बड बड नताओं ने मुझे वहाँ आन का निम त्रण दिया है। पर मैं यह स्पष्ट कर देता हू कि मेरे पास उनका कोई निम त्रण नहीं है। हाँ उनकी इस सम्बन्ध मे रुचि अवश्य है। मेरा वहाँ जान का उद्देश्य देश विदेश से आये लोगा मे सम्पर्क कायम करना और देहली वासियो की प्रार्थना को पूरा करना है। देहली आजकल अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं का केन्द्र बना हुआ है। वहाँ हम अपन शासन की बात को प्रभावशाली ढग से रख सकते हैं सुना सकते हैं। वहाँ के नताओं का भी खयाल है कि मेरा वहाँ जाना उपकारक हो सकता है। लोगो का स्वभाव होता है कि पहले वे बडी बडी कल्पनाए कर लते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि सारी कल्पनाए सही निकलें। फिर अगर कोई बात उनकी कल्पना के अनुकूल नहीं निकलती तो वे बड हताश हो जाते हैं और उतनी ही अधिक हीन आलोचना कर डालते हैं। ये दोनों बातें अच्छी नहीं हैं। लोगों को न तो पहले अधिक कल्पना ही करनी चाहिए और न फिर अधिक हताश ही होना चाहिये। मेरी देहली यात्रा के सम्बन्ध म भी मैं समझता हू सबका दृष्टिकोण सतुलित रहना चाहिये।

कार्तिक पूर्णिमा (१८ नवम्बर) को चातुर्मास पूरा होन पर दूसरे दिन १९ नवम्बर को आचार्य श्री न २३ साधु और सात साध्वियो के साथ दिल्ली की ओर प्रस्थान कर दिया और पहले ही दिन १६ मील का विहार किया गया। २०० मील का मार्ग तय कर के ३० नवम्बर को दिल्ली पहुचना था क्योंकि उस दिन वहाँ जैन सेमिनार में प्रवचन की व्यवस्था की जा चुकी थी। प्रतिदिन इतना लम्बा विहार किये बिना लम्बा मार्ग नियत अवधि मे पूरा नहीं किया जा सकता था। सुजानगढ से मुनि श्री सुमेरमल जी तथा छापर से मुनि श्री दुलहराज जी को भी ३० नवम्बर को दिल्ली पहुचने का आदेश दे दिया गया था। वे भी नियत दिन पर वहाँ आ पहुचे।

विहार की पादयात्रों की कहानी के लिए मुनि श्री मुलतानमल जी के शब्दों से अधिक उपयुक्त शब्द नहीं मिल सकते। उन्होंने उसका वर्णन इस प्रकार किया है कि "हमारा सारा समय प्राय चलने में ही बीतता। कभी दो विहार होते, कभी तीन विहार होते। आराम पूरा कर पाते या नहीं कि रात हो जाती सभी तयार हो जाओ" फिर भी आश्चर्य यह कि किसी को इसकी शिकायत नहीं थी। रात्रि को बढकर पानी पर थकान आप ही दबा लेते और सो जाते। सुबह तक थकान मिट जाती। फिर सुबह विहार के लिए तयार हो जाते। कई दिनों तक यह क्रम चला। आखिर औदारिक शरीर पर इसका असर तो आया ही। बहुतों के पैर सूजने लगे। कोई बोलता तो गरम पानी सेककर पैर धो लेता और कोई नहीं बोलता तो चुपचाप अपनी बहादुरी का परिचय देता। पर तो भी मानसिक उत्साह में कोई कमी नहीं आई। रास्ते में आचार्य श्री के पैरों में भी दर्द हो गया। दो तीन दिन तो बोले नहीं। पर आखिर यह कोई चुप नहीं थी जो छुपाई जा सके। मुनि श्री मन्नालाल ने यह प्रकट कर दिया कि 'आचार्य श्री के पैरों में भी दर्द है' और उनके जिम्मे और भी बहुत काम थे। आये लोगों से मिलना व्याख्यान देना चर्चा-वार्ता करना आदि। हम चाहते थे कि आचार्य श्री विश्राम करें, पर उन्हें रात को भी देर तक विश्राम मिलना मुश्किल था। हम लोग तो कभी-कभी दूसरे कमरे में जाकर आराम भी कर लेते थे, पर आचार्य श्री के पास सोने वाले संतों को तो पूरी तपस्या ही करनी पड़ती थी।

तारानगर, राजगढ़ से भिवानी तक बालू का कच्चा रास्ता था। सोचा करते—यहाँ चलने में दिक्कत होती है। आगे (भिवानी से दिल्ली तक) पक्की सड़क आ जायेगी। चलने में सुगमता रहेगी। कच्चे रास्ते में जगह-जगह कांटे आते हैं रेत बहुत है। जगह-जगह रास्ता पूछना पड़ता है फिर भी कभी-कभी तो चक्कर खा ही लेते थे। ये सब दुविधाएं भिवानी से आगे टल जायेंगी। पर बात और ही निकली।

सर्दी की मौसम थी। सुबह ही सुबह जब परो का खून जम जाता और सड़क पर चलते तो पर कट जाते। आसपास की पगडंडियाँ कंकरीली और कंटीली होने के कारण काम मे नहीं आतीं। अत दिल्ली पहुँचते पहुचते पर लहूलुहान हो गये। उपचार भी करते, कपड़ा भी बांधते पर २० २० मील चलने तक उनका क्या पता चलता था प्राय फट जाता। साथ-साथ सड़कों पर मोटरों की भरमार रहती। मोटर की आवाज सुनकर सड़क छोड़कर नीचे चलते। मोटर निकल जाने के बाद फिर सड़क पर आते। एक मोटर जाती कि दूसरी मोटर की आवाज सुनाई देती। यही क्रम रहता।

रास्ते मे ग्रामीण लोग खेतो मे काम करते हुये पूछते—कहाँ जाते हो ?

हम कहते—दिल्ली।

वहाँ क्या कोई मेला है ?

हाँ वहाँ सत्सग होगा। दूसरे देशों के बड़-बड़ विचारक अभी दिल्ली आये हुए हैं उनका मेला है अत हम भी उनसे मिलने दिल्ली जा रहे हैं।

बहुत से लोग कहते—तुम मोटर मे क्यों नहीं बठ जाते ? तुम अपना बोझ खुद क्यों ढोते हो ? तुम्हारे साथ इतनी मोटर चलती हैं सर्विस भी चलती है फिर भी तुम इतना दु ख क्यो पाते हो ? कई कहते—देखो ये बचारे इतनी कड़कड़ाती सर्दी मे नग पर नग सिर अपने कधो पर बोझा लिये क्या घूमते हैं ? व हमारे पास आते और कहते—अभी सर्दी बहुत है। चलो गाँव में हम तुम्हें रोटी देंगे। धूप निकलने पर आगे जाना।

बड मनोरजक प्रश्न होते। हम उनको सस्मित उत्तर देते हुए आगे बढ़ जाते। कई गाँव तो बीच मे ऐसे आये, जहां शायद जन साधुओं ने कभी पर भी नहीं रख थे। हमारा वेष और इतना बड़ा काफिला देखकर आश्चर्य करते, सकुचाते और कहीं-कहीं अपमान भी करते।

पर हम इनकी क्या परवाह थी, अपने रास्ते पर चलते रहते ।

मार्ग में न जाने कितने दृश्य आते थे । कहीं एकान्त स्थान, मन्द हवा, दोनों तरफ लहलहाते खेत, भोले भाले ग्रामीणों के झुंड । जहाँ जाते वहीं मेला सा लग जाता । ग्रामीण बच्चे तो आहार भी मुश्किल से करने देते । रात को सोने के लिए मकान भी कच्चे मिलते । कहीं स्कूलों में ठहरते तो ऊपर के रोशनदान प्रायः फूटे मिलते । नींद कम आती थी । कपड़े कम थे और नीचे से फर्श टूटा-फूटा होता । दरवाजों के किवाड़ भी टूटे रहते । पर इतना होने पर भी कभी मन में विषाद नहीं आया । सबका लक्ष्य था दिल्ली पहुँचना और परवशता तो थी नहीं । स्वेच्छा से सब लोगों ने इसे अपनाया था । अतः विषाद की बात ही क्या थी ।

कुछ भाई बहिन भी इस पदयात्रा में साथ थे । कुछ श्रावक मोटरों पर भी सारी यात्रा में साथ रहे परन्तु जो एक बार पैदल चल लेता था वह फिर मोटर पर सवार होना पसन्द नहीं करता था । इस प्रकार एक बड़ी अच्छी टोली बन गई थी । आचार्य श्री का विनोदपूर्ण हास्य सभी को निरंतर स्फूर्ति एवं प्रेरणा प्रदान करता रहता था । किसी भी व्यक्ति से जब आचार्य श्री यह पूछते कि कहो भाई थकान का क्या हाल है तो सहसा ही सारी थकान दूर हो जाती और नयी स्फूर्ति से अगले विहार के लिए तयार हो जाते । मार्ग में अनेक गाँवों मे श्रद्धालु लोगों ने आचार्य श्री से अपने यहाँ कुछ समय रुकने का आग्रह किया किन्तु निश्चित दिन निश्चित ध्येय पर पहुँचने का संकल्प निरन्तर आगे बढ़ने के लिये प्रेरित करता रहा और ऐसा कोई आग्रह स्वीकार नहीं किया जा सका । अनुरोध करने वाले दिल्ली पहुँचने का महत्व जानकर स्वयं भी उसके लिए विशेष आग्रह नहीं करते थे । दिल्ली में अणुव्रत आन्दोलन तथा आचार्य श्री की अन्य सांस्कृतिक प्रवृत्तियों में दिलचस्पी रखनेवाले अनेक श्रावक श्राविकायें राजधानी के कार्यक्रमों में सम्मिलित होने के लिए दूर-दूर से दिल्ली आ पहुँचे थे ।

आचार्य श्री के दिल्ली के अत्यन्त व्यस्त कार्यक्रमों, आयोजनों, प्रवचनों तथा मुलाकातों का विस्तृत विवरण इस ग्रन्थ मे दिया गया है। पाठक स्वयं उनके सम्बन्ध मे सम्मति कायम करेंगे तो अच्छा होगा। फिर भी संक्षेप मे यह बताना आवश्यक है कि आचार्य श्री ने अपने इस प्रवास में एक भी समय ऐसा नहीं जाने दिया जब कि कोई न कोई कार्यक्रम नहीं होता था और जिज्ञासु अथवा मुमुक्षु लोग आचार्य श्री को घेरे न रहते थे। पदल परिभ्रमण करते हुए भी सारी राजधानी का मन्थन अथवा विलोडन कर लिया गया। राष्ट्रपति भवन, मन्त्रियों के निवास स्थान संसद सदस्यों के निवासगृह, सार्वजनिक सभास्थल राजघाट बन्दीगृह, हरिजन बस्ती, दिल्ली सचिवालय, न्यायालय विद्यालय तथा ऐसे ही अन्य सब स्थान आचार्य श्री के शुभ पदार्पण से पवित्र हो गये और चारों ही ओर कोने-कोने मे आचार्य श्री का जन जीवन के नव निर्माण का सन्देश गूंज उठा। उसकी प्रतिध्वनि से कितने ही देश विदेश के जिज्ञासु मुमुक्षु यात्री विचारक लेखक पत्रकार, अनेक नैतिक व सांस्कृतिक आन्दोलनों मे लगे हुये प्रचारक बौद्ध भिक्षु यूनेस्को के प्रतिनिधि राजनीतिज्ञ आचार्य श्री के दर्शन प्राप्त करने और उनसे विचार विनिमय करने के लिये आते रहे। अंग्रेज अमेरिकन, फ्रांसीसी जर्मन जापानी तथा सीलोनवासी विदेशी अच्छी संख्या में आचार्य श्री के सान्निध्य मे उपस्थित होते और चर्चावार्ता के बाद अत्यन्त सन्तुष्ट होकर लौटते। इन मुलाकातों में विचारों का मन्थन बड़ा ही समाधानकारक रहा। पदल यात्रा के कारण आचार्य श्री एक स्थान से दूसरे स्थान पर अपने संघ के साथ जब विहार करते थे तब जनता श्रद्धा भरी आँखों से स्वागत करती हुई सम्मान के साथ नतमस्तक हो जाती थी। चारों ओर राजधानी मे आचार्य श्री के नाम का धूम मच गई थी। दिल्ली को झकझोर कर आचार्य श्री ने उसमें नैतिक नवनिर्माण की जो नवचेतना पैदा की उसका प्रभाव दूर दूर तक फल गया।

राजधानी के इन दिनों के कार्यक्रमों मे अणुव्रत सेमिनार अणुव्रत

सप्ताह चुनाव शुद्धि के लिए प्रेरणा और मत्री दिवस का आयोजन प्रमुख थे। अणुव्रत आन्दोलन आचार्य-श्री की प्रमुख देन है, जिसका लक्ष्य जन जीवन का नैतिक नवनिर्माण करना है। आचार्य-श्री के नव निर्माण के अनुसार राष्ट्रनिर्माण का भव्यभवन व्यक्तिगत जीवननिर्माण की ठोस एवं सुदृढ नींव के बिना खड़ा नहीं किया जा सकता। यह आन्दोलन उसी नींव का निर्माण कर रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से यह आन्दोलन मानव को सर्वथा निर्भय बना कर वह अभयदान देना चाहता है, जिससे अणुआयुधों के निर्माण की होड़ निरर्थक सिद्ध होकर हिंसा प्रतिहिंसा तथा घात प्रतिघात की समस्त दुर्भावनाओं का स्वतः अन्त हो जायगा और अत्यन्त दु साध्य प्रतीत होने वाली निःशस्त्रीकरण तथा विश्वमैत्री आदि की समस्त समस्यायें सहज में हल हो जायेगी। इसी हेतु आचार्य श्री के दिल्ली प्रवास का श्रीगणेश अणुव्रत सेमिनार से किया गया और दूसरा मुख्य आयोजन राष्ट्रीय चरित्र निर्माण मूलक अणुव्रत चरित्र निर्माण सप्ताह का रक्खा गया जिसका उद्घाटन सप्रू भवन में प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने किया था।

चुनाव सम्बन्धी भ्रष्टाचार और नैतिक पतन हमारे राष्ट्र की प्रमुख समस्या बन गये हैं। उनमें जातिवाद तथा सम्प्रदायवाद का बोलबाला है उसमें राष्ट्र के बड़े-बड़े नेता भी चिंता में पड गये हैं। उनके कारण पैदा हुई गुटबाजी ने कांग्रेस सरीखी शक्तिशाली संस्था की भी जड़ें हिला दी हैं। आचार्य-श्री ने इन सब अनर्थों के निवारण के लिए चुनाव शुद्धि के आन्दोलन को रामबाण औषध के रूप में उपस्थित किया। उसकी उपयोगिता को चुनाव आयुक्त श्री सुकुमार सेन तथा सभी दलों के राजनीतिक नेताओं ने भी स्वीकार किया। उसके सम्बन्ध में तैयार की गयी प्रतिज्ञायें यदि कुछ समय पहले उपस्थित की गयी होतीं तो उनका निश्चित प्रभाव प्रकट हुए बिना न रहता। फिर भी जो विचारात्मक क्रान्तिकारी प्रेरणा उससे प्राप्त हुई वह व्यर्थ नहीं गयी और भविष्य में उसके और भी अधिक शुभ परिणाम प्रकट होने

निश्चित हैं।

'मैत्री दिवस' का आयोजन राष्ट्रीय की अपेक्षा अन्तर्राष्ट्रीय महत्व अधिक रखता है। महात्मागांधी की एक पथभ्रष्ट युवक द्वारा की गई निर्मम हत्या मानव समाज के प्रति किया गया एक बहुत बडा अपराध है। इसी कारण पारस्परिक भूलों एवं अपराधों की आन्तरिक प्रेरणा से क्षमा याचना करने के उद्देश्य से आयोजित इस दिवस के कार्यक्रम के लिए राजघाट से अधिक उपयुक्त दूसरा स्थान नहीं हो सकता था, और राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद जी से अधिक सात्विक दूसरा कोई राजनीतिज्ञ उसके उदघाटन के लिये मिलना कठिन था। इस दिवस का शुभ आरम्भ इस भावना से किया गया कि प्रतिवर्ष किसी नियत दिवस पर यदि शुद्ध अन्तःकरण से सब लोग एक दूसरे के प्रति किये गये ज्ञात अज्ञात अपराधों एवं भूलों के लिये क्षमायाचना करेंगे तो विश्व का वातावरण इस पवित्र भावना से प्रभावित हुए बिना न रहेगा और प्रत्येकव्यक्ति-व्यक्ति के रूप में विश्वमैत्रीके लिए अपनी सामर्थ्य के अनुसार यह सबसे बडी और सबसे अधिक पवित्र भावनामय भेंट दे सकता है। इसी कारण राष्ट्रपति ने इस आयोजन का स्वागत करते हुए उसको स्थायी बनाने पर जोर दिया।

आचार्य श्री के प्रवचनों में इस बार एक अद्भुत और अलौकिक प्रेरणा निहित थी। उनके उदगारों में विस्मयजनक आकर्षण पाया गया। उनकी तप पूत साधना में दिव्य शक्ति विद्युत शक्ति के समान विद्यमान थी। इसी कारण उनके प्रति बिना किसी प्रयास के अनायास ही छोटे बड़े सभी क्षेत्रों में स्वाभाविक आत्मीयता पैदा हो गयी। हर किसी ने उनको अपना पथ प्रदर्शक मान लिया। आचार्य श्री का व्यक्तित्व धर्मगुरु के साथ-साथ जन-नेता के रूप में भी निखर उठा और अणुव्रत आन्दोलन यथार्थ में जीवन, जागृति ज्योति प्रेरणा स्फूर्ति एवं क्रियाशीलता का स्रोत बन गया। समाचारपत्रों और रेडियो विभाग के सहयोग से उसको जो समर्थन मिला उससे उस के महत्व

एव उपयोगिता मे चार चांद और लग गये।

चालीस दिन के अत्यन्त व्यस्त एव व्यग्र कार्यक्रम से भी आचार्य श्री—दिल्ली की जनता की नैतिक भूख को पूरा नहीं कर सके। लोगो की प्रबल इच्छा थी कि आचार्य श्री को अभी दिल्ली मे ही कुछ दिन और रहना चाहिये और अपने प्रवचनोंके लाभ से उसको वचित नहीं करना चाहिये। पिलानी के उदार-नेता सेठ जुगलकिशोर जी बिडला ने भी आचार्य श्री से दिल्ली म कुछ स्थायी रूप से रहने का अनुरोध किया था। उस अनुरोध म दिल्ली की जनता की आकांक्षा एव आग्रह प्रतिध्वनित होता था परन्तु सरदार शहर मे माघ महोत्सव के आयोजन के कारण आचार्य श्री का राजधानी मे अधिक दिन रहना सभव न हो सका और दिल्लीवासियों को अतृप्त छोडकर आचार्य श्री ७ जनवरी को सरदारशहर क लिए विदा हो गये। लौटते हुए आने की अपेक्षा विहार मे कठोरता कहीं अधिक उग्र हो गयी। वर्षा और कुहरे की प्राकृतिक अडचना स अधिक बडी अडचन स्थान स्थान पर रुकने के लिए किया गया लोगों का आग्रह था। आग्रह टाला जा सकता था, किन्तु वर्षा और कुहरे को कौन टालता? इस कारण होनेवाली देरी को विहार की गति बनाकर ही पूरा किया जा सकता था। रास्ते में सर्दी का प्रकोप भी कुछ कम न था। आचार्य-श्री ने अपने जीवनकाल मे पहली बार नागलोई में सर्दी के प्रकोप की शिकायत की। प्रात काल उन्होने कहा— आज तो इतनी सर्दी लगी है कि इसके कारण रातभर जागरण करना पडा। यह पहला ही अवसर है कि इतने लम्बे समय तक सर्दी के कारण जागना पडा हो। पर यह खेद की बात नहीं है। अब एकान्त का समय मिला। मनन, चिंतन और स्वाध्याय मे खूब जी लगा। ऐसा एकान्त समय मुझे कभी ही मिला करता है क्योंकि सारे साधु तो गहरी नींद मे सोये हुये थे।

चिंतन मनन और साधना की यह कैसी ऊँची भावना है

लौटते हुए पिलानी म जो चार दिन का प्रवास हुआ

भी इस ग्रन्थ मे दिया गया है। पिलानी शिक्षा का एक प्रमुख सांस्कृतिक केन्द्र होने के कारण ही नहीं किन्तु वहाँ जो कार्यक्रम हुए उनके कारण भी पिलानी के प्रवास का विशेष महत्व है। आचार्य-श्री ने वहाँ अपने पहले ही प्रवचन में यह महत्वपूर्ण घोषणा की थी कि हमारा देश केवल कृषि प्रधान नहीं किन्तु ऋषि प्रधान है और उस के ऋषियों की अमर वाणी ने सदा ही मानव को सुख शान्ति का आत्मिक सन्देश प्रदान किया है।

माघ कृष्णा ११ (२६ जनवरी, १९५७) को आचार्य-श्री संघ सहित सानन्द सकुशल सरदारशहर वापिस पधार गये। अपनी इस धर्मयात्रा के सम्बन्ध मे आचार्य श्री ने सरदारशहर में एक प्रवचन मे स्वयं यह कहा— मेरी यह यात्रा अत्यन्त आनन्ददायिनी रही। इसका एक मात्र कारण था—सकल्प की दृढता और इसी दृढता के कारण अनेक बाधाओं के आने पर मैं भी समझता हूँ कि मेरा प्रत्येक कार्य बिल्कुल नियत समय पर हो पाया। मैंने यहाँ से चलते वक्त सकल्प किया था कि मुझे दहनी ३० तारीख को पहुँचना है और ठीक उसी दिन वहाँ पहुच गया। आने का भी मेरा निश्चय इसी प्रकार बिल्कुल पूरा हुआ। आप समझिये कि इतनी लम्बी यात्रा मे घटों की भी देरी नहीं हुई है और यदि ऐसा होता तो सम्भव है मेरे कार्यक्रम मे बाधा आ सकती। पर मुझे इसकी खुशी है कि मेरी यात्रा बड़ी आनन्ददायी रही।

इस सफल और आनन्ददायी यात्रा का यह विवरण भी पाठकों के लिए वैसा ही प्रेरणादायक एवं स्फूर्तिदायक होना चाहिए जैसी कि आचार्य-श्री की वह यात्रा प्रत्यक्ष में थी। आचार्य श्री के इस दिल्ली प्रवास से असदिग्ध रूप मे यह प्रमाणित हो गया कि अणुव्रत आन्दोलन समय की एक प्रबल माँग है और आचार्य-श्री ने उसको पूरा करने का बीडा उठाकर एक महान कार्य का सम्पादन किया है। 'नहि कल्याण कृत्कश्चिद्दुर्गतिं तात गच्छति' की गीता की वाणी अणुव्रत

आभार प्रदर्शन

नवनिर्माण की पुकार अणुव्रत आन्दोलन के प्रवर्तक आचार्य श्री तुलसी की दिल्ली-यात्रा का संक्षिप्त विवरण है जो आचार्य श्री के प्रेरणादायी सन्देशों, मार्मिक प्रवचनों, देश विदेश के लब्ध प्रतिष्ठ जननायकों और विचारकों के साथ जीवन निर्माणात्मक तात्विक विषयों पर हुए वार्तालापों द्वारा मानव मात्र का चरित्र निर्माण और अध्यात्म जागृति का सृजनात्मक मार्ग देता है।

यह विवरण बहुत पहले ही प्रकाशित हो जाना चाहिए था। लगभग चालीस दिन के नई दिल्ली के प्रवास में आचार्य श्री के पुण्य प्रभाव से राजधानी का कोना कोना प्रभावित हो उठा। इस प्रेरणादायक और महत्वपूर्ण विवरण के सम्पादन और प्रकाशन में सुप्रसिद्ध हिन्दी पत्रकार और यशस्वी लेखक भाई श्री सत्यदेव जी विद्यालंकार ने अपना अमूल्य सहयोग देकर आचार्य श्री के प्रति अपनी श्रद्धा भक्ति और अणुव्रत आन्दोलन के प्रति अपनी अनुरक्ति का एक और सहज व स्वाभाविक परिचय दिया है। उनका सहयोग आन्दोलन के साथ उसके प्रारम्भ से ही रहा है। हिन्दी के दार्शनिक कवि आदरणीय श्री बालकृष्ण शर्मा ने उपोद्घात लिखने की कृपा की है। मैं दोनों विद्वानों के प्रति सविनय आभार प्रदर्शित करता हूं।

प्रस्तुत पुस्तक के सुसम्पादित प्रकाशन में चूरू के सहृदय साहित्य प्रेमी श्री लिछमनमल जी हंसराजजी अभयसिंहजी सुराणा ने स्वर्गीय पूज्य श्री तिलोकचन्दजी सुराणा की पुण्य स्मृति में नैतिक सहयोग के साथ आर्थिक सहयोग देकर अपनी सांस्कृतिक एवं साहित्यिक सुरुचि का परिचय दिया है यह सबके लिए अनुकरणीय है। मैं आदर्श साहित्य संघ की ओर से सादर आभार प्रकट करता हूं।

—जयचन्दलाल दफ्तरी

व्यवस्थापक आदर्श साहित्य संघ

कहाँ — क्या

तीसरा प्रकरण

पहला प्रकरण

श्रमण संस्कृति का मूल-अहिंसा

अणुव्रत आन्दोलन के प्रवर्तक जैन श्वेताम्बर तेरापन्थ के आचार्य श्री तुलसीगणी अपने २१ शिष्यों तथा अनेक श्रावक श्राविकाओं के साथ २६ नवम्बर सन १९५६ को नई दिल्ली के यंग मैन्स क्रिश्चियन एसोसिएशन हाल में पधारे जहाँ कि बौद्धगोष्ठी का विशेष आयोजन किया गया था। आचार्य श्री के सरदार शहर से दो सौ मील का पैदल प्रवास करने के बाद नई दिल्ली पधारने पर यह पहला आयोजन था जिसमें वे यात्रा से सीधे सम्मिलित हुए। स्वागत समारोह एवं अभिनन्दन का आयोजन नहीं किया गया था क्योंकि आचार्य श्री कामकाज के सम्मान उसको कुछ भी महत्व नहीं देते। लम्बी यात्रा के बाद विश्राम करने का प्रश्न भी काम में लग्न में बाधक नहीं हो सकता था। फिर भी उपस्थित श्रावक श्राविकाओं ने अभिवादनपरक नारों से आचार्य श्री का स्वागत किया और वे सारे घोष हो अत्यन्त शान्त एवं गम्भीर वातावरण में विलीन हो गये। आयोजन के उपयुक्त वातावरण पहिले से ही बना हुआ था। आचार्य श्री का पदार्पण जमना में गंगा के संगम की तरह हुआ जिसमें इतनी बड़ी संख्या में जैन साधु और बौद्ध भिक्षु सम्भवतः पहिली ही बार सम्मिलित हुए। काषाय (पीताम्बर) वस्त्रधारी बौद्ध भिक्षुओं के साथ दुग्धवस्त्रधारी जैन मुनियों का समागम अत्यन्त भव्य दिव्य सात्विक एवं मनोमुग्धकारी दृश्य उपस्थित कर रहा था।

आचार्य श्री के द्वार पर पहुंचते ही जर्मन विद्वान प्रो० हर्मन जेकोबी के दो शिष्य प्रो० ह्लासनोव और प्रो० हॉफमन स्वागत के लिये आगे आये। वे बहुत देर से बड़ी उत्सुकता से उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

भवन म सामन काषाय वस्त्रधारी ससार क विभिन्न भागो से समागत अनक बौद्ध भिक्षु बठ थे। पीछ राजधानी के सम्माननीय लोगा विदेशी राजदूतों यूनस्को काग्रेस मे समागत प्रतिनिधियों, पत्र कारां तथा श्रावक श्राविकाओं से हाल खचाखच भर गया। नम्मोक्कार मत्र का उच्चारण होते ही समस्त लोग खड हो गये।

सुमधुर ध्वनि मे अति श्रद्धालीन उपस्थित मे नमस्कार मत्र का उच्चारण हुआ। अति शात वातावरण मे प्रो० एम० कृष्ण मूर्ति द्वारा आयोजन का उद्दश्य बताये जान क बाद आचार्य श्री न अपना प्रवचन प्रारम्भ करते हुए कहा —

बौद्ध सेमिनार के सदस्यो ! भाइयो और बहिनो ! आज मैं अभी अभी जो राजस्थान से दो सौ मील पदल चलकर आया हू, इसका उद्द्श्य यही है कि राजधानी म दूर दूर के देशों से आये हुये विद्वानो से विचार विनिमय कर सकू। आज यहां जो बौद्ध गोष्ठी का आयोजन किया गया है इसका लक्ष्य भी आपस मे विचारो का आदान प्रदान करना ही है अत उचित है कि मैं आपको अपन जन मुनियों और जन धम का परिचय द।

जन मनिया का यह नियम होता है कि वे जीवन भर पदल यात्रा करते हैं। किसी भी अवस्था मे अपना बोझ आप ही उठाते हैं। वे मधकरी वति से घर घर भिक्षा मांगते हैं। वे उद्दिष्ट यानी अपने लिये बनाया हुआ भोजन नहीं लते। जन साधुओं के लिय मांस खाना सवथा व य है। भगवान महावीर ने इसका दृढतापूवक विरोध किया है क्योंकि इससे बस्तियाँ बिगडती हैं। जन साधु पाँच महाव्रतो का पालन करते हुये जीवन यापन करते हैं जसा कि भगवान महावीर न कहा है —

अहिंस सच्च च अतेणम च,
तत्तो य बम्भ य परि गाह च।
पडिवज्जिया पच महव्व याइ
चरेज्ज धम्म जिणदेसिय विउ॥

यह पद्य उत्तराध्ययन सूत्र का है जिसका उपदेश भगवान महावीर ने अपने निर्वाण के अन्तिम समय दिया था।

आज से ढाई हजार वर्ष पूर्व भारत में एक संस्कृति का विकास हुआ था जिसका नाम था 'श्रमण संस्कृति'। जैन और बौद्ध उसी एक संस्कृति की दो धारायें हैं। यद्यपि आजीवक आदि और भी धाराएं श्रमण संस्कृति की थीं पर आज जैन और बौद्ध ये दो ही धाराएं बच पाई हैं। श्रमण संस्कृति का मतलब है अपने अहिंसक श्रम द्वारा जीवन यापन करना। इस दृष्टि से इन दोनों धाराओं में बड़ा साम्य मालूम होता है। जिस प्रकार अहिंसा का नाम लेते ही उसके साथ जैन और बौद्ध दोनों का नाम याद हो आता है उसी प्रकार भगवान महावीर और बुद्ध का नाम अपने आप आ जाता है। धम्मपद में भगवान बुद्ध ने कहा है —

'अहिंसा सच्चं पाणानं अरि योति पवुच्चति।

इसी तरह भगवान महावीर ने कहा है—

अहिंसा सच्च भूएसु संजमो।

यह ठीक है कि भगवान महावीर ने अहिंसा का सूक्ष्म विवेचन करते हुए कहा है— स्थूल दृष्टि से अहिंसा का मतलब प्राणी रक्षा में लिया जाता है पर सूक्ष्म दृष्टि से अपनी आत्मा को अशुभ से बचाना ही अहिंसा है। जो लोग जीवन रक्षा के लिये हिंसा करते हैं वे तथ्य को नहीं जानते। जैसे अन्न बचाने की दृष्टि से किया जाने वाला उपवास यथार्थ दृष्टि से उच्च नहीं है उसी प्रकार प्राणी रक्षा के लिये की जाने वाली अहिंसा भी उच्च नहीं है। उपवास करने पर अन्न तो अपने आप बच ही जाता है उसी प्रकार जीवन रक्षा तो अहिंसा का प्रासंगिक फल है। अतएव भगवान महावीर ने संयम और अहिंसा को एक ही कहा है।

अतिवाद के विषय में दोनों ही धाराओं में बड़ा साम्य है। जैसे महात्मा बुद्ध ने कहा है —

न जच्चा वसलो होति न जच्चा होति ब्राह्मणो ।
कम्मुना वसलो होइ कम्मुना होति ब्राह्मणो ॥

उसी प्रकार भगवान महावीर ने कहा है—

'कम्मणा बह्मणो होइ कम्मणा होई खत्तिओ ।
वइसो कम्मुणा होई सुद्दो हवइ कम्मुणा ॥

इसी प्रकार पुनर्जन्म कर्मवाद आदि में भी दोनों में बड़ी समानता है। इसके सिवाय इन दोनों में भेद भी है। जैन धर्म जहाँ कठिन चर्या को स्थान देता है वहाँ बौद्ध धर्म मध्यम प्रतिपदा को मानता है। भगवान महावीर ने केवल कठिन चर्या पर ही जोर नहीं दिया है, ध्यान का भी बड़ा महत्व दिया है। उन्होंने कहा है—दो दिन में होने वाली शारीरिक तपस्या से जितने कर्म कटते हैं उतने चार मिनट के ध्यान से कट जाते हैं। अतः उन्होंने ध्यान पर बड़ा जोर दिया है। मेरी दृष्टि में जैन धर्म आचार और विचार दोनों ही दृष्टियों से मध्यम प्रतिपदा है।

विचार की दृष्टि से जैन धर्म अनेकान्त में विश्वास करता है और आचार की दृष्टि से अणुव्रत का मार्ग भी बताता है क्योंकि महाव्रतों को सब पाल नहीं सकते। यद्यपि विवेचन तो अन्तर दृष्टि से होना चाहिये पर आज हमें समन्वय की बात अधिक देखनी चाहिये। इस प्रकार यदि हम समन्वय की तरफ ध्यान रखेंगे तो हमारे पास अहिंसा एक ऐसा तत्त्व है जिससे हम संसार का बहुत भला कर सकते हैं।'

प्रो० एम० कृष्णमूर्ति साथ साथ आचार्य श्री के भाषण का अंग्रेजी में अनुवाद करते जाते थे।

प्रवचन के बाद प्रो० ग्लासनीप ने अपने विचार प्रकट किये। उन्होंने बताया कि किस प्रकार उनकी जैन दर्शन में रुचि पैदा हुई। अपने द्वारा जैन दर्शन पर लिखी गई पुस्तक की भी उन्होंने चर्चा की। आज आचार्य श्री के गुरु कालगणी और अपने गुरु डा० हर्मन जकोबी जिनको याद कर वे अत्यन्त आनन्दविभोर हो रहे थे कि उन दोनों के दोनों शिष्य आज फिर मिल रहे हैं।

जैन धर्म और बौद्ध धर्म

इसके बाद जापान के बौद्ध भिक्षु फ्यूजी ने जापानी भाषा में अपनी प्रसन्नता प्रकट की, जिसका हिन्दी अनुवाद उनके ही साथी एक भिक्षु कर रहे थे। अपने भाषण के अंत में उन्होंने एक प्रश्न आचार्य श्री के सामने रखा — जब बौद्ध और जैन धर्म बहुत कुछ समान हैं तो फिर बौद्ध धर्म की तरह जैन धर्म भी व्यापक पैमाने पर तथा भारत से बाहर क्यों नहीं फैला ?

आचार्य श्री ने उत्तर देते हुए कहा—पहले बौद्ध धर्म और जैन धर्म भारत में बहुत फैले थे यह बात इतिहास सिद्ध है। पर समय के प्रभाव से बौद्ध धर्म विदेशों में बहुत फैल गया। इसका कारण है कि बौद्ध भिक्षु स्वयं विदेशों में गये और अपने धर्म का प्रचार किया। जैन मुनि ऐसा नहीं कर सके। जिस धर्म के साधु स्वयं उसका प्रचार नहीं करते वह धर्म फैल नहीं सकता। यही कारण है कि जैन धर्म का प्रभाव क्षेत्र भारत वर्ष में ही रहा। अत्यधिक विरोधों के बावजूद भी वह भारत में टिका रहा—यह उसकी विशेषता है।

जैन धर्म विदेशों में नहीं फैल सका इसका दूसरा कारण है—बौद्ध धर्म ने मध्यम मार्ग अंगीकार किया और वह जन साधारण के अनुकूल था और लोगों ने उसे स्वीकार कर लिया।

जैन धर्म में भी मध्यम मार्ग का प्रतिपादन है फिर भी तात्कालिक साधुओं द्वारा स्थापित मर्यादाओं के कारण वह इतना कठोर बन गया कि हर एक आत्मा के लिये उसका पालन करना कठिन हो गया और बहुत कम लोग जैन धर्म को अपना सके। फिर भी मुझे खुशी है कि श्रमण संस्कृति के ही एक अंग बौद्ध धर्म का विदेशों में प्रचार हुआ। दोनों ने जातिवाद और ईश्वर कर्तृत्व के विरुद्ध अपनी आवाज उठाई। दोनों ही कर्मवाद और पुरुषार्थवाद को प्रश्रय देते हैं। यह उनमें बड़ी समानता है और यही मेरी खुशी का कारण है।

इस अवसर पर मैं एक प्रश्न बौद्ध भिक्षुओं से भी कर लेता हूं कि भारत में प्रवर्तित होकर भी बौद्ध धर्म भारत में अपना अस्तित्व क्यों नहीं रख सका ?

इसका उत्तर भारत के एक बौद्ध भिक्षु महेन्द्र ने दिया। उन्होंने कहा— मुझसे यह प्रश्न बहुधा पूछा जाता है और इसका उत्तर मैं यह दिया करता हूं कि बौद्ध धर्म का अनुयायी हम उसे मानते हैं जिसके हृदय में भगवान बुद्ध के प्रति श्रद्धा हो और यह भी सही है कि कोई भी भारतीय ऐसा न होगा, जिसके हृदय में भगवान बुद्ध के प्रति श्रद्धा न हो। अत हमारी दृष्टि से प्रत्येक भारतीय बौद्ध है। आचरण की बात तो यह है कि लोग जितना सदाचरण करते हैं वह बौद्ध धर्म की शिक्षा के विपरीत तो है नहीं अत हम उसी को बौद्ध धर्म का आचरण व अस्तित्व मान लेते हैं।

आचार्य श्री ने कहा—हां, मुझे भी लोग बहुधा पूछते हैं कि जैन धर्म के अनुयायी इतने थोड़े क्यों हैं ? मैं उन्हें यह उत्तर दिया करता हूं कि जो व्यक्ति सदाचारी और अहिंसा में विश्वास रखने वाले हैं वे सारे जैन हैं तो आप जैनों की सख्या थोड़ी क्यों मान लेते हैं वे बहुत हैं।'

मुनि श्री नगराज जी ने आचार्य श्री के दिल्ली आगमन पर हर्ष प्रकट करते हुए कहा— भगीरथ ने इतनी बड़ी तपस्या की तो वह गंगा को धरती पर लाने में समर्थ हुआ किन्तु हमारे लिये कितनी सौभाग्य की बात है कि बिना परिश्रम किये ही तपस्या की यह गंगा स्वयं चलकर हमारे घर आ गई। आज मैं आचार्य श्री का जितना भी आभार मानूं उतना थोड़ा है। हम आचार्य श्री का स्वागत क्यों करें ? उनकी स्वयं की दृष्टि यह रहती है कि वे स्वागत नहीं काम चाहते हैं। इसलिये हमने आज स्वागत समारोह नहीं रखा। हमें आचार्य श्री ने यहां की रखवाली के लिये भेजा था। आज आचार्य श्री स्वयं ही पधार गये हैं व देख लें कि हमने अपना कर्तव्य कैसे कितना निभाया है।

अणुअस्त्र बनाम अणुव्रत

१ दिसंबर १९५६ को प्रेस सम्मेलन का आयोजन किया गया था। मुनि श्री नगराज जी ने अणुव्रत आंदोलन तथा उसके प्रवर्तक आचार्य श्री का परिचय दिया। फिर आचार्य प्रवर ने अणुव्रत आंदोलन की नैतिक क्रांतिमूलक भावना का विश्लेषण करते हुए उसकी आज तक की गतिविधि एवं बहुमुखी कार्यक्रमों से प्रेस प्रतिनिधियों को अवगत कराते हुए कहा—

आज का जन-जीवन समस्याओं से आक्रांत है। अमीरी और गरीबी की समस्या है। शोषक और शोषितों की समस्या है तिस पर भी विश्व क्षितिज पर आज अणु-अस्त्रों की विभीषिका मंडरा रही है। विभिन्न राष्ट्रों के पारस्परिक तनाव बढ़ते जा रहे हैं। यह महा समस्या है। अणु अस्त्रों के निर्माण और उनके प्रयोगों ने समग्र विश्व को एकाएक मौत के मुंह पर खड़ा कर दिया है। यह सब क्या ? यह इसलिये कि आज का विश्व भौतिक विकास के शिखर पर चढ़ा है। आज उसके जीवन का भौतिक पक्ष परम पुष्ट है। परन्तु आध्यात्मिक और नैतिक विकास के अभाव में उसकी स्थिति पक्षाघात के बीमार सी होती जा रही है। मानवता मरती जा रही है और दानवता पुष्ट होती जा रही है। जीवन के वरदान भी अभिशाप सिद्ध हो रहे हैं। भारतीय चिंतकों ने अध्यात्म और नैतिक सामर्थ्य को बढ़ावा दिया है परिणाम स्वरूप विश्व को इसकी सम्पन्नता मिली। पाश्चात्य विशेषतः वैज्ञानिकों ने भूतवाद को बढ़ावा दिया। उसके परिणाम हैं—अणुबम और उदजनबम। आज की सारी समस्याओं और विभीषिकाओं का समाधान मानव के नैतिक उदय में अंतर्निहित है। अणुव्रत आंदोलन नैतिक जागृति का एक क्रांतिकारी कदम है। वह विश्व में सुषुप्त नैतिकता को पुनर्जीवित करना

चाहता है। यदि ऐसा हुआ तो उद्योगपति मजदूरों का शोषण नहीं करेंगे भूमिपति किसानों पर ग़रहम नहीं होंगे एवं राष्ट्र दूसरे राष्ट्र पर बम बरसाने की बात नहीं सोचेगा और उस नैतिक उदय के नवप्रभात में आत्मवत्सर्वभूतेषु—प्राणीमात्र को अपने जैसा समझो 'वित्तण ताणं न लभे पमत्ते—धन संग्रह से मनुष्य को त्राण नहीं मिल सकता — ये भावनाएं घट घट में घर कर जायेंगी।

अणुव्रत आंदोलन को प्रारंभ हुये लगभग ७ वर्ष हो गये। प्रारंभ में वह लोगों को स्फुलिंग मात्र लगता था किन्तु अब उसके ज्योतिपुंज होने में विश्वास जमने लगा है। आन्दोलन का प्रथम वार्षिक अधिवेशन सात वर्ष पूर्व देहली में हुआ था। ६२१ व्यक्तियों ने चोर बाजारी न करना रिश्वत न लेना मिलावट न करना झूठा तोल माप न करना आदि समग्र प्रतिज्ञायें ली थीं। पत्रकार जगत ने कलियुग में सतयुग का अवतरण कहकर उस संवाद को अपने मुख पृष्ठ पर स्थान दिया था पर साथ साथ यह भी व्यक्त किया गया था कि किसी सतयुग का मूल्यांकन तभी होगा जब वह अपना स्थायित्व बना लेगा। आज मुझे आप पत्रकारों के बीच यह बताते हुये प्रसन्नता होती है कि अणुव्रत आंदोलन तब से आज तक विकासोन्मुख है। आज समग्र भारतवर्ष में मेरे सहित लगभग ६५० शिष्य साधुजन सैकड़ों कार्यकर्त्ता व अनेकों संस्थायें नैतिक जागरण की पुनीत भावनाओं को आगे बढ़ाने में दत्तचित्त हैं। आये दिन नये नये उन्मेष इस दिशा में होते जा रहे हैं। समग्र नियम लेने वाले अणुव्रतियों की संख्या लगभग ४००० है और प्रारंभिक नियम लेने वाले सदस्यों की संख्या १ लाख से भी अधिक है विगत दो वर्ष में मैंने विद्यार्थी वर्ग के चरित्र निर्माण की ओर विशेष ध्यान दिया। लगभग २ लाख विद्यार्थियों ने साक्षात् संपर्क में आकर नैतिक प्रेरणा प्राप्त की है। सहस्रों छात्रों ने निर्धारित प्रतिज्ञायें भी ली हैं। इसी प्रकार हमारा यह वर्गीय कार्यक्रम मजदूरों, व्यापारियों, कर्मचारियों, कवियों, पुलिस आदि विभिन्न वर्गों में सफलता से चल रहा

देश विदेश के विद्वान विचारक, यूनेस्को कान्फ्रेंस मे प्राय प्रतिनिधि पत्रकार, आदोलन में निष्ठा रखनेवाले नागरिकों का विशाल जन-समूह उपस्थित था। वातावरण बडा गभीर और आकर्षक था।

सर्वप्रथम आल इंडिया रेडियो दिल्ली की म्यूजिक डायरेक्टर श्रीमती मटाटकर ने मगलगान किया।

आज की समस्यायें

स्वागताध्यक्ष प्रो० एम० कृष्णमूर्ति के प्राजस्वी स्वागत भाषण के बाद अतरराष्ट्रीय ख्याति नामा विद्वान यूनेस्को के डाइरेक्टर जनरल डा० लूथर इवेन्स ने गोष्ठी का उद्घाटन किया।

उन्होंने अपने भाषण मे कहा—

ससार आज समस्याओ मे उलझा है। अनेक प्रकार की समस्यायें उसके सामने हैं। पर आश्चर्य है कि उन्हें जानते हुए भी हम उन्हें सुलझा नहीं पा रहे हैं। सरकारें भी चाहती हैं कि उनके पारस्परिक सबध कटु न हो, कोई भी आक्रमण न करे, पर वे उन्हें सफल करने का कोई हल प्रस्तुत नहीं कर सकी हैं। मनुष्य एक प्रयत्नशील प्राणी है। वह हमेशा से प्रयत्न करता रहा है। हम लोग यूनेस्को के द्वारा शाति के अनुकूल वातावरण बनाने की चेष्टा कर रहे हैं। इधर अणुव्रत आदोलन भी प्रशसनीय काम कर रहा है यह बडी खुशी की बात है। मैं इसकी सफलता चाहता हू कि आपका यह सत्कार्य ससार मे फल और शाति का मार्ग दर्शन करे।

सुख और शांति का मूल

आचार्य श्री ने अपने आत्मस्पर्शी प्रवचन म कहा—

मनुष्य का जीवन सरस भी है नीरस भी है, सुख भी है दुख भी है सब कुछ भी है कुछ भी नहीं है।

जीवन क्या है।

नीरस को सरस, दुःख को सुख, कुछ भी नहीं को सब कुछ बनाने वाला कलाकार है ।

मनुष्य कलाकार है ।

कला गूढ़ की अभिव्यक्ति है ।

गूढ़ को अभिव्यक्त करने वाला कलाकार है, वह गूढ़ से भी गूढ़ है ।

अतिगूढ़ को समझने के लिये पूर्व तैयारी अधिक चाहिये । अति स्पष्ट से अभिलषित विकास नहीं होता । इन दोनों से परे का मार्ग 'व्रत' है । वह जीवन की कला है । असंयम के घोर अंधकार में संयम की मर्यादायें भी पथ निश्चित बना देती हैं ।

घोर हिंसा और सूक्ष्म अहिंसा के बीच का जो मार्ग है वही व्रतों के लिये शक्य है ।

अपरिमित संग्रह और अपरिग्रह के बीच का जो मार्ग है वही व्रतों के लिये है ।

युद्ध और संघर्षमय दुनिया में जीने वाले अहिंसा और अपरिग्रह की लौ न जला सकें—ऐसी बात नहीं है । अहिंसक होना अंतिम दर्जे की वीरता है । हिंसक बने रहना चरम दर्जे की कमजोरी है । भय से भय बढ़ता है, घृणा से घृणा । क्रूरता का प्रतिफल क्रूरता और विरोध का प्रतिफल विरोध है । हिंसा के प्रति हिंसा का सिद्धांत फलित हो रहा है ।

भयाकुल मनुष्य उन्मुक्त आकाश में सो नहीं सकता । किवाड़ों से बंद मकानों में और बड़े बड़े शस्त्र धारियों के पहरे में सोता हुआ भी सुख से नींद नहीं ले सकता । शांति का प्रवाह अभय के सान्निध्य में चलता है ।

मन और आत्मा को बिसार कर शरीर की परिचर्या करने वाले लोग सुख के सामने शांति को आँखों से ओझल किये देते हैं । सुख शारीरिक स्रोतों से उत्पन्न होने वाली अनुभूति है । शांति का प्रतिष्ठान मन और आत्मा है । साधारण लोग शांति के लिये सुख को नहीं ठुकरा सकते, किन्तु अशांति पैदा करने वाले सुख से बच तो सकते हैं ।

अशांति दुःख का कारण है फिर भी सुख के लिए अशांति को मोल लेने में मनुष्य नहीं सकुचाता। अंत में परिणाम दुःख ही होता है।

शांति के बिना सुख के साधन भी सुख पैदा नहीं करते। शांति का मूल्य सुख से बहुत अधिक है। यही सही समझ है। इसमें बाहरी विकास की उपेक्षा भी नहीं है। आंतरिक विकास के अभाव में पनपने वाली बाहरी विकास की भयंकरता या निरंकुशता भी नहीं है। सुख के साधन पदार्थ, उनका संग्रह और उनका भोग हैं। शांति का साधन संयम या त्याग है।

संग्रह और अशांति का उद्गम बिन्दु एक है। सामान्य स्थिति में वह अभिव्यक्त नहीं होता। संग्रह के बिन्दु इधर रेखा बनाते चलते हैं तो उधर अशांति भी समानांतर रेखा के रूप में बढ़ती जाती है। संग्रह की भूख सब को है अशांति को कोई नहीं चाहता।

मन को दावानल में डाले और वह जले भी नहीं यह कैसे होगा?

कार्यकारण का सही विवेक किए बिना भटकना नहीं मिटेगा। दो सौ वर्ष पहले की बात है—आचार्य भिक्षु ने कहा—परिग्रह से धर्म नहीं होता। तब यह बहुत अटपटा लगा।

युद्ध परिग्रह के लिये होते हैं अणुबम भी उसी के लिये बनते हैं।

अधिकारी को उग्र जन में क्रूरता बरतनी पड़ती है। उनकी सुरक्षा के लिये और भी अधिक। अधिकार दान या धन दान क्रूरता का आवरण है।

शोषण का पोषण करने वाले दानियों की अपेक्षा अदानी बहुत श्रेष्ठ हैं। शोषण न करने वाला स्वयं धन्य है चाहे वह एक कौड़ी भी न दे।

शोषण का द्वार खुला रखकर दान करने वाला हजारों को लूट कुछेक को देने वाला कभी धन्य नहीं हो सकता।

अशांति की जड़ परिग्रह विस्तार या अधिकार विस्तार की भावना है। दुःख की जड़ अशांति है। इसीलिये तो सुख संवर्धन के हजारों वैज्ञानिक उपकरणों के सुलभ होने पर भी सुख दुर्लभ होता जा रहा है। अभय और शांति किनारा कसती जा रही है। मैं अधिक गहराई में

नहीं जाएगा। थोड़ा गहराई में गए बिना गति भी नहीं है। पैर को पकड़े बिना बाहरी उपचार से शुद्ध बनने का नहीं है।

युग के बाहरी उपादानों को बदलने की दिशा में अणु-युग का प्रवर्तन हुआ है। इसमें भयंकरता के दर्शन होने लगे हैं। अणु बुरा नहीं है पर भयंकर भी नहीं है। भयंकरता मनुष्य में है। भय से भय आता है अभय से अभय। अपने मन से भय को निकाल दीजिये अणु की भयंकरता नष्ट हो जायगी। मन में भय बढ़ता रहा तो अणु और अधिक भयंकर बन जायेगा। अणु अस्त्र वाले अणु अस्त्र वालों से नहीं घबराते। जिनके पास अणु अस्त्र नहीं है—वे अणु अस्त्र वालों से डरते हैं। यह अणु और द्रव्य की टक्कर है। सहनशीलता के अभाव में विनम्रता नहीं हो सकती। इसीलिये भय बढ़ रहा है। अणु का टक्कर अणु न होने तक भय रहेगा ही नहीं।

स्थूल शस्त्रों से अणु-अस्त्रों का प्रतिकार नहीं हो सकता। अणु अस्त्र अणु अस्त्रों के प्रतिकार में लगेंगे तो दोनों मिट जायेंगे। प्रतिकार के दोनों मार्ग गलत हैं।

अणुव्रत संग्रह की प्रवृत्ति को मर्यादा में बाँधता है। अधिकार और इच्छायें सिमट कर अपने क्षेत्र में आ जाती हैं अभय का मार्ग प्रशस्त हो जाता है। अणुअस्त्रों को हतवीर्य करने का यही सरल मार्ग है।

'अणुव्रतों के द्वारा अणुअस्त्रों की भयंकरता का विनाश हो, अभय के द्वारा भय का विनाश हो और त्याग के द्वारा संग्रह का ह्रास हो, ये तीनों उच्चतम सभ्यता संस्कृति और कला के प्रतीक बनें और इस कार्य में सबका सहयोग जुड़े तो जीवन की दिशा बदल सकता है।

अपनी शान्ति के लिये अणुव्रत अपनाइये दूसरों की शान्ति के लिये अभय बनिये, अपनी शान्ति के लिये संग्रह को कम करिये। आपके अणुव्रतों की आभा दूसरों को भी आलोक देगी। आपका अभय भाव शत्रु को भी मित्र बनायेगा।

आप द्वारा किया गया संग्रह का अल्पीकरण

अपनी मौत आप मरने की स्थिति पैदा करेगा। विश्व के विशिष्ट चिंतकों लेखकों कलाकारों से जो अपने अपने राष्ट्र की सजीव भावनाओं के प्रतीक बन कर यहाँ आये हैं मैं हृदय की गहरी संवेदना के साथ कहना चाहूँगा कि वे जीवन में 'व्रतों के प्रयोग' की दिशा को व्यापक बनाने में लगें। हमारे संयम से हमारा हित होगा दूसरों को प्रेरणा मिलेगी, थोड़ा बहुत दृष्टिकोण बदला तो व्यापक हित होगा। अहिंसा शांति और मैत्री के लिये यत्नशील व्यक्ति और संगठनों के सारे निश्चय प्रयत्न शृंखलित हों—यह मैं चाहता हूँ। राजनीतिक दलबन्दी से दूर रहकर विशुद्ध मानवता व भाईचारे की दृष्टि से कुछ अन्तर्राष्ट्रीय दिवस मनाये जायें। जैसे—

(१) अहिंसा दिवस—निःशस्त्रीकरण का प्रयोग किया जाय।

(२) मैत्री दिवस—अपनी भूलों के लिये क्षमा मांगी जाय और दूसरों को उनकी भूलों के लिये क्षमा दी जाय।

ये समारोह प्रेरणा के स्रोत बन सकते हैं और बिखरे प्रयत्नों को सामूहिक रूप दे सकते हैं। मैं अपनी भावना के प्रति सहयोगियों की सद्भावना के लिये कृतज्ञ हूँ। अहिंसा के प्रयत्नों की सफलता चाहता हूँ।

रचनात्मक उपक्रम

मुनि श्री नगराज जी ने अणुव्रत आंदोलन के बारे में अपने विचार प्रस्तुत करते हुये बताया—

अणुव्रत आंदोलन ने राष्ट्र में नैतिक विचार-जागृति का वातावरण लाने में उपयुक्त भूमिका तैयार की है। व्यक्ति व्यक्ति के जीवन शोधन और नैतिक विकास के माध्यम से इसने जन-जीवन को सही विकास की ओर आगे बढ़ने की एक दिशा दी है। यह जीवन-शुद्धि का सार्वजनीन रूपरेखा को लेकर चलने वाला एक रचनात्मक उपक्रम है, जो मानवता के नव निर्माण के सदंश के रूप में आगे बढ़ रहा है। वह निर्माण पर आधारित है।

आत्मबल का स्रोत अणुव्रत

इंडियन नेशनल चर्च बंबई के सर्वोच्च अधिकारी फादर डा० ज० एस० विलियम्स ने जो स्वयं अणुव्रती हैं, जोशीली भाषा में अपने उदगार प्रगट करते हुये कहा कि अणुव्रत आन्दोलन ने उनमें कितना आत्मबल और साहस फूंका है। यूरोप जैसे पश्चिम के ठण्ड मुल्कों की अपनी यात्रा में भी उन्होंने मादक पदार्थों को नहीं छुआ। इंगलण्ड, फ्रांस स्वीडन रूस आदि देशों की अपनी यात्रा के बीच वहाँ के लोगों को किस प्रकार उन्होंने अणुव्रत आन्दोलन के आदर्शों से अवगत कराया, इसका भी उन्होंने अपने भाषण में उल्लेख किया।

अन्त में अणुव्रत-समिति की ओर से श्री मोहनलाल कठोतिया ने समागत सज्जनों को धन्यवाद दिया। इस प्रकार अणुव्रत गोष्ठी की पहली बैठक का कार्यक्रम अत्यन्त आनन्दोत्साह पूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ।

आयोजन (४) राष्ट्रपति भवन में समारोह

जीवन शुद्धि का महान अनुष्ठान

आज २ दिसम्बर १९५६ को सूर्यग्रहण था अतः गोचरी प्रथम प्रहर में ही होगई थी और गोष्ठी के प्रातःकालीन कार्यक्रम के बाद आचार्य श्री साधु-साध्वी एवं श्रावक श्राविकाओं के साथ राष्ट्रपति भवन पधारे।

राष्ट्रपति जी और आचार्य श्री के बीच पन्द्रह मिनट तक एकांत में बातचीत हुई। फिर आचार्य श्री और राष्ट्रपति जी साथ-साथ मुगल गार्डन में, जहाँ आज का आयोजन रखा गया था, पधार गये।

भारत की आध्यात्मिकता

पहले आचार्य श्री ने आन्दोलन का परिचय देते हुये अपने भाषण में कहा—

'मुझे प्रसन्नता है कि भारत के राष्ट्रपति अध्यात्म भावना के प्रतीक हैं। भारत एक अध्यात्म प्रधान देश है और आगे भी मैं यह चाहूंगा कि भारत की जो आध्यात्मिकता है वह प्रतिदिन बढ़ती जाये। इसमें साधुओं का सहयोग तो है ही अगर नेताओं का सहयोग भी जैसा कि आज है रहे तो निश्चय ही वह खूब बढ़ सकती है। हमारे ऋषियों ने कहा है कि राज्यसंपत—यह कोई सर्वोत्तम वस्तु नहीं है। सर्वोत्तम वस्तु है संयम। इसीलिए अणुव्रत आन्दोलन का घोष है—'संयम खलु जीवनम्' संयम ही जीवन है। वास्तव में संयम से बढ़कर और कोई धन नहीं है।

अणुव्रत आन्दोलन के लिये आज जनता की भावना बढ़ रही है, जैसा कि स्वयं राष्ट्रपति जी ने भी कहा था कि अब इसे जनता से मान्यता मिल गई है और यह उचित भी है। जब तक आन्दोलन को जनता से मान्यता नहीं मिलती तब तक वह फल नहीं सकता।

आज से ७ वर्ष पूर्व जब इसका पहला अधिवेशन दिल्ली में हुआ था तब हमें यह आशंका थी कि आन्दोलन में जाति, देश, धर्म और रंग का कोई भेद न होते हुये भी लोग इसे साम्प्रदायिक मानकर इसमें सहयोग देंगे कि नहीं? पर राष्ट्रपति जी ने कहा था कि आपकी भावना सही है अतः आप काम करते जाइये। लोगों की भावना अपने आप बदलती जायगी। हुआ भी ऐसा ही। आज लोग इस साम्प्रदायिक दृष्टि से नहीं देखते हैं। यह दिन में फल रहा है। अभी दिल्ली आने का भी हमारा लक्ष्य यही है कि यूनेस्को के अधिवेशन का अवसर उसके लिये सर्वथा उचित है। अभी यहाँ अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के लोग आये हुये हैं। उनके साथ पारस्परिक संपर्क एवं परिचय हो आज का

राष्ट्रपति भवन का प्रसंग भी इसी उद्देश्य से है। इससे राष्ट्रपति जी का अणुव्रत आन्दोलन के प्रति श्रद्धा स्वयं प्रकट हो रही है।

आन्दोलन का अभिनन्दन

राष्ट्रपति जी ने अपने भाषण में कहा —

पिछले कई वर्षों से अणुव्रत आन्दोलन के साथ मेरा परिचय रहा है। गुजरात में जब काम थोड़ा आगे बढ़ा था मैंने इसका स्वागत किया और अपने विचार बतलाये। जो काम आज तक हुआ है, वह सराहनीय है। मैं चाहूंगा इसका काम देश के सभी वर्गों में फले जिससे सब इससे लाभान्वित हो सकें। इस आन्दोलन से हम दूसरों की भलाई करते हैं, इतना ही नहीं, अपने जीवन को भी शुद्ध करते हैं अपने जीवन को बनाते हैं। संयम की जिन्दगी सबसे अच्छी जिन्दगी है। इसीलिये हम चाहते हैं कि सभी वर्गों में इसका प्रचार हो। सबको इसके लिये प्रोत्साहित किया जावे।

हमारे देश में कई तरह के लोग हैं। अणुव्रत आन्दोलन का काम पहले व्यापारियों में किया गया। उनकी बुराइयों को दूर करने का प्रयत्न किया गया। ज्यों-ज्यों काम बढ़ता गया दूसरे वर्गों को भी लिया गया। अभी अभी जैसी मेरी आचार्य जी से बात हुई, कुछ और लोगों में भी काम किया जावेगा। दो तरह के लोग होते हैं—कुछ ऐसे जो मामूली तौर से अच्छे होते हैं उन्हें और अच्छा बना देना चाहिए। कुछ ऐसे लोग हैं जो उस तरह के समाज के संपर्क से या जिनकी वैसी ही जिन्दगी रही है इससे या दूसरे कारणों से बुराइयों में पड़े हुए हैं उन्हें सुधारना, ऊँचे रास्ते पर लाना मुश्किल है पर हम चाहते हैं उनको भी अपने काम के दायरे में लें और ऐसा आचार्य श्री ने विचार किया है।

अन्त में आपने कहा— बुराई मत करो, नुकसान मत करो, जिन्दगी को अच्छा रखो'—यह हर कोई कह सकता है, परन्तु केवल

ऐसा कहने का असर नहीं पड़ता। असर केवल उनका पड़ता है, जो जसा कहते हैं वसा करते भी हैं। इसलिये हमारे आचार्यों का, धम गुरुओं का यह काम है कि वे लोगों म उदबोधन पदा करें। साधु-समाज, धमगुरुओं का समाज जिनके जीवन म कोई दोष नहीं है, वे ऐसा कर सकते हैं। हमारा देश धम परायण देश है। मामूली आदमी के बजाय धमगुरु या धर्माचाय जो कहते हैं उसे योग निष्ठा से सुनते हैं। मुझे विश्वास है, आपकी बात लोग सुनेंगे। इसलिये जब शुरू मे मुझे इस आन्दोलन के बारे मे मालूम हुआ, मैंने इसका स्वागत किया। मुझे यह जानकर और भी खुशी हुई कि आप इस क्षत्र को और बढ़ाने के सम्बन्ध मे काम कर रहे हैं। जिन वर्गों म कोई खास एब हों, उन्हें मिटायें, मैं आशा करता हू, इसम आपको सफलता मिलेगी। अच्छे कामों में सबका सहयोग मिलता है और मिलेगा। सहयोग के अभाव मे काम खराब नहीं होता। आपका काम फल फूले आगे बढ़े। मैं यह कामना करता हूँ।"

मुनि श्री नगराज जी न भी इस प्रसग पर भाषण दिया। कुमारी मामिनी तिलक्म न संस्कृत में मगलगान किया। इस प्रकार अति स्वाभाविक वातावरण मे आज का कायक्रम सपन्न हुआ।

आधार (४) अणुव्रत गोष्ठी

अणुव्रत गोष्ठी की तीसरी बैठक

नैतिक विकास की महान योजना

अणुव्रत गोष्ठी का दूसर दिन का समारोह ३ दिसबर १९५६ को आचाय प्रवर के सान्निध्य मे एप विभोर वातावरण मे प्रारभ हुआ।

बबई निवासिनी श्रीमती काता बहिन जवेरी तथा कुमारी इला

बहिन जवरी एम० ए० ने मंगलगान किया।

आज के अधिवेशन में मुनि श्री नथमल जी, हिन्दी जगत के सुप्रसिद्ध कवि एवं साहित्यकार, संसत्सदस्य श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', राष्ट्र के सुप्रसिद्ध समाजवादी विचारक आचार्य जे० बी० कृपलानी, बम्बई की भूतपूर्व मेयर श्रीमती सुलोचना मोदी, 'जीवन साहित्य' के संपादक श्री यशपाल जैन अणुव्रत समिति के अध्यक्ष श्री पारस जैन तथा श्री धनराज शास्त्री ने निर्धारित विषय "नैतिक विकास की योजना" पर अपने अपने विचार प्रकट किये।

नैतिक दीप

श्री नवीन जी ने आचार्य श्री के प्रति अपनी अगाध श्रद्धा व भक्ति प्रदर्शित करते हुये कहा— 'आचार्य प्रवर का व्यक्तित्व अगम्य है। आप एक असाधारण व्यक्ति हैं। निरंतर दस दिन के सतत विहार से आप के पैर छिल गये यह देखकर मैं गद्गद हो उठा। मन में सहज ही प्रश्न उत्पन्न हुआ कि आखिर आचार्य जी इतना परिश्रम क्यों कर रहे हैं। कुछ सोचा, समाधान मिला कि महान व्यक्ति अपने लिये नहीं जीते। जन साधारण के हित के लिये उनका जीवन होता है। प्रश्न समाहित हुआ।

जब आचार्य श्री का प्रवचन सुनकर मेरे हृदय में श्रद्धा का [illegible] बह चला। उनके प्रवचन में द्रष्टा की वाणी सुनाई दी। जो [illegible] लेता है वह ऐसा भाषण नहीं कर सकता, अनुभूति से ही [illegible] जा सकता है। साधारण व्यक्ति आँखों देखी बात कहता है। [illegible] उसकी वाणी का कोई महत्व नहीं रहता। अनुभूत वाणी में [illegible] है उसका असर भी होता है। अनुभव तपस्या का फल है। [illegible] का जीवन तपस्वी जीवन है।

जीवन प्रगति का प्रतीक है। स्थिरता से ह्रास [illegible] "चरैवेति चरैवेति" का मंत्र सामने आया। अणुव्रत [illegible]

वे जीवन में विकास लाते हैं अवरोध नहीं। व्रत छोटे हैं किन्तु उनमें प्रचण्ड शक्ति है। वे जीवन की छोटी छोटी बातों को भी छूते हैं। इनको अच्छी तरह समझ लेने से जीवन 'सत्यं शिवं सुन्दरम' बन सकता है।

अणुव्रती व्यक्ति सुधार से आगे बढ़ते हैं उनकी गति में वेग होता है। वे रुकते नहीं व्यक्ति से समष्टि की तरफ चलते ही जाते हैं। जहाँ व्यक्ति और समष्टि में सामंजस्य नहीं होता वहाँ नाशकारी स्थिति पैदा हो जाती है। आज के युग में आचार्य विनोबा भावे तथा आचार्य श्री तुलसी इसी सामंजस्य के प्रतीक हैं। ऐसे नैतिक दीप संसार के तम को हरते रहे हैं और हरते रहेंगे।'

भोग बनाम त्याग

मुनि श्री नथमल जी ने अपने भाषण में कहा—'आज हमारे सामने दो पक्ष हैं—एक आकर्षण का और दूसरा विकर्षण का। जितना आकर्षण भोग में है, वह त्याग में नहीं—यह संस्कारों का परिणाम है। हिंसा और भोग के आकर्षण को प्रभाव शून्य बनाने के लिये अमिताभ बनना प्रत्येक व्यक्ति का लक्ष्य होना चाहिये। धन का ढेर या अधिकारों की आकांक्षाएं 'अमिताभ' नहीं बना सकतीं। आत्मा 'अमिताभ' है। उसे पाना सहज नहीं। पवित्रता ही उसे प्राप्त करने का साधन है। पवित्रता लादी नहीं जा सकती वह स्वतः आती है। व्रतों से जीवन अमिताभ' बनता है।

नैतिक उत्थान

श्रीमती सुलोचना मोदी ने अपने भाषण में कहा— आज देश में नाना तरह के आंदोलनों की चर्चा है। किन्तु कोई भी आंदोलन पूर्णतः मानव के अनैतिक व्यवहारों को नहीं छूता। वे एक अंग को छूकर चलते हैं। अणुव्रत आंदोलन ही एक ऐसा आंदोलन है, जो पूर्णतः नैतिक है। यह नैतिक उत्थान की बातें कहता है। कानून हृदय को नहीं

छूता। उसकी गति व्यक्ति के ऊपर की तह तक ही होती है। व्रत हृदय में धसते हैं और विरक्त बनाते हैं।

बाल्य जीवन संस्कारों को ग्रहण करने वाला जीवन होता है। उसे हम जिस प्रकार चाहें उसी प्रकार मोड़ सकते हैं। मैं चाहती हूँ आज की यह सभा सरकार से यह अपील करे कि ऐसा प्रबंध किया जाए जिससे बच्चों को प्रारम्भ से ही अणुव्रत शिक्षा मिल सके।

अणुव्रत की महिमा

आचार्य जे० बी० कृपलानी ने अपनी विनोदपूर्ण भाषा में अनूठे ढंग से भाषण करते हुए कहा—

यह अच्छा है पर मैं इसका सदस्य नहीं। मेरा जीवन राजनीति से रचा-पचा है। धर्म में निष्ठा अवश्य है किन्तु उसमें मेरा प्रवेश नहीं है। मुझे राजनीति से संन्यास ले लेना चाहिये किन्तु मैं उसे छोड़ नहीं सकता। मैं मानता हूँ कि धर्म के बिना दुनिया चल नहीं सकती। धर्म को त्यागने से सर्वनाश हो जाता है। मैं व्यक्तिगत सुधार में विश्वास नहीं रखता। सामूहिक सुधार को सत्य मान कर चलता हूँ। व्यक्तिगत सुधार की प्रक्रिया में वह वेग और उत्साह नहीं रहता जितना सामूहिक सुधार में रहता है। इसके तात्कालिक परिणाम भी लोगों को आकृष्ट कर लेते हैं। अणुव्रत आंदोलन इस दिशा में मार्ग सूचक बने, ऐसी मेरी भावना है।

सजीव कार्यक्रम

श्री यशपाल जैन ने अपने भाषण में कहा—अणुव्रत आंदोलन हमारी निगाह को बाहर से हटा कर अपने भीतर की ओर देखने की प्रेरणा देने का सजीव कार्यक्रम है। धार्मिक जीवन में समाये गहरे दोषों के परिमार्जन की यह एक सफल योजना है।

अणुव्रत समिति के अध्यक्ष श्री पारस जन न अपने भाषण मे कहा—आज हमारा जीवन दुकानदारी का जीवन हो गया है। सर्वत्र हम स्वार्थ साधन की धुन मे लग रहे हैं। दुकानदारी के स्थान पर मेहमानदारी का, स्वार्थ के बदले निःस्वार्थ का जीवन हमारा बने, अणुव्रत आदोलन हमें यह सिखाता है।

नतिक प्रगति

श्री छगनलाल शास्त्री न अपने भाषण मे कहा—यदि जीवन मे नतिकता नहीं, सदाचरण नहीं तो कसा जीवन ! यह कवल कहन भर को जीवन है। उसमे सारवत्ता और ओज नहीं होता। आज व्यक्ति की, समाज की और राष्ट्र की कुछ एसी ही स्थिति बनती जा रही है। प्राय सवत्र इस ओर पराङ्मुखता दिखाई देती है। फलत व्यक्ति सचाई से गिर रहा है ईमान से हाथ धो रहा है, चरित्र निष्ठा से मुह मोड़ रहा है कवल भौतिक अभिसिद्धियों की प्राप्ति और स्वार्थ पूर्ति मे अधा बन कर। इसलिये उसका जीवन आज ध्वस्त विध्वस्त है उसके व्यवहार चर्या और चरित्र के बीच लम्बी दरारें और गहरी खाइयाँ पड़ गई हैं जिन्हें पाटना आज अत्यन्त आवश्यक है। जिसके लिये नतिक विकास और चारित्र्य जागति का उज्ज्वल वातावरण अपेक्षित है। यह कहते प्रसन्नता होती है कि अणुव्रत आदोलन नतिक विकास की एक सफल योजना है। यदि समाज, राष्ट्र और जनजन न इसे आत्मसात् किया तो यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि उसको एक नये परिष्कार, शुद्धि और शांति का वरदान प्राप्त होगा।

नतिक निर्माण का आदोलन

अत म आचाय प्रवर ने अपने उपसहारात्मक भाषण में कहा—अणुव्रतों के प्रति लोगों में निष्ठा बन रही है। आंदोलन के प्रति भाव उमड़ उमड़ कर आ रहे हैं—यह शुभ सूचना है। आज का जन जीवन

यह महसूस करने लगा है कि भौतिक सिद्धियाँ ही सब कुछ नहीं हैं। इससे परे भी कुछ 'आत्मलाभ' है जिसे हमें पाना है। हमें यह नहीं सोचना है कि हमारे कार्यक्रमों में कितने लोग इकट्ठे होते हैं। हमें यह भी नहीं सोचना है कि हमारे कार्यक्रमों की क्या-क्या प्रशंसायें होती हैं। परन्तु हमें सोचना यह है कि हमारे कार्यक्रमों से लोगों को क्या मिलता है। हमें यह सोचना है कि हम नैतिक उत्थान में कितने सहायक बन सकते हैं।

मुझे यह देखकर आश्चर्य होता है कि अणुव्रत आंदोलन इतना सीधा-सादा होने पर भी लोग इससे दूर रहते हैं। इसमें अपना हित जानते हुए भी वे नजदीक नहीं आते यह क्यों? अणुव्रती बनने में संकोच क्यों? लोग शायद इसे साम्प्रदायिक समझते हों किन्तु आंदोलन के ७ वर्षों के सार्वजनिक कार्यक्रमों से यह भावना भी दूर हो चुकी है। अभी कल जब राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद जी से मिलना हुआ, तब आंदोलन के प्रति अपनी भावना व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा था कि आंदोलन के प्रति शुरू से मेरी निष्ठा रही है। जब कि लोग इसे जानते भी नहीं थे, तब से मैं इसका प्रशंसक रहा हूँ। इसका लगाव किसी सम्प्रदाय विशेष से न रहने के कारण ही यह व्यापक बन रहा है, यह खुशी की बात है।

आज राष्ट्र के नेता इसे असाम्प्रदायिक समझने लगे हैं और इसे उचित प्रश्रय भी मिल रहा है। आज का जन जीवन विषाक्त है—यह मैं जानता हूँ। लोगों की दुर्बलताएँ भी मुझसे छिपी नहीं हैं। लोग कषायों से मुक्त नहीं हैं। वर्तमान स्थिति पर कवि का यह कथन पूरा उतरता है कि—

'दग्धोऽग्निना क्रोधमयेन दष्टो,
दुष्टेन लोभाख्य महोरगेण ।
ग्रस्तोऽभिमानाजगरेण माया—
जालेन बद्धोऽस्मि कथं भजे त्वाम् ॥"

'क्रोध की अग्नि से मानव का हृदय जल रहा है, लोभ की दवा लाएँ सारे विवेक का भस्मसात कर रही हैं। मानरूपी अजगर सारे जीवन को निगल रहा है और माया के पचीदे जाल म फँसा मानव छटपटा रहा है।

एसा अवस्था म व्रतों का पालन सभव नहीं होता—ऐसा लोग सोचत हैं। यह नहीं भूल जाना चाहिए कि व्रत ही जीवन के प्राण हैं उनके बिना जावन सुखमय नहीं बन सकता और जीने की कला नहीं आ सकती, तब तक जावन मिट्टी क समान बना रहता है। अणुव्रत आन्दोलन जीवन को कला सिखाता है। कषायों स मुक्त करना ही उसका प्रमुख लक्ष्य है।

व्रता से व्यक्ति श्रमनिष्ठ बनता है। श्रम से जीवन हल्का महसूस होता है। हमारा श्रम मे पूर्ण विश्वास है। अभी-अभी मैं अपने इन शिष्यों व साथियों के साथ दो सौ मील की पदल यात्रा करते हुए यहाँ आया हू। मेरे कध खाली थ किन्तु इन साधुओं के कधे भाराक्रांत थे—फिर भी वे आनन्द का अनुभव करते थे। विहार क श्रम से वे थकते नहीं थे। वे श्रम को अपनी साधना का एक प्रमुख अंग समझते हैं। इस कष्टमय साधना म उन्ह अपने लक्ष्य क दर्शन होते है। श्रम इनके जीवन का अविभाज्य अग है। श्रम ही जीवन है, यह हमारा घोष है। परन्तु श्रम सात्विक होना चाहिये, तामसिक नहीं।

आज व्रतों के प्रति लोगों में निष्ठा बढ रही है, यह ठीक है। किन्तु जब तक इनका सक्रिय प्रयोग जीवन मे नहीं होगा तब तक बुराई मिटनी नहीं। केवल व्रतों की गुणगाथा गा लेन मात्र स कुछ भी बनने का नहीं है।

यह आन्दोलन विश्व मे चल रहे अन्य आन्दोलनों से सर्वथा भिन्न है। यह नैतिक जावन क प्रति केवल निष्ठा ही पैदा नहीं करता अपितु जीवन को नैतिक बनाने की दिशा म सक्रिय कदम उठाता है। यह जीवन को भाराक्रांत नहीं बनाता भारमुक्त करता है। एक बार इसमे

प्रवेश कर लेने पर व्यक्ति उससे छूटने का विचार नहीं करता। वन व्यक्ति में बिपर जाते हैं। ज्यों ज्यों श्रद्धा बढ़ती है त्यों-त्यों जीवन व्रतमय बनता जाता है। भूदान में व्यक्ति कुछ भूमि का दान कर अपनी जिम्मेवारी से छूट सकता है किन्तु इस आंदोलन से वह छूट नहीं सकता। ज्यों-ज्यों समय व्यतीत होता है त्यों-त्यों जीवन में जिम्मेवारियाँ बढ़ती जाती हैं।

मैं मानता हूँ कि व्यक्ति एकाएक व्रती नहीं बन सकता, किन्तु गूंगा बटा बाप को बाप कहे तो शासन के अनुसार उसके प्रति अपनी भावना अच्छी रख तो अवसर पर वह भी व्रती बन सकता है। मैं सदा आशावादी रहा हूँ। आज आंदोलन के प्रति सम्भावनायें बढ़ रही हैं तो वह दिन भी दूर नहीं जब कि समस्त वर्गों में नीति की प्रतिष्ठा होगी।

व्रती बनने में सकोच नहीं होना चाहिये। जन साधारण के बीच व्रतों को ग्रहण करना लोग आडम्बर समझते हैं यह उनकी भूल है। जनसमूह के बीच किये गये संकल्पों से आत्मबल बढ़ता है जिम्मेवारी आती है—ऐसा मेरा अनुभव है।

अणुव्रत-गोष्ठी आप को नाना प्रकार के विचार दे रही है। विचारों की शक्ति आचारको उत्पन्न करती है। अणुव्रतों पर आप विचार करें। उसकी भावना को अपने मित्रों तक पहुँचायें और जीवन को तदनुकूल बनाने का प्रयास करें।

अणुव्रत गोष्ठी की अन्तिम बैठक

अहिंसा और विश्वशान्ति

८ दिसंबर १९५६ को 'अणुव्रत गोष्ठी' का अन्तिम दिन का कार्यक्रम था। देश विदेश के सम्भ्रान्त सज्जनों के अतिरिक्त विशेषतः विभिन्न देशों के बौद्ध भिक्षु उपस्थित थे। पिछले दो दिनों से उपस्थिति अधिक थी। सामने की पंक्ति में पीतवस्त्रधारी बौद्ध भिक्षु थे और उनके पीछे की पंक्तियों में राज्यकर्मचारी, विशिष्ट अधिकारी व दूर दूर से आये सज्जन बैठे थे।

प्रारम्भ में बम्बई निवासी श्री रश्मिकुमार जवेरी ने अणुव्रत प्रार्थना का गान किया। आज के लिए निर्धारित विषय था—"अहिंसा और विश्वशान्ति"—जिस पर मुनि श्री बुधमल जी, राष्ट्र के सुप्रसिद्ध विचारक—काका कालेलकर, अखिल भारतीय कांग्रेस के महामंत्री श्री श्रीमन्नारायण, दिल्ली राज्य विधान सभा की भूतपूर्व अध्यक्षा डा० सुशीला नायर, हिन्दी जगत में सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री जैनेन्द्र कुमार, प्रो० एम० कृष्ण मूर्ति, संसत्सदस्या श्रीमती सुचेता कृपलानी, श्रीमती सावित्री देवी निगम तथा दिल्ली के जन सेवी श्री गोपीनाथ अमन ने अपने विचार प्रगट किये।

काका कालेलकर ने कहा—"श्रमण और भिक्षु शान्ति सेना के सैनिक हैं। नैतिक प्रसार और प्रचार के लिये उन्होंने जीवन को जगाया है—यह उचित है। अणुव्रत आन्दोलन में नैतिक विचार क्रान्ति के साथ साथ बौद्धिक अहिंसा पर भी बल दिया गया है—यह इसकी अपनी [illegible] है।

जीवन का आंदोलन

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के महामंत्री श्री श्रीमन्नारायण ने कहा—

प्रारंभ से ही मैं इस गोष्ठी में शामिल होने की भावना रखता था, किन्तु कार्यवश आ नहीं सका। अणुव्रत आंदोलन की जबसे मुझे जानकारी हुई है तभी से मैं इसका प्रशंसक रहा हूं। इसके संबंध में मेरा आकर्षण इसलिए हुआ कि यह आंदोलन जीवन की छोटी छोटी बातों पर भी विशेष ध्यान देता है। बड़ी बातें करने वाले बहुत हैं किन्तु छोटी बातों को महत्त्व देने वाले कम होते हैं।

यह आंदोलन क्रमिक विकास को महत्त्व देता है—यह इसकी विशेषता है। एक साथ लक्ष्य पर नहीं पहुंचा जा सकता, एक एक कदम आगे बढ़ा जा सकता है। अभी कुछ दिन हुए मैं अणुव्रत आंदोलन के सप्तम अधिवेशन में भाग लेने सरदार शहर गया था। मैंने देखा हजारों लोग नैतिक व्रतों को अपनाने के लिए तैयार होते हैं और अपना जीवन शुद्ध करते हैं। उन पर व्रत थोपे नहीं जाते वे स्वयं अपनी आत्म प्रेरणा से व्रत ग्रहण करते हैं। उनमें जीवन शुद्धि की तड़प मैंने देखी।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में आज पंचशील की चर्चा है। मैं मानता हूं कि अणुव्रत आंदोलन अपने देश में पंचशील का आंदोलन है। इसका जितना ज्यादा प्रचार होगा, उतना ही देश का हित सम्भव है।

डा० सुशीला नायर ने कहा—प्रत्येक व्यक्ति धर्म की दुहाई देता है किन्तु धर्म का आचरण नहीं करता। मैं चाहती हूं—धर्म के नाम की जगह धर्म का काम हो। कानून से सर्वोदय नहीं हो सकता। व्रतों से ऐसा ही सम्भव है। कानून से धन छीना जा सकता है प्राइवेट एन्टरप्राइज के बदले स्टेट एंटरप्राइज शुरू किया जा सकता है किन्तु सौहार्द या प्रेम नहीं पाया जा सकता। अणुव्रतों से दोनों साथ साथ सहज में सध जाते हैं।

अणुव्रत आंदोलन जीवन के मूल्यों को बदलता है। हृदय और बुद्धि

का समन्वय हो आचार और विचार का समन्वय हो कथनी और करनी का समन्वय हो—यही अणुव्रत का ध्येय है। सेमिनार विचार विमर्श के लिए किए जाते हैं। इनसे विचारों में क्रान्ति आती है। विचार जब सक्रिय बनते हैं, तब जीवन प्रशस्त बनता है।

अहिंसा की चुनौती

हिन्दी जगत के सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री जैनेन्द्रकुमार ने अपने भाषण में कहा—अहिंसा का इतिहास भी हो सकता है और तत्त्ववाद भी। उसमें मुझे नहीं जाना है। इतिहास और तत्त्ववाद के माध्यम से चलने पर उसमें मतवाद आ जाता है। मैं अहिंसा को समय रूप में, जिसमें शक्ति है, चेतना है देखना चाहूंगा। आज हिंसा की अहिंसा के प्रति एक चुनौती है। जो हिंसा का नहीं मार सकती वह अहिंसा नहीं है। जो हिंसा से समझौता करे, उसे मैं अहिंसा नहीं मान सकता। सिद्धांत की कसौटी व्यवहार है, जो व्यवहार पर खरा सिद्ध नहीं होता वह सिद्धांत कैसा? मुझे यह कहते प्रसन्नता है कि महाव्रत का मार्ग जगत से एकदम निरपेक्ष नहीं है, अणुव्रत उसका उदाहरण है। व्रत जीवन में किनारे जैसे हैं। यदि नदी के किनारे न हों तो उसका पानी रेगिस्तान में सूख जाय। किनारे नदी को बाधक बनाने नहीं होने चाहिए व उसको मर्यादा में रखने वाले होने चाहिये। ऐसे हों वे किनारे जीवन चैतन्य को विकास देने वाले, और दिशा देने वाले हो सकते हैं।

प्रो० एम० कृष्णमूर्ति ने अपने भाषण में कहा—जो जीवन अहिंसा से अभिव्याप्त है, वही सच्चा जीवन है। अहिंसा की अभिव्याप्ति जीवन में आत्म चेतना जगाती है। आत्म जागृत व्यक्ति सहजरूप से विकारों से परे हो जाता है।

मन्त्रिश्री मगनमल जी ने अपने भाषण में कहा—वह विश्व के लिए परम हर्ष का दिन होगा जब वह आत्मा से यह जान जायगा कि हिंसा के द्वारा उसे कभी शांति मिलने वाली नहीं है। शांति तभी होगी जब

वह हिंसा के विरुद्ध कमर कस कर उसका मुकाबला करने के लिये सन्नद्ध होगा।

विश्वशान्ति का प्रतीक

संसत्सदस्या श्रीमती सावित्री देवी निगम ने कहा—अणुबल तथा धन या विज्ञान के बल पर आज भारत ऊंचा नहीं उठा है। उसकी महानता का कारण है संयम की साधना। आचार्य श्री तुलसी ने जो उपक्रम चालू किया है वह बुनियादी काम है इसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। भारत में अनेक धार्मिक व्यक्तियों ने बुराई को पकड़ा अवश्य है किन्तु जड़ उनके हाथ नहीं आ सकी। आचार्य श्री ने बुराई की जड़ को पकड़कर एक क्रियात्मक काम किया है। यह आंदोलन विश्व शांति का प्रतीक है ऐसा मैं मानती हूं और सबसे यह अपील करती हूं कि वे ज्यादा से ज्यादा इसमें सहयोग देकर अपने कर्तव्य का पालन करें।

जीवन शुद्धि

संसत्सदस्या श्रीमती सुचेता कृपलानी ने कहा—अणुव्रत आंदोलन जीवन शुद्धि का आंदोलन है। जब कार्य और कारण दोनों शुद्ध होते हैं तब परिणाम भी शुद्ध होता है। अणुव्रत आंदोलन के प्रवर्तक आचार्य श्री व उनके साथी साधुओं का जीवन शुद्ध है अणुव्रतों का रूप क्रम भी पवित्र है इसलिये इनके कहने का असर पड़ता है।

अणुव्रत आंदोलन के व्रत सार्वजनीन हैं। प्रत्येक वर्ग के लिये इसमें व्रत रखे गये हैं। यह इसकी अपनी विशेषता है। व्रतों की भाषा सरल व स्वाभाविक है। अहिंसा आदि व्रतों का विवेचन सामयिक व युगानुकूल है। अहिंसा की व्याख्या व व्रतों में शब्दों का संकलन मुझे बहुत ही प्रभावोत्पादक लगा। कहा गया है—जीव को मारना या पीड़ा पहुंचाना तो हिंसा है ही किन्तु मानसिक असहिष्णुता भी हिंसा है। अधिकारों का दुरुपयोग भी हिंसा है। कम पैसों से अधिक श्रम लेना भी हिंसा है,

आदि आदि। इसी प्रकार प्रत्येक व्रत जीवन को छूते हैं। अणुव्रतियों का जीवन इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। मुझ पर आन्दोलन का काफी असर है। आचार्य जी का सत प्रयास सफल हो—यह मेरी कामना है।

श्री गोपीनाथ 'अमन' ने अपने भाषण में कहा—अणुव्रत आंदोलन व्यक्ति सुधार का आंदोलन है। व्यक्ति जाति और राष्ट्र का मूल है। व्यक्ति से आगे बढ़ता बढ़ता सुधार जाति और राष्ट्र को भी अपनी परिधि में ले सकता है।

संयम सुख शान्ति का मूल

आचार्य प्रवर ने अपने उपसंहारात्मक भाषण में कहा—

'प्रकाश को प्रकाशित करने के लिये दूसरे प्रकाश की आवश्यकता नहीं होती। यदि स्वयं में प्रकाश नहीं है तो वह दूसरों को भी प्रकाशित नहीं कर सकता। यही 'व्यक्तिवादी सिद्धान्त' का आधार है। इसका फलित यह है—यदि व्यक्ति शुद्ध है तो समाज भी शुद्ध होगा, यदि व्यक्ति अपवित्र है तो समाज भी अपवित्र होगा।

मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम् यह सच है। किन्तु सभी मनुष्य करके ही कहें—यह मुश्किल है। जो करता है उसे ही कहने का अधिकार है यह एकान्तवाद ठीक नहीं। अच्छा उपदेश सबको मान्य होना चाहिये। हम वीतराग नहीं फिर भी उपदेश करते हैं। सुधर्मा स्वामी भगवान की वाणी के आधार पर चलते थे। उसी प्रकार हम वीतराग न होने पर भी वीतराग की वाणी के आधार पर बोलते हैं, यह अनुचित नहीं कहा जा सकता।

आज आडम्बर का युग है। प्रत्येक कार्य में आडम्बर दीखता है। व्रतों के पालन में भी आडम्बर दीखता है। इसी आशय को स्पष्ट करते हुये एक कवि ने कितना सुन्दर कहा है —

> वैराग्य रंग परिवञ्चनाय धर्मोपदेशो जनरञ्जनाय।
> वादाय विद्याध्ययनं च मेऽभूत् कियद् ब्रवे हास्यकरं स्वमीश॥

लोग शिक्षक बनते हैं दूसरों को ठगने के लिये धार्मिक उपदेश जन-रंजन का साधन बना हुआ है मनोरंजन और विनोद के लिये किया जाता है, इससे अधिक हास्यास्पद स्थिति और क्या हो सकती है।

जब तक जीवन-व्यवहार में दम्भ रहेगा हिंसक वृत्तियाँ रहेंगी तब तक शान्ति का समावेश जीवन में हो, यह कम संभव लगता है। शान्ति—अहिंसा और संयम पर आधारित है। शास्त्रों में कहा है—

हत्थ संजए पाय संजए वाय संजए संजइंदिए।
अज्झप्परए सुसमाहिअप्पा सुत्तत्थं च वियाणइ जे स भिक्खू॥

हाथ पैरों का संयम वाणी का संयम इंद्रियों का संयम करने वाला व्यक्ति और जो अध्यात्म में लीन रहता है वही साधु है महान है। ऐसे व्यक्ति को ही शान्ति प्राप्त होती है।

संयम और अहिंसा के कारण वैयक्तिक जीवन को तो शान्ति मिलती ही है उससे आगे बढ़ कर वे सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन में भी शान्ति का मार्ग बना देते हैं। मेरा विश्वास है कि विश्वशान्ति का इसी प्रकार प्रादुर्भाव होगा व फलित होगी।

एटम बम या हाइड्रोजन बम द्वारा शान्ति चाहने वाले भयंकर अजगर के मुंह में हाथ डालकर अमृत प्राप्त करना चाहते हैं। यदि संसार शान्ति और सुख चाहता है तो उसे अणुव्रतों के मार्ग पर आना होगा, अन्यथा वह भटकता ही रहेगा। अन्त में मैं आपसे अनुरोध करूंगा कि आप तटस्थ रहकर अणुव्रतों पर विचार करें और अपने में उनको धारण करने का प्रयास करें।

प्रस्तुत समिति के मन्त्री श्री जयचन्दलाल जी दफ्तरी ने त्रिदिवसीय कार्यक्रम का सिंहावलोकन करते हुए सबके प्रति आभार प्रदर्शन किया।

आल इण्डिया रेडियो दिल्ली के डिप्टी डायरेक्टर जनरल श्री० ए० के० सेन तथा उनकी पत्नी श्रीमती भारतीदेवी आचार्य श्री के पास आये और नम्रतापूर्वक निवेदन किया कि हम दोनों का
सूची में लिख लीजिये। आचार्य प्रवर ने सहर्ष स्वीकार किया।

आज का कार्यक्रम बहुत ही प्रभावोत्पादक रहा। अत्यन्त उल्लास व उत्साह के साथ कार्य की सम्पन्न होने पर स्थानीय व बाहर से आये हुये कमठ कार्यकर्त्ता हर्ष विभोर हो रहे थे। अपने अथक परिश्रम के सुन्दर परिणाम से वे प्रफुल्लित हो रहे थे। इस प्रकार अणुव्रत गोष्ठी का त्रिदिवसीय कार्यक्रम सानन्द सम्पन्न हुआ।

प्रतिक्रिया

गोष्ठी की चर्चा प्रत्येक क्षेत्र में फैल गई। लोगों ने यह जाना और अनुभव किया कि आचार्य श्री तुलसी आज के युग के महान व्यक्ति हैं जिन्होंने अपनी साधना के फलस्वरूप अणुव्रत आन्दोलन की देन से मानव जाति को कृतार्थ किया है। प्रत्येक वर्ग ने अणुव्रत आन्दोलन के कार्यक्रम का हृदय से स्वागत किया। दिल्ली के प्रमुख पत्रों ने गोष्ठी की भूरि भूरि प्रशंसा की और उसके समाचारों को प्रमुखता दी।

समाचार पत्रों में प्रकाशित समाचारों को पढ़ कर अनेक व्यक्ति आन्दोलन में अपना सहयोग देने के लिये तैयार हुए और आचार्य प्रवर से मिले।

रेडियो का प्रोग्राम

४ दिसंबर १९५६ की रात्रि को लगभग ८॥ बजे रेडियो प्रोग्राम था। आल इंडिया रेडियो ने लगभग १५ मिनट तक अणुव्रत गोष्ठी के त्रिदिवसीय कार्यक्रम तथा राष्ट्रपति भवन के कार्यक्रम की संक्षिप्त झांकी प्रसारित की। आँखों देखा हाल इस शीर्षक के अन्तर्गत श्री यशपाल जैन ने प्राय सभी वक्ताओं के भाषणों का सार दिया।

सप्रू भवन में प्रधान मन्त्री श्री नेहरू द्वारा उद्घाटन

१३ दिसम्बर को दुपहर को ३ बजे राष्ट्रीय चरित्र निर्माण मूलक अणुव्रत सप्ताह का उद्घाटन प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू के हाथों से सम्पन्न होने वाला था। आचार्य श्री २ ४८ बजे ही सप्रूभवन पधार गये थे और सप्रू भवन का हाल श्रोताओं से खचाखच भर चुका था। भवन के बाहर साधुओं की हस्त निर्मित वस्तुओं की एक प्रदर्शनी सी की गई था जिसमें सब वस्तुएं व्यवस्थितरूप से रख दी गई थीं। आचार्य श्री वहाँ ही ठहर गये। थोड़ा ही देर में पंडित जी भी आ पहुंचे। उन्होंने साधुओं की निर्मित सब वस्तुओं को बड़े ध्यान से देखा, सूक्ष्माक्षर पत्र को बहुत ही अधिक ध्यान से देखा और कहा कि यह बड़ा अद्भुत और आश्चर्यजनक है। इसमें एक इंच में देसी कलम से १४०० अक्षर लिखे गए थे। फिर आचार्य श्री और पंडित जी साथ साथ हाल में पधारे। सीढ़ियां आने पर पंडितजी ने आगे चलने का इशारा करते हुए कहा—आप चलिये। आचार्य श्री स्टेज पर बिछे छोटे से पाट पर बैठ गये। नेहरू जी पास में बिछी हुई गद्दी के एक कोने पर बैठ गए।

श्रीमती कान्ता बहिन जवेरी तथा कु० इला बहिन जवेरी द्वारा गाये गए मंगल-गान से कार्यक्रम शुरू हुआ। अणुव्रत समिति के मंत्री श्री जयचंदलाल दफ्तरी ने स्वागत भाषण किया। श्री मोहनलाल कठौतिया ने प्रधान मंत्री को खादी की माला पहनाई।

उदघाटन भाषण

भारत क प्रधान मत्री प० जवाहरलाल नहरू न उदघाटन भाषण करते हुए कहा—'आचाय जी ! भाइयो तथा बहनो ! अपन मामूली कत्त्य को छोड़ कर भी मैं यहाँ आया हू । यद्यपि मैं कल भारत से चला जान वाला हू फिर भी मुझ यहाँ आना उचित मालूम हुआ । मैंने यह क्यो किया ? कुछ महीने पहले मरा मुनि नगराज जी स मिलना हुआ था । दो चार दिन हुए आचाय जी से भी मिलन का अवसर मिला । उन्होंने मझ अणुव्रत आदोलन का हाल बताया । मुझ वह काम उचित लगा इसलिये मैंन यहाँ आना स्वीकार कर लिया । यद्यपि हमारा और आचाय जी का काम का रास्ता अलग अलग है पर कभी कभी अलग-अलग रास्ते भी मिल जाते हैं और वास्तव मे ही एक दूसरे की सहायता क बिना ससार का काम चल भी नहा सकता । ससार मे अनक लोग अनक प्रकार से अनक काम करें तब ही सारा काम चल सकता है । पर ससार मे इतन कुछ काम होने हुए भी कुछ बुनियादी बातें होती हैं, जो सभी देश, सभी समाज और सभी व्यक्तियों के लिए आवश्यक हैं । हम इतिहास में देखते हैं कि ससार मे अनेक बार उत्थान और पतन आये हैं । पर हजारों वर्षों की इन बातो मे हम अधिक को भूल जाते हैं । कुछ लोग अपन समय में भी हुये हैं और उनकी बात आज भी सुनी जाती है । वे लोग स्वय तो अच्छ माग पर चलते ही हैं पर दूसरों को भी अच्छा रास्ता दिखाते हैं ।

कुछ लोग स्वय को एक गज से तथा देश व समाज को दूसरे गज से मापते हैं । जब गांधी जी राजनीति मे आये तब उन्होंने कहा—व्यक्ति और समाज को एक ही गज से मापना चाहिये । यह ठीक ही थ । उन्होंन स्वय अच्छ रास्ते पर चलकर दूसरों को भी उस पर चलाने का प्रयत्न किया । उन्होंने स्वराज्य आन्दोलन मे भी इस बात को लिया और अपने विचार जनता में फलाये । इससे कुछ सुधार हुआ । उन्होंन

अहिंसात्मक आन्दोलन से देश की ताकत को बढ़ाया और हमारी विजय हुई। यह विजय बदले की भावना पैदा किए बिना हुई।

दुनिया के इतिहास में हम देखते हैं कि जो हारता है वह बदला लेना चाहता है और ताकतवर बन कर वह वापिस विजयी पर हमला कर देता है। वह हार का फिर बदला लेना चाहता है। इस प्रकार यह लड़ाई चलती रहती है और शान्ति नहीं होती। आज दुनिया की शक्ति इतनी बढ़ गई है कि वह खत्म हो सकती है। इससे दुनिया की आंखें भी खुल गई हैं। वह देखती है कि अगर कहीं भी शक्ति काम में आई तो सारा संसार श्मशान हो जायगा। वास्तव में तो हथियारों से शान्ति पैदा नहीं की जा सकती।

इसीलिए 'यूनेस्को' के विधान में कहा गया है—लड़ाई लोगों के दिमागों में पैदा होती है। गांधीजी ने भी कहा था—तलवार हमारे दिमाग़ में है उसे निकालो और काटो। इन बाहर की तलवारों से शान्ति होने वाली नहीं है।

देश क्या है? बहुत से व्यक्तियों का समूह। जैसे वहाँ के लोग होंगे वैसा ही वह देश होगा उससे दूसरा नहीं हो सकता। देश में यदि व्यक्ति ऊँचे होंगे तो देश भी ऊँचा होगा। एक व्यक्ति भी अच्छा होगा तो उसका असर दूसरे पर पड़ेगा। अतः हम ऐसा वायुमंडल पैदा करें कि देश के सारे लोग अच्छे हों देश अपने आप अच्छा हो जायेगा।

आज देश के सामने बड़े-बड़े काम हैं उनमें सफलता तभी मिल सकती है जब देश का चरित्र-बल अच्छा हो। वह कानून से नहीं बन सकता। हाँ रास्ता ज़रूर बनता है। अतः घूम फिर कर बात यहीं आ जाती है कि देश की जनता का चरित्र कैसा है? हम बहुत दिनों तक दूसरों को धोखा नहीं दे सकते। किसी को एक दिन धोखा दिया जा सकता है पर हमेशा नहीं दिया जा सकता। अतः हमें देश का चरित्र बल अवश्य ऊँचा बनाना होगा।

इतनी कठिनाइयाँ हमारे सामने हैं तो हम सोचें कि हम देश को

किस प्रकार का बनाना है। हमें भारत की बुनियाद ऐसी बनानी है, जो गहरी हो और बहे नहीं। विशेषत हमे अपने नौजवानों को बनाना है, क्योंकि हम तो अब बुड्ढे हो गये हैं। कल का भारत आज के बालक और नौजवान ही होंगे। अत हमे उन्हें एस साँचे म ढालना है, जिससे वे अच्छे हों। हम लोग ४० वर्ष तक उस ढाँचे में ढले जो गांधीजी ने देश के सामने रखा था। उससे अच्छा या बुरा जो कुछ हुआ, हो गया है पर अब प्रश्न यह है कि जो काम हमे करने हैं उन्हें थोडे आदमी नहीं कर सकते। उनमे शक्ति और धारता होनी चाहिये। अत मूल म वही बात आ जाती है कि देश का चरित्र उन्नत हो।

यह काम अणुव्रत आन्दोलन से हो रहा है। मैंने सोचा—ऐसे अच्छे काम की जितनी तरक्की हो उतना ही अच्छा है। इसलिए मैं आशा करता हू —'अणुव्रत आन्दोलन" का जो प्रचार हो रहा है उसमे पूरी तरह सफलता मिले।'

आचार्य श्री का सन्देश

प्रधान मंत्री जी भाइयो और बहिनो! आज राष्ट्रीय चरित्र निर्माण मूलक अणुव्रत सप्ताह का उद्घाटन हुआ। भारत की राजधानी में यह चरित्र निर्माण मूलक कार्यक्रम चले, यह आवश्यक भी है, क्योंकि यहां की बात का असर सारे देश पर ही नहीं सारे विश्व पर पड़ता है। अत यह अच्छा कार्यक्रम यहाँ से चला, यह अच्छा ही हुआ। आज देश और विश्व की स्थिति के बारे म आप पढ़ते और सुनते हैं ही। अब उसके बारे म मैं क्या कहूँ, उसे सुधारने के लिये अनेक प्रयत्न हो रहे हैं। भारत के प्रधान मंत्री विश्वशान्ति और विश्वमैत्री के लिये पंचशील का प्रचार कर ही रहे हैं और उन पर यह जिम्मेदारी भी है। उससे पहले कि हम अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे काम करें, हमे अपने देश की बातें सोचनी चाहिये। देश मे आज अनेक कार्य करने हैं और उनके लिये सुदृढ़ आधार की आवश्यकता है।

लोग कहते हैं—आज अणुयुग है परमाणु-युग है पर मुझे लगता है, आज का युग अकर्मण्यता, असहिष्णुता और आलोचना का युग है। हमें इस बारे में सोचना है। आज विद्यार्थी अध्यापकों की आलोचना करते हैं और अध्यापक विद्यार्थियों की। जनता सरकार की आलोचना करती है और सरकार जनता की। पर मैं यह नहीं समझा कि सारे औरों की आलोचना करते हैं मगर अपने को क्यों नहीं देखते ? कोई अपना थोड़ा सा भी अहित नहीं देख सकता। पिछले ही दिनों में प्रान्तीयता की भभक ने देश के बड़े-बड़े लोगों को कपा दिया। विद्यार्थी भी इसमें पीछे नहीं रहे। इसका क्या कारण है ? क्या अति राष्ट्रीयता ही तो अति प्रान्तीयता की जनक नहीं है ? हमें यह असहिष्णुता मिटानी होगी व्यक्ति व्यक्ति के जीवन को उन्नत बनाना होगा।

इसलिये मैं आप से कहना चाहूंगा पहले आप अपना जीवन बनायें फिर देश और उसके बाद विश्वमैत्री की बात सोचें। जब तक ऐसा नहीं होगा तब तक कुछ नहीं हो सकता।

राष्ट्रों की संकीर्ण मनोवृत्ति को भी मिटाना होगा। एक राष्ट्र के हित को यदि उससे दूसरे राष्ट्रों का अहित होता हो तो छोड़ना पड़ेगा। अपना अहित तो कौन करेगा ? पर इतना ही हो गया तो मैं समझता हूं संसार शान्ति के मार्ग पर अग्रसर हो सकेगा।

आज जो अनीति भारत में ही नहीं, सारे संसार में फैल रही है उसका उन्मूलन आवश्यक है। सब लोग ऐसा चाहते हैं। अब प्रश्न यह है कि इसका उपाय क्या है ? उपदेश इसका एक मार्ग था। हजारों वर्षों से यह चलता आ रहा है पर आज हमारा काम प्रायः दूसरों ने लिया है जगह जगह नेता लोग ऊंचे स्वर में उपदेश देते हैं। उनका असर क्यों नहीं पड़ता ? बात स्पष्ट है—जब तक उनका निजी जीवन अच्छा नहीं होगा तब तक उपदेश काम नहीं कर सकता। उनके जीवन का प्रतिबिम्ब जनता पर पड़ता है।

आज हम पदल यात्रा करते हैं यह बात लोगों को

लगती है। वे किसान जो हमेशा पदल चलते थे, आज हमें पदल चलते देखकर आश्चर्य करते हैं। अभी जब हम दिल्ली आ रहे थे तो रास्ते में हमें किसान लोग मिलते और कहते— आप मोटर में क्यों नहीं बठ जाते ? हमेशा श्रम करने वालों को भी पदल चलना इतना भारी लगता है तो दूसरों की तो बात ही क्या की जाय ?

लोग कहते हैं—जो काम मिनटों में हो जाता है, उसके लिये आप इतना समय क्यों लगाते हैं ? पर म कहता हू, जो राष्ट्रीय और अंत र्राष्ट्रीय क म करते हैं, वे उन साधनों का उपयोग करते हैं, पर मैं तो इतना बोझ नहीं लेता। पडितजी न राष्ट्रीय ही नहीं अंतर्राष्ट्रीय बोझ भी अपन कधो पर ले लिया है, और उसे वे छोड़ भी नहीं सकते। उनका वह क्षेत्र है।

भारत न हमेशा ससार का आध्यात्मिक नतृत्व किया है, इसीलिये कहा गया है —

एत द्दश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मन
स्व स्व चरित्र शिक्षरन, पृथिव्यां सव मानवा

नेहरूजी की ओर इशारा करते हुये आचार्य श्री ने कहा—आज विश्व म शान्ति क लिये भारत का नाम सबसे पहले आता है । अत यह भारत क लिये गौरव की बात है, धम के लिये गौरव की बात है। हाँ, तो वे उन साधनों का उपयोग करते हैं। पर मेरा काम तो कोटि कोटि जनता का दु ख दद जानना और सुनना है। अभी जब मैं गांवों मे होकर आ रहा था लोग मुझ स पूछते थे कि महाराज हमारे पास वो- क लिये अनक लोग आते हैं। हम पता नहीं, किसको वोट दें और किसको न दें। आप हम कह दीजिये हम किसको वोट दें। मैंने कहा—मैं नहीं कहता कि तुम उसको वोट दो और उसको मत दो। पर एक बात जरूर कहूंगा कि वोट की बिक्री मत करो अर्थात नोट के बदल में वोट मत दो। यह आवश्यक है कि आज देश में ऐसा आन्दोलन चलाया जाये—मैंने इस आवश्यकता को अनुभव किया और उसी का

परिणाम है कि मैंने अणुव्रत-आन्दोलन का सूत्रपात किया। लोग कहेंगे—क्या आपने अणुव्रत चलाया ? नहीं।

पण्डितजी से मैंने कहा—आपने पंचशील चलाये। पण्डितजी ने कहा—नहीं, यह तो चलते आ रहे हैं। मैंने क्या चलाया। (क्यों पंडितजी आपने ऐसा कहा था न ? पंडितजी ने मुस्कराते हुये स्वीकार किया।) उसी प्रकार मैंने तो छोटे छोटे व्रतों का संगठन कर सारी जनता के सामने रख भर दिया है।

यह भी ध्यान रखा है कि इसमें धर्म, जाति, लिंग और रंग का कोई भेद न रहे। आज जगह जगह पार्टीबाजी चल रही है। हमने सोचा—एक प्लेटफार्म ऐसा हो जिस पर सब इकट्ठे हो सकें।

जर्मन दूतावास के लोगों से मैंने पूछा—क्या आपको यह व्रतों का आन्दोलन लगा ? क्या इसमें कोई साम्प्रदायिकता है ? उन्होंने कहा—नहीं, यह तो हमारा बाइबिल के अनुकूल है। मुझे इससे लगी हुई और इसीलिये जनता ने, नेताओं ने, साहित्यकारों ने, कवियों ने सभी ने इसमें सहयोग दिया।

मैं अपनी योजना को अंतिम नहीं मानता। कोई भी अच्छी बात, वह चाहे जनता से मिले या नेहरूजी से मिले मैं उसका स्वागत करूंगा। मेरा काम और भावना तो यही है कि जनता का जीवन स्तर ऊंचा उठे। और इसी के लिये मेरा प्रयास है।

देश की आज सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि हममें से प्रत्येक अपनी जिम्मेवारी को समझे। भारतीयों ने उसे अभी तक नहीं समझा। विदेशी लोग इसका बड़ा खयाल रखते हैं। अधिकतर भारतीयों को अभी तक चलने उठने, बैठने और पूछने का भी ज्ञान नहीं।

महाव्रत की बात बहुत दूर है। हम अणुव्रतों की बात करते हैं। हम दार्शनिक चर्चायें—आत्मा और परमात्मा की बातें फिर कभी करेंगे। आज तो नैतिकता के छोटे छोटे नियमों की बातें करनी चाहिये। अगर इतना भी हो गया तो भी बहुत है।

बुद्ध ने अति-त्याग और अति भोग के बीच मध्यम मार्ग का उपदेश दिया। अति-त्याग साधारण जनता के लिये असाध्य है और अति भोग तो सर्वनाश है ही। अतः हमने भी साधारण जनता के लिये छोटे छोटे व्रतों को लिया और मध्यम मार्ग को अपना कर इस काम का सूत्रपात किया।

नैतिक प्रतिष्ठापन के लिये सबसे बड़ी आवश्यकता है—छोटे छोटे बच्चों को सुधारने की। बचपन में ही अच्छे संस्कार डालना सहज है। बड़े होने पर समझाना बड़ा मुश्किल है। अतः शिक्षण संस्थाओं में प्रारम्भ से ही बच्चों को अणुव्रतों की शिक्षा मिलती रहे, ऐसा सोचा जाना चाहिये। इसमें राष्ट्र के नेताओं विचारकों कार्यकर्ताओं के सहयोग की अपेक्षा है।

इस प्रसंग पर मुनि श्री नगराजजी तथा अ० भा० कांग्रेस के महामंत्री श्री श्रीमन्नारायण के भी भाषण हुये।

मुनि श्री नगराज जी ने आंदोलन पर बोलते हुये कहा—"अणुव्रत आंदोलन को चलते सात वर्ष हुए हैं। इस बीच आचार्य प्रवर तथा उनके आज्ञानुवर्ती साधु-साध्वियों के सतत प्रयास से लाखों व्यक्ति इसमें सम्मिलित हुए हैं, करोड़ों तक यह भावना पहुंची है। यह भारतीय संस्कृति के संयम एवं अध्यात्म मूलक आधारों पर प्रतिष्ठित है। नैतिक और आध्यात्मिक आधार के बिना देश में चलती सब प्रकार की प्रगति फीकी है।

कांग्रेस के महामंत्री श्री श्रीमन्नारायण ने कहा—'मुझे इस आंदोलन के प्रति अणु शब्द से आकर्षण हुआ। आज के जमाने में बड़ी बड़ी बातें करने वाले बहुत हैं पर काम बहुत कम। जब मैंने अणुव्रत आंदोलन का नाम सुना तो आप—छोटी बातें करने वाले भी तैयार हैं। विद्यार्थियों में व्यापारियों में वकीलों में डाक्टरों में, विभिन्न वर्ग के लोगों में इस आंदोलन द्वारा जीवन सुधार का काम किया गया। जिसकी जैसी शक्ति थी उन्होंने वैसे व्रत लिये। मुझे यह बहुत अच्छा लगा। हमारे देश में अनेकों आर्थिक आयोजन चल रहे हैं पर जब तक चरित्र निर्माण न हो,

तब तक धार्मिक आयोजनों से विशेष लाभ नहीं हो सकता। इसलिये मैं पचवर्षीय योजना की दृष्टि से भी इस आंदोलन को महत्व देता हू। धार्मिक विकास के साथ साथ यदि चरित्र सबधी गुणों का भी विकास हो तो सोने में सुगध हो जाय।

कुमारी यामिनी तिलकम ने संस्कृत में मंगलाचरण किया तथा श्री गोपीनाथ अमन ने आभार प्रदर्शन किया। सभा सानद सपन्न हुई।

[illegible]

दूसरा दिन
विद्यार्थी जीवन का निर्माण

१४ दिसम्बर १९५६ को प्रात ६ बजे माडर्न हाईस्कूल मे प्रवचन का कार्यक्रम था। आचार्य श्री ठीक समय पर वहाँ पधारे, विद्यार्थियों के सामूहिक गान से कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। स्कूल के प्रिंसीपल श्री एम० एन० कपूर के स्वागत भाषण के बाद (कांग्रेस के महामंत्री श्री श्रीमन्नारायण की धर्मपत्नी) श्री मदालसा देवी ने आचार्य प्रवर व अणुव्रत आन्दोलन की भूरि भूरि प्रशंसा करते हुये अणुव्रत-सप्ताह की उपयोगिता पर प्रकाश डाला।

आचार्य श्री ने अपने प्रवचन मे कहा—मुझे प्रसन्नता है कि मैं आज विद्यार्थियों के बीच बोल रहा हू विद्यार्थियों मे बोलना मेरी रुचि का विषय है। उनमे बोलना मैं पसन्द करता हूँ।

मैं जो कुछ बोलता हूँ उसके दो आधार हैं—मेरा अपना अनुभव और आर्षवाणी आधार हीन बोलने मे कोई तथ्य नहीं होता हृदय

नहीं होता, वेदना व तन्य नहीं होती। केवल नाम जाल सा रह जाता है। मैं आज विद्यार्थी जीवन पर प्रकाश डालता हूँ।

जैन सूत्रों में एक प्रकरण है – साधक अपने गुरु से पूछता है— *भगवन् शिक्षा कौन कौन प्राप्त कर सकता है अथवा विद्यार्थी के क्या लक्षण हैं।* त्रिकालदर्शी भगवान ने कहा—

वसे गुरुकुल निच्चं, जोगवं उवहाणवं।
पियं करे पियं वाई से सिक्खं लद्धु मरिहई ॥"

जिसमें ये पाँच लक्षण पाये जाते हैं वह विद्यार्थी है।

पुरातन जमाने में यह परम्परा रही है कि विद्यार्थी गुरुकुलों में ही विद्याध्ययन करते थे। अपने माता पिता से कोसों दूर रह कर निर्जन स्थान में जीवन की घड़ियाँ बिताते थे। वहाँ केवल किताबी ज्ञान ही नहीं, कैसे खाना, सोना, उठना बैठना आदि आदि कार्यों का भी ज्ञान कराया जाता था। गुरुकुल के अधिपति उनका संरक्षण व संवर्धन करते थे। गुरुजनों के सात्विक व सदाचारी होने का लड़कों पर पूरा असर पड़ता था। *दिन और रात उनके सहवास में उनका जीवन सजता रहता था।* किन्तु आज की स्थिति और है। आज का विद्यार्थी मुश्किल से ५-६ घंटे अध्यापकों के सम्पर्क में रह पाता है। शेष समय घर वालों के बीच बीतता है इसलिये अध्यापकों के कथन व रहन-सहन का इतना असर नहीं होता जितना घर वालों का होता है। पारिवारिक चिन्ताओं का शिकार भी उसे होना पड़ता है। यही कारण है कि आज का स्नातक जीवन में सही मूल्यों के आंकने में सफल नहीं होता। आज भी ऐसा सोचा जा रहा है कि यदि गुरुकुल की परम्परा का अनुसरण किया जाये तो सम्भव है, विद्याध्ययन के क्षेत्र में कुछ परिवर्तन आ सके।

विद्यार्थी जीवन साधना का जीवन है। योग-साधना उसका लक्ष्य होना चाहिये। इस ओर कैसे गति की जाय ऐसा चिंतन होना चाहिए। आप चौंकेंगे कि कहाँ तो विद्यार्थी जीवन और कहाँ योगी की योग

साधना ? यह प्रश्न हो सकता है। किन्तु आपको यह जान लेना चाहिए कि योग के बिना एकाग्रता नहीं आती और एकाग्रता के अभाव में विद्या का समुचित ग्रहण नहीं होता। वही विद्यार्थी अपने जीवन में सफल हो सकता है जो कि अपने अध्ययन चिंतन और मनन में एकाग्र रहता है। एकाग्रता से ग्रहण की हुई बात नहीं भूलती। उनके संस्कार अमिट होते हैं।

आज विद्यार्थियों का जीवन एक रस नहीं है। वह कई भागों में विभक्त हो चुका है। राजनीति समाज सुधार अर्थनीति आदि आदि चक्करों में पड़कर अपना अध्ययन भी व पूरा नहीं कर पाते। न अध्ययन ही होता है और न राजनीति में ही पूरा प्रवेश कर पाते हैं। आज का विद्यार्थी देश व विदेश की राजनीति के बारे में सोचता है। उसे समझने का प्रयास भी करता है। किन्तु वह भूल जाता है कि उसका अध्ययन किस ओर जा रहा है। एक उदाहरण है —एक गांव में कई वृद्ध महिलाएँ एक स्थान पर बैठी थीं। आपस में चर्चा चल पड़ी। उनका मुख्य विषय था—राजनीति। अपने-अपने मनोगत भावों को व्यक्त कर वे अपने आप में संतोष का अनुभव करती थीं। गर्मागर्म बहस होने लगी। एक राहगीर उस ओर से गुजरा। विषय को भांपने में उसे देर न लगी। व्यंग कसते हुए उसने कहा—

रैंट्यो पूणी राम इतरो मतलब आपरो

की डोकरियाँ काम, राजनीति स्यूं राजिया।

इसी प्रकार विद्यार्थियों को भी राजनीति से दूर रहना चाहिए।

विद्यार्थी का जीवन तपस्यामय हो, तपस्या का अर्थ भूखे रहना ही नहीं। मन, वचन और काया को संयत रखना भी तपस्या है। स्वाध्याय संत-सेवा आदि कार्य भी तपस्या है।

अपनी छोटी से छोटी भी गलती को सहर्ष स्वीकार करना विद्यार्थी जीवन का बड़ा गुण है। गलती करना इतनी भूल नहीं, जितनी बड़ी भूल कि गलती को गलती न समझना तथा समझ लेने पर भी उसे

नहीं छोड़ना है। विद्यार्थी इससे बचे। इसी को पुष्ट करने के लिए रामायण की एक कथा आपके सामने प्रस्तुत करता हूं —

दो भाई विद्याध्ययन के लिए गुरुकुल गये। बारह वर्ष तक अध्ययन किया। कुल पति की आज्ञा से वापिस घर लौटे। इस अवधि मे बहुत से परिवर्तन हो चुके थे। आते आते उन्होंने एक विशाल अट्टालिका के झरोखे मे बैठी हुई द्वादश वर्षीय कन्या को देखा। मन मे विकार उत्पन्न हुआ, विद्यार्थी अवस्था को भूल वे नाना प्रकार के सकल्प विकल्प करने लगे। किन्तु ?

माता पिता के चरणों मे प्रणाम किया। उन्होंने देखा कि वही कन्या वहां भी उपस्थित है। मन चचल हो उठा मन ही मन सोचने लगे— यह कन्या कौन है ? क्या इसे हम पा सकते हैं। साहस कर मा से पूछा—मां यह कौन है ? मां ने कहा—बेटा यह तुम्हारी बहिन है। जब तुम पढ़ने के लिए गुरुकुल मे गये थे तब इसका जन्म हुआ था। आज यह पूरे १२ वर्ष की हो गई है। यह कह कर मां ने पुत्री की ओर सकेत करते हुए कहा—बेटी ये दोनों तेरे भाई हैं इन्हें प्रणाम कर। वह भाइयो के चरणों मे पड़ गई। यह देख दोनों दग रह गये।

अपनी मलिन भावनाओं को याद कर उन्होंने मन ही मन अपने आपको धिक्कारा। लज्जित हो आँखें भूमि मे गड़ाये हुये कुछ क्षण स्तब्ध से खड़े रहे। अपने किये का प्रायश्चित्त करने को उत्सुक हो उठे। उन्होंने यह निश्चय किया कि इस पाप के प्रायश्चित्त स्वरूप वे जीवनपर्यन्त ब्रह्मचारी रहेंगे। इस कठोर व्रत के सकल्पमात्र से उनमे स्फूर्ति व उत्साह उमड़ पड़ा। आगे क्या हुआ ? इसमें हमें नहीं जाना है इस उदाहरण से विद्यार्थी कुछ सीखें और इस शृखला को अक्षुण्ण रखने मे प्रयत्नशील रहें।

"विद्या ददाति विनयम —विद्या से विनय आती है। जो विद्या विनय नहीं देती, वह अविद्या है। उसका विकास नहीं ह्रास होता है। विद्यार्थी को यह कभी नहीं समझना चाहिये कि उसकी समझ ही सब

हुए है। वह बूढ़ों की बातों पर ध्यान देना भी उसका परम कर्तव्य होना चाहिये।

मैं आज से ५ वर्ष पूर्व पंडित नेहरू से मिला था। कल फिर उनसे मिलने का मौका मिला। मैंने उनमें बहुत अन्तर पाया। मुझे ऐसा लगा कि वे प्रतिदिन नम्र बनते जा रहे हैं। उनमें भारतीय परम्परा व सभ्यता के प्रति कितना सम्मान है। वहाँ कैसा व्यवहार करना चाहिए, यह वे केवल जानते ही नहीं, बल्कि तदनुरूप आचरण भी करते हैं। धर्माचार्य के प्रति कैसा व्यवहार करना चाहिये यह आप उनसे सीखें। उनकी कोठी पर मैं गया था। वहाँ भी उन्होंने लगभग ४८ मिनट तक धार्मिक विषयों के विचार विनिमय में कितना रस लिया यह मैं जानता हूँ।

आपको भी चाहिए कि आप नम्र रहना सीखें। नम्रता के अभाव में आचार और विचार में सामञ्जस्य नहीं रहता। निष्पक्षता की भावना नहीं होती। वहाँ वात्सल्य नहीं आता या यों कहें कि वात्सल्य के बिना नम्रता नहीं आती।

विद्यार्थी अपने आपको पवित्र रखें। जीवन को शुद्ध बनायें — यह मैं विद्यार्थियों के लिए नहीं कहूँगा। क्योंकि विद्यार्थी-जीवन बाल्य जीवन है। वह प्रायः पवित्र होता है। मैं उनको कहूँगा कि वे अपना जीवन अशुद्ध न बनाएं।

तीसरा दिन

शान्ति का मार्ग

१५ दिसम्बर १९४९ को मध्याह्न में चरित्र निर्माण सप्ताह के अन्तर्गत आचार्य श्री का आयकर अधिकारियों के बीच सेंट्रल रेवेन्यू बिल्डिंग में प्रवचन था। करीब १ बजे आचार्य श्री वहाँ पधारे। आयकर आयुक्त श्री एन० सी० चौधरी ने आचार्य श्री के स्वागत में भाषण दिया। आचार्यश्री ने उपस्थित अधिकारियों एवं कर्मचारियों को सम्बोधित करते हुए कहा — आज आपके इस नये भवन में हम आपको और आप हमको कुछ विचित्र से लगते हैं। आज हमारा संगम भी तो नया है और जब तक परिचय नहीं हो जाता तब तक आश्चर्य होना स्वाभाविक भी है। एक बच्चा जब इस संसार में आता है तब पहले पहल उसे भी संसार कुछ विचित्र सा लगता है। धीरे धीरे उसका परिचय संसार के साथ होने लगता है, वह अपने वातावरण में रच-पच जाता है। अतः उचित है, पहले मैं आपको अपना परिचय दे दूँ। हम भी आपकी तरह भिन्न भिन्न प्रान्तों में रहने वाले थे। क्योंकि साधु कोई जन्म से तो होता नहीं जिसे अपने अनुभव से संसार से विरक्ति हो जाती है वही साधु होता है।

हम लोग शरणार्थी भी हैं क्योंकि हमारा कहीं पर भी इंच भर जगह नहीं है। पर हम सामान्य शरणार्थियों से भिन्न हैं। दिल्ली में एक बार बहुत से शरणार्थी मेरे पास आये और मुझे अपना दुःख सुनाने लगे। मैंने उनसे कहा—भाइयो आप और हम तो एक से हैं, क्योंकि हम दोनों ही शरणार्थी हैं। पर हम में और आप में एक बहुत बड़ा

अन्तर है। वह यह है कि आपकी जमीन जायदाद छुड़ायी गई है और हमने अपनी धन सम्पत्ति जानबूझकर छोड़दी है। यही कारण है कि आपको तो दुःख होता है और हमें प्रसन्नता।

हम लोग जन हैं। जिन' का मतलब है—विजता। विजता यानी जो अपने पर अनुशासन करे। जिसने अपने पर अनुशासन नहीं कर लिया है उसे वास्तव मे दूसरा पर अनुशासन करने का अधिकार ही क्या है? अपने स्वार्थ से दूसरों पर अनुशासन करने वाला कायर है। पर "जिन" विजता अपने पर ही अनुशासन करते हैं, उनका ही धर्म जनधर्म है।

आप कहेंगे कि—हम यहाँ क्या आए? हम यहाँ अपनी साधना के लिए आए हैं। हमारा सारा काम चलना फिरना, खाना, पीना और प्रवचन करना साधना के लिए ही होता है। यहाँ जो प्रवचन करने आये हैं यह आप पर कोई अहसान नहीं है। यह तो हमारी साधना ही है। आपसे भी हम कहना चाहते हैं आप भी जो कुछ करें साधना की ही भावना से करें।

आज की आवश्यकता

आज देश में सबसे अधिक जो खोया है वह है ईमान और मानवता। ऊपर से तो सारे लोग बहुत अच्छे लगते हैं पर अन्दर से केवल अस्थि पंजर मात्र रह गया है। सब दूसरों की आलोचना करने को तत्पर हैं, पर अपने आप को कोई नहीं देखता। व्यापारी लोग आपको कोसते हैं। वे सोचते हैं, हम तो इतनी मेहनत से पैसा कमाते हैं और आप लोग (इन्कम टैक्स आफिसर) आकर उसे साफ कर देते हैं। सचमुच आप लोग उन्हें यमदूत लगते हैं (श्रोताओं में हंसी) पर वे स्वयं यह नहीं सोचते कि वे कितने गरीबों के गले पर छुरी फेरते हैं। अभी मेरे सामने व्यापारी (बनिये) लोग नहीं हैं। पर जब वे मेरे सामने होते हैं तो मैं उनकी भी अच्छी तरह से खबर लेता हूं। मुझे दुःख है कि आज

बनिये बदनाम हैं और उनके साथ साथ कभी-कभी हमे भी लोग कुछ बदनाम कर देते हैं क्योंकि लोग हम भी बनिया के गुरु कहते हैं। हमारे अनुयायी सारे बनिये ही हैं, ऐसा नहीं है।

बहुत से व्यापारी ऐसे भी हैं जिन्हें आपका बिल्कुल भय नहीं है। उनका व्यापार बिल्कुल साफ है। अणुव्रत मनुष्य को अभय बनाता है। भय से भय बढ़ता है। अणुबम ने मनुष्य को भयभीत बना दिया तो विपक्ष के लोग हाईड्रोजन बम बनाकर अभय बनना चाहते हैं। पर अभय का रास्ता यह नहीं है। अणुव्रत अभय बनने का मार्ग है।

अणुव्रत आपको सन्यासी नहीं बनाता है। यह कहता है – जहां भी आप रहते हैं वहीं रहकर भी अपने पर नियन्त्रण करें। अगर आपने यह कर लिया तो आपके घर और कार्यालय सब सुधर जायेंगे।

पहला अणुव्रत अहिंसा है। किसी को मार देना मात्र ही हिंसा नहीं है पर बुरा चिन्तन भी हिंसा है। अस्पृश्य मान कर करोड़ों का तिरस्कार करना हिंसा नहीं तो और क्या है? इस तिरस्कार की फिर प्रतिक्रिया भी होती है। आज जो सामूहिक रूप में धर्म परिवर्तन किया जा रहा है यह क्या है? क्या उन्होंने श्रद्धा से ऐसा किया है? श्रद्धा से व्यक्ति समझ सकता है पर इतने बड़े पैमाने पर धर्म परिवर्तन निश्चय ही अपमान का प्रतिकार है। हिन्दू लोगों ने शूद्रों के साथ असद् व्यवहार किया उसका फल है कि आज वे लाखों की संख्या में बौद्ध बनते जा रहे हैं। काम के आधार पर किसी को नीचा और अस्पृश्य मानना हिंसा है और व्यवहार विरुद्ध भी है। अगर इसी प्रकार कोई अस्पृश्य होता तो मातायें तो कभी की अस्पृश्य अपवित्र हो जातीं।

भगवान महावीर ने कहा—'कम्मुणा बंभणो होई, कम्मुणा होई खत्तियो, वइसो कम्मुणा होई सुद्दो हवइ कम्मुणा' अर्थात कर्म से ब्राह्मण होता है और कर्म से ही क्षत्रिय वैश्य और शूद्र भी कर्म से ही होता है।

आप दूसरों पर दोष नहीं मढ़ सकते। अत अपने आपको जगाना पड़ेगा।

सबसे पहली और महत्व की बात यह है कि आप रिश्वत न लें। मैं आपकी कठिनाइयों को जानता हू। यह कठिनाई केवल आपकी ही नहीं है प्रत्येक व्यक्ति के सामने अपनी अपनी कठिनाइयाँ रहती हैं। बिना उनके सहे आप सुखी नहीं हो सकेंगे। जिस व्यक्ति ने इस तथ्य को समझ लिया है वह निश्चय ही एक आंतरिक शांति का अनुभव करेगा।

दूसरी बात आप दुर्व्यसनों से बचें। बीड़ी सिगरेट तो आज सभ्यता की चीज बन गई है। बहुत से लोगों से मैं पूछता हूँ—भाई तुम बीड़ी पीते हो। वे कहते है—हाँ महाराज। वसे तो हम बीड़ी नहीं पीते, पर कभी कभी जब दोस्तों के साथ बठ जाते हैं तो सभ्यता के नाते पीनी पड़ती है। लानत है एसी सभ्यता को। क्या सभ्यता इसे ही कहा जाता है? और चाय तो आज बिछौने म ही चाहिये। बिना उसके तो दूसरे काम म हाथ लगाना ही मुश्किल हो जाता है। वह तो मानो आजकल रामनाम हो गई है। इसी प्रकार और भी बहुत सी नशीली चीजें हैं, जिनसे आप बचने की कोशिश करेंगे तो आपके जीवन मे एक सच्ची शान्ति मिलेगी।

सेक्रेटरी श्री हरनाम शकर के द्वारा किये गये आभार प्रदर्शन के साथ सभा विसर्जित हुई।

चौथा दिन

हरिजन—अनाम महाजन

१६ दिसबर १९५६ को दोपहर म राष्ट्रीय चरित्र निर्माण अणुव्रत सप्ताह के अतगत हरिजन बस्ती मे वाल्मीकि मदिर मे हरिजनो के बीच आचाय श्री का प्रवचन हुआ।

पहले वाल्मीकि सभा क सक्रेटरी श्री रतनलाल वाल्मीकि न आचाय श्री के स्वागत मे भाषण दिया।

आचाय श्री न अपना भाषण प्रारभ करते हुये कहा—आप लोगो मे सुनन की उत्कठा है जिसका प्रमाण स्वय आप लोगों की उपस्थिति है। यह बडी प्रसन्नता की बात है। आप लोगो को समय कम मिलता है क्योंकि आपके जिम्मे सफाई का बहुत बडा काम है। दूसरे लोग जहाँ गन्दगी करत हैं वहाँ आप लोग सफाई करते हैं। यह बडे महत्त्व की बात है। इसे ऊँचे अथ म लें तो गन्दगी मनुष्य के भीतर है आत्मा मे है। क्या कोई एसा भी हरिजन है जो उस गन्दगी को दूर कर सके। वही वास्तव म सच्चा हरिजन है।

हरिजन का अथ

गांधीजी न आपका नाम हरिजन दिया। पर वास्तव मे इसका अथ क्या है यह आपको समझना है। जसा कि वष्णव जन की परिभाषा मे गांधीजी एक भजन गाते थे—'वष्णव जन तो तेने कहिये जे पीर पराई जान रे। उसी प्रकार वास्तव में हरिजन वह है जो अपने आपको स्वच्छ रखकर दूसरों को भी स्वच्छ रखने का प्रयास करता

हरिजन थोड़े ही मिलेंगे पर उनकी अत्यधिक आवश्यकता है।

आज नई दिल्ली के वाल्मीकि मंदिर में आप लोगों के बीच मैं पहली बार ही आया हूं। वसे मैं बहुत स्थानों पर हरिजनों के बीच जाता रहा हूं। वहां केवल मैं देता ही देता नहीं हूं लेता भी हूं। देता तो मैं उपदेश हूं और लेता उनसे भेंट हूं। पर मैं रुपयों और फल फूलों की भेंट नहीं लेता। मुझे त्याग की भेंट चाहिये। आज ही लोक सभा के अध्यक्ष अय्यगार आये तो उन्होंने मुझे पर भेंट करनी चाही। मैंने कहा—मुझे भक्ति और त्याग की भेंट चाहिये।

आपको लोग हरिजन कहते हैं पर मेरी दृष्टि में आप सबसे पहले मानव हैं। मनुष्य सबसे पहले मनुष्य है और पीछे वह सज्जन, दुर्जन, महाजन, हरिजन है। मानव मौलिक चीज है दूसरी सब उपाधियां हैं।

सोचना यह है कि मानव कौन है? स्पष्ट है—जिसमें मानवता है वह मानव है अन्यथा मानव का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता। मानवता यह है कि मनुष्य दूसरों को भी अपने जसा समझे। पर आज मानवता रह कहां गई है। आज तो करोड़ों आदमी अपने भाइयों को भाई नहीं समझते। वे उन्हें नीच और अस्पृश्य मान कर उनका तिरस्कार करने से भी नहीं सकुचाते। ये ऊंची-नीची कौम कब और क्यों हुई? यह सब इतिहास का विषय है। मुझे उसमें नहीं जाना है। पर शुरू में भिन्न भिन्न जातियाँ काम के आधार पर बनी थीं यह निश्चित है। पहले हरिजन जसा कोई नाम नहीं था। ये सब बाद की चीजें हैं। स्यात् पुराना नाम 'महत्तर' था। जब से काम का व्यवस्थित विभाजन हुआ तब वह श्रम पर अवलम्बित था। श्रम करने वालों को महान् कहा जाता था। उनमें जो विशेष काम करता उसे महत्तर कहा जाता था। अतः सफाई का काम करने वालों को महत्तर कहा जाने लगा। पर आज स्थिति दूसरी ही हो गई है। आप लोगों ने भी अपने आपको हीन मान लिया। आप समझते हैं—हम तो नीच हैं। पर यह कायरता क्यों? हीन वह है जो दुराचारी है व्यभिचारी है, कमीना है। आप

सफाई का काम करने मात्र से होन और नीच कैसे हो गये ?

मुझे एक प्रसंग याद आता है—एक बार एक चंडालिनी चली जा रही थी। उसके हाथ में खप्पर था हाथ लहू से सने हुए थे। सिर पर मरा हुआ कुत्ता था और वह मार्ग को पानी से छींटती हुई जा रही थी। उसे देखकर एक ऋषि ने पूछा—

'कर खप्पर सिर स्वान है लहू से सरड हस्त।
छिड़कत मग चंडालिनी ऋषि पूछत ह बत।

उसने तुरंत उत्तर दिया—

"ऋषि तुम तो भोरे भये नहिं जानत हो भव।
कृतघ्नी की चरण रज छिड़कत हूं गुरुदेव।"

गुरुदेव आप इसका रहस्य नहीं जानते। मैं मार्ग पर जो पानी छिड़क रही हूं इसका कारण है मार्ग जो कृतघ्न मनुष्य चला जा रहा है, उसकी चरण रज मेरे पैरों पर न पड़ जाये। क्योंकि वह अस्पृश्य है।

अतः सफाई का काम करने मात्र से कोई अस्पृश्य नहीं हो जाता। वास्तव में अस्पृश्य तो वह है जो कृतघ्नी है। केवल अच्छे कपड़े पहन लेने मात्र से ही कोई ऊंचा नहीं हो जाता। दिन भर तो बेईमानी करे और आफिस में जाकर ऊंचे आसन पर बैठकर अपने आपको ऊंचा मानने वाला वास्तव में ऊंचा नहीं है। अतः आप अपने मन से यह भावना निकाल दें कि हम नीच हैं।

दूसरी बात है आप लोग अपने आपको गरीब क्यों मानते हैं। क्या इसलिये कि आपके पास धन नहीं है ? तो हम भी देखिये हमारे पास एक पैसा भी नहीं। हम पैदल चलते हैं। अब पूंजी की पूजा करने का जमाना लद चुका है। हां, आज सीटों का जमाना अवश्य है। आज वे आदमी बड़े माने जाते हैं, जो शासकीय सीट पर हैं। पर यह भी गलत बात है। वे ही आदमी जिन्हें सीट लेनी होती है पहले कितने सुहावने आश्वासन देते हैं और फिर गरीबों के सामने देखते तक नहीं। अतः उन्हें ही बड़ा मानना कोई आवश्यक नहीं है।

हैं। लाल को बड़े भी तो मुश्किल से बनते हैं फिर बड़ा आदमी बनने मे तो बड़े त्याग की आवश्यकता है। अगर आपको बड़ा बनना है तो अणुव्रती बनिये।

आप लोग इतना काम करते हैं पर फिर भी रहते भूखे के भूखे हैं। इसका कारण क्या है? यही कारण है कि आप कमाते तो एक हाथ से हैं और गवाते सौ हाथो से हैं। इधर कमाया और उधर शराब मे खो दिया। मास मत खाइये। हाँ रोटी खाये बिना काम नहीं चल सकता। पर मास भी कोई खाने की चीज है? तम्बाकू भी आपको चाहिये। क्या यह पसे स्वास्थ्य और सबसे ज्यादा आत्मा के बर्बाद होने का रास्ता नहीं है?

एक बात और—आप अपने वोट की बिक्री न करें। आप वोट किसी को दें, इसमे मुझे आपसे कुछ नहीं कहना है। पर अपन आपको दूसरों के हाथ तो मत बचिये।

कम से कम इतनी बातों को अपन जीवन मे स्थान दे दिया तो मैं समझता हू कि आपका जीवन सुखी हो जायेगा। बिना आत्म-शुद्धि के कहीं भी शान्ति नहीं मिलन वाली है। चाहे आप कहीं चले जायें, किसी धम का स्वीकार कर लें।

आपक साथ साथ आपके पास बठने वाले भाइयों से भी मैं यही कहूगा कि वे अस्पश्यता जसी मानसिक हिंसा का त्याग करें। हाँ, इस सम्बन्ध मे आपसे भी मुझ कहना है। हरिजनो म भी आपस में छूआछूत है यह अनुचित बात है। जब आप लोग भी इसक शिकार हैं, तब दूसरों को आप समानता की बात क्या कह सकते हैं। अत उसे मिटाइये, तब ही आप बड़ हो सकेंगे। अपना बड़प्पन अपन हाथ मे है। अगर आप किसी को भी छोटा नहीं मानत हैं तो आप स्वय ही बड़े हो जाते हैं।

प्रवचन के अन्त मे अनेकों (प्राय सभी) हरिजनों न वोट के लिये

धूम्रपान लेने और शराब पीने का त्याग किया। उससे थोड़े लोगों ने धूम्र
पान और उससे थोड़े लोगों ने मांस खाने का त्याग किया।

त्याग लेते समय कुछ बच्चे भी खड़े हो गये थे। उन्हें समझाते हुये आचार्य श्री ने कहा—अभी तुम छोटे हो, फि बड़े हो कर भी इन्हें निभाना होगा। अत पूरा समझ लेना। कुछ छ- थे, जो त्याग के महत्व को नहीं समझते थे उन्हें प्रत्याख्यान नहीं करवाया गया।

कायोत्रा (११) [illegible]

पांचवा दिन

पाप का सुधार

१७ दिसंबर १९५६ को नई दिल्ली विहार कर आचार्य श्री नये बाजार पधारे। बीच में राष्ट्रीय-चरित्र निर्माण-अणुव्रत सप्ताह' के अन्तर्गत "सन्ट्रल जेल" में प्रवचन हुआ। प्रवचन प्रारम्भ करते हुए आचार्य श्री ने लगभग १५०० कैदियों को सम्बोधित करते हुए कहा—"आज के इस सुन्दर अवसर पर मुझे बड़ा आनन्द हो रहा है। अपराधियों के साथ काम करने में मेरी विशेष रुचि रही है। आप लोगों के बीच मेरा आने का पहला ही अवसर है। शायद आप लोगो का भी यह पहला ही अवसर होगा, जब कि एक धर्म गुरु आप के बीच उपदेश कर रहे हैं।

सब से पहले मैं आप से यह पूछना चाहूंगा कि आप आस्तिक हैं या नास्तिक? नास्तिक वह है जो पुनर्जन्म, धर्म, कर्म में
करता। जो इनमें विश्वास करता है वह आस्तिक

लोगों में से अधिकतर आस्तिक होंगे। आप को सोचना है—ईश्वर क्या है ? ईश्वर वही है, जो सर्वद्रष्टा है। इसीलिए हम सवेरे-सवेरे उसका स्मरण करते हैं। जब हमने मान लिया कि परमात्मा सारे संसार को देखता है तो उससे छिपकर काम करने वाला क्या नास्तिक नहीं है ? अतः सब से पहले आपको यह सोचना है कि आपने क्या अपराध किया था ? किसी दूसरे ने आप के अपराधों को देखा या नहीं ? पर आप खुद अपने अपराधों को नहीं भूल सकते। इसी कारण आप को जेल की हवा खाना पड़ा है। यद्यपि मैं यह मानता हूं कि समूचा संसार बंद खाना ही है क्योंकि शरीर भी तो बन्धन ही है जिस दिन इससे छूटेंगे, वह दिन धन्य होगा। पर इतना कह देने मात्र से काम नहीं चलेगा। यह निश्चय की भाषा है। व्यवहार की भाषा में जेल यही है क्योंकि यहाँ अपराधी रहते हैं। मैं कहूंगा—आप अपना आत्म निरीक्षण करें। आप सोचिये—क्या आपने अपराध किया है ? शायद आपकी आत्मा हाँ कहेगी। तब आप उसे छुपाइये मत। साफ-साफ कह दीजिये। आप यह देखते होंगे कि पुलिस ने आप को व्यर्थ ही जेल में डाल दिया है। पर आज आप उस भूल को भूल जाइये। गवाहों की झूठी गवाही को भूल जाइये। अपने आप को देखिये कि अपना क्या अपराध हुआ ? पाप के स्वीकार मात्र से आप की आत्मा कुछ हल्की हो जायेगी। पाप का पहला प्रायश्चित है—आत्म-ग्लानि। अतः अगर आप अपने आप को स्वीकार कर लेते हैं, तो एक रूप से उसका प्रायश्चित हो जाता है।

रामायण में एक प्रसंग आता है—एक बार सीतेन्द्र अपने स्वर्ग से चल कर रावण आदि अपने पूर्व भव के सम्बन्धियों को देखने नरक में गया। वहाँ उसने देखा—सारे नरयिक आपस में बुरी तरह लड़ते हैं और दुःख पाते हैं। उसके मन में दया आ गई। उसने चाहा कि वह रावण आदि को विमान में बिठा कर अपने स्वर्ग में ले जाये। पर अपने पाप के कारण वे ऊपर नहीं आ सके। सीतेन्द्र ने भी देखा कि वह रावण आदि को स्वर्ग में नहीं ले जा सकता और कहा—तुम स्वर्ग

में तो नहीं आ सकते पर एक काम तो करो—आपस में लड़ कर जो तुम दुःख पा रहे हो वह तो मत करो। इससे कम से कम तुम्हारा अगला जन्म तो सुधरेगा। रावण ने उसकी बात मान ली।

इसी प्रकार हम आज यहाँ जल में आये हैं पर आप को जल से छुड़ाने के लिये नहीं। हमारा कर्तव्य है कि हम आप को उपदेश दें और आप को दुर्व्यसनों से छुड़ायें। आप भी जल से छूट नहीं सकते पर कम से कम अपने अपराधों को तो स्वीकार करें। इससे आप को आगे की साची जेल से छुटकारा मिलेगा।

अपराध कई प्रकार के होते हैं—मानसिक वाचिक और कायिक। मन में बुरा चिन्तन करने वाला भी अपराधी है तो जो आदमी हत्या या चोरी करता है, वह तो साक्षात अपराध है ही फिर वे चाहे जेल में हों या बाहर। उसी प्रकार जो आदमी हत्या नहीं करता है अहिंसक है, पर चाहे जेल में भेज दिया जावे वह अपराधी नहीं होता। यह भी क्या पता कि आप अपराधी हैं या नहीं। मैं तो कई बार कहा करता हूं कि आज का सारा संसार ही अपराधी है। व्यापारी बाजार में अनीति करते हैं क्या वे अपराधी नहीं हैं? कानून का भंग करने वाला हर कोई अपराधी है। तो आज संसार में कितने आदमी हैं जो अपराध नहीं करते। पर कानून ही ऐसा है कि जिससे सारे पकड़ में नहीं आते या नहीं पकड़े जाते। आप अपराधी इसलिये हैं कि आपका अपराध पकड़ लिया गया। अतः व्यवहार की दृष्टि से यह स्पष्ट है कि आपने अपराध किया है। इसलिये आज आप को स्वयं को टटोलना है।

हमने सोचा—जब हम सब वर्गों में काम करते हैं तो अपराधी लोगों को भी हमें सम्हालना चाहिये। हमारा यह दावा नहीं है कि हम आप को सुधार ही देंगे। प्रेरणा देना हमारा काम है। सुधरेंगे तो आप स्वयं ही। मैं यह कहूं कि मैं आप को सुधारता हूं, तो यह अहं होगा। रास्ता दिखाना मेरा काम है उस पर चलना आप का काम है। मैं क्या,

परमात्मा भी किसी को सुधार नहीं सकता, यदि स्वयं व्यक्ति सुधरना न चाहे।

सुधार व्रतों से सम्भव है। अणुव्रत व्रतों का मार्ग है यह आप के सामने है। अति-त्याग और अति भोग के बीच का यह मध्यम मार्ग है। अणुव्रती वह है जो छोटे व्रतों को ग्रहण करे। आप भी आज से अपने अपराधों का पुनः न दुहराने की प्रेरणा लें। खान-पान में अशुद्धि न बरतें। कम से कम उन चीजों को तो अवश्य छोड़िये जो दिमाग को बिगाड़ता हैं। इसके अलावा आप से मैं एक बात यह भी कहूंगा कि आप अपने व्यवहार को इतना विश्वस्त बनाइये, जिससे कि आप के आस-पास रहने वाले अफसर आप पर विश्वास कर सकें सजा तो आप को भोगनी ही पड़गी। तो फिर अविश्वस्त बन कर पाप क्यों कमा रहे हैं।

आप के साथ-साथ उपस्थित अधिकारियों से मैं भी यह कहना चाहूंगा कि आप को कदियों के साथ वैसा बर्ताव तो करना ही पड़ता है, जैसा कानून कहता है। पर आप अपनी ओर से उनके साथ क्रूर व्यवहार न करें।

इसके बाद सभी लोगों ने दो मिनट तक आत्म चिन्तन किया। कई कैदियों ने अपने अपने अपराध स्वीकार भी किये और आगे वैसा न करने की शपथ ली। वातावरण बड़ा शान्त रहा।

तत्पश्चात एक कैदी ने अपनी आत्म-कथा सुनाई। उसकी बोली में वेग था। एक ही सांस में वह सब कुछ कह गया और आचार्य श्री से यह प्रार्थना की कि वे उच्च अधिकारियों से मिलते वक्त कैदियों की स्थिति का भी वर्णन करें और उसमें कुछ सुधार हो ऐसा प्रयत्न भी करें।

आज के इस अनोखे कार्यक्रम में केन्द्रीय रेलवे मन्त्री श्री जगजीवन राम और राजस्थान के पुनर्वास मन्त्री श्री अमृतलाल यादव ने भी अपने विचार प्रस्तुत किये और अणुव्रत आन्दोलन के वर्गीय कार्यक्रम की भूरि भूरि प्रशंसा की। कई श्रावक श्राविकायें भी कार्यक्रम में उपस्थित थीं।

आत्मा की आवाज़

केन्द्रीय रेलमंत्री श्री जगजीवनराम ने अपने भाषण में कहा—"जिस काम को करते समय छिपाना चाहते हैं या काम करके जिसे छिपाना चाहते हैं मेरे विचार में वह अपराध है। सब की आत्मा हर वक्त यह बताती रहती है। पर होता यह है कि हम आत्मा की आवाज़ को दबा देते हैं। व्यक्ति अपराध क्या करता है समाज का ढांचा भी इसका एक कारण है। आज के समाज में अनेकों बेढंगी और बेहूदी बातें हैं जिन्हें हमें बदलना है। आचार्य श्री तुलसी अणुव्रत आंदोलन द्वारा ऐसा प्रयत्न कर रहे हैं इसलिये मुझे इस आंदोलन में दिलचस्पी है। आचार्य श्री का यह काम बड़ा सुन्दर है। मैं तो चाहता था कि यहाँ भी यह कार्यक्रम चले उपस्थित रहूँ। पर एसा कर नहीं सका दूसरा कार्य भार जो है। जल के भाइयों से मैं कहना चाहूँगा कि वे जल से निकलें तो कुछ सोच कर निकलें। बुराइयाँ नहीं भलाइयाँ और चरित्र की बातें।

नैतिक दिशा

राजस्थान के पुनर्वास मंत्री श्री अमृतलाल यादव ने अपने भाषण में कहा—"जिन कैदी भाइयों ने खड़े होकर आचार्य श्री के समक्ष प्रतिज्ञायें ली हैं, वे अपने मन में निश्चय कर लें—उसके अनुरूप उन्हें अपने आप को तैयार करना होगा। जीवन के आध्यात्मिक और नैतिक पहलुओं पर जैसा कि आचार्य श्री ने बताया वे अमल करें और अपने भावी जीवन में क्रियात्मक रूप से ईमानदारी, सचाई आदि अपनायें। अणुव्रत आंदोलन वह आंदोलन है, जिसने दलित शोषित और पीड़ित—सबको—मानव-मात्र को एक नैतिक दिशा प्रदान की है। आचार्य श्री तुलसी का यह गौरवशाली कदम है।

छठा दिन

महिलाओं का दायित्व

१८ दिसम्बर १६५६ को 'दीवान हाल' मे दिल्ली प्रदेश कांग्रेस महिला समाज की ओर से महिलाओं मे आचार्य श्री का प्रवचन हुआ। दिल्ली की अनेक कार्यकर्त्रियों के अलावा कांग्रेस अध्यक्ष श्री ढेबर भाई भी प्रमुख वक्ता के रूप में उपस्थित थे। हाल खचाखच भरा था। दिल्ली प्रदेश कांग्रेस महिला समाज की संयोजिका श्रीमती सुशीला मोहन ने आचार्य श्री के स्वागत मे भाषण दिया।

आचार्य श्री ने अपना प्रवचन प्रारम्भ करते हुए कहा—"आज सप्ताह के छठे दिन का कार्यक्रम है। उसका उद्देश्य यही है कि आज जो देश का चारित्रिक वातावरण गन्दा हो गया है, शुद्ध किया जाय। जब तक देश का चरित्र ऊंचा नहीं होगा तब तक सारी विकास योजनाएं बे-बुनियाद होंगी। इसीलिए हमने सोचा कि हमें देश में चरित्र का वातावरण बनाना चाहिए। वैसे तो जिम्मेवार व्यक्ति इस विषय में सोचते ही हैं क्योंकि देश की बागडोर चिन्तक व्यक्तियों के हाथ में है। पर हमारी भी कुछ जिम्मेदारी है और इसलिए हमने सोचा--यह आंदोलन अब की बार राजधानी में भी विशेष रूप से चलना चाहिए। इसलिए हम राजस्थान से चलकर अभी अभी यहां आये और देश के विशिष्ट व्यक्तियों से विचार विमर्श किया। इसी का यह परिणाम है कि हम जन-जन में नैतिक जागृति लाने की कोशिश कर रहे हैं।

हम हरिजनों मे गये। हम जेल वासी बन्दियों के बीच भी गये।

हमे खशी है कि यहाँ पर अनको बंदियो ने अपने अपराध स्वीकार किये और फिर से अपराध न करने की प्रतिज्ञा की। यहाँ पर मैंने एक बात कही थी—आज अपराधी कौन नहीं है। सारा ससार मझ तो अपराधी ही दीखता है ये बचारे अपराध करते देख लिए गये। अत जल मे डाल दिये गये। उनका सुधार भी आवश्यक है।

बहिनों से मैं कहूगा—आपका सुधार बडा महत्व रखता है। एक बहिन क सुधार होन का मतलब है, एक परिवार का सुधार, अत आपको देश के नतिक पतन से लडन क लिये तयार रहना चाहिये। आप यह कहना छोड दें कि हम क्या कर सकती हैं। आप तो बहुत कुछ कर सकती हैं। कई भाई व्यापार म अनतिकता करते हैं। उनसे पूछा गया—आप अनतिकता क्यों करते हैं ? तब उन्होंने कहा—हम क्या करें ? हमें औरतें तग करती हैं। उन्हें हमेशा नई फशन चाहिये। नये जेवर और नये कपडे चाहिये। इसीलिये हमे अनतिकता बरतनी पडती है उनका यह उत्तर सही हो, यह मैं नहीं मानता। पर आज हमें उन्हें नहीं देखना है। मैंन 'सप्रू हाउस' मे कहा था—आज आलोचना का युग है। हर एक दूसरे की आलोचना करने को तयार है। जनता सरकार की आलोचना करती है। पर ज्यादातर वही लोग सरकार को कोसते हैं जो स्वय रिश्वत देते हैं। इसी प्रकार सरकारी लोग जनता की आलोचना करते हैं। अध्यापक छात्रों की आलोचना करते हैं और छात्र अपने अध्यापकों की। पर अपनी आलोचना कोई नहीं करता। सब दूसरों की आलोचना करते हैं। अगर अपनी आलोचना करें तो देश सुन्दर हो जाय। आज दूरबीन बनन की आवश्यकता नहीं है, आइना बनने की आवश्यकता है। दूरबीन दूर की चीजें देखती है आइना नजदीक की। आज अपन आपको नजदीक से देखन की आवश्यकता है।

कई लोग कहते हैं—इस प्रकार व्यक्ति-व्यक्ति के सुधार से सारा ससार कब तक सुधरेगा ? पर आप बताइये कि इसके सिवाय का और माग ही क्या है ?

आज लाखों आदमी एक साथ धर्म परिवर्तन कर रहे हैं। पर मेरा इसमें विश्वास नहीं। धर्म-परिवर्तन इस प्रकार कभी सम्भव नहीं होता। एक एक व्यक्ति जब धर्म के महत्व को समझेगा, तब ही वास्तविक सुधार सम्भव है। एक एक व्यक्ति से समाज का सुधार होगा और फिर एक एक समाज से एक देश का सुधार होगा और फिर सारे राष्ट्र का। क्रान्ति की यह प्रक्रिया है। मकान की एक एक ईंट सही होगी तो मकान पक्का बनेगा। अगर ईंट ही कमजोर होगी तो मकान पक्का कैसे बनने वाला है। इसी प्रकार यदि राष्ट्र का व्यक्ति व्यक्ति चरित्रवान होगा तो राष्ट्र अवश्य उन्नत होगा।

अगर आज बहनें यह सकल्प करलें कि हम फैशन नहीं चाहिये हमारे लिये जनता का शोषण नहीं होना चाहिये, तो मैं समझता हूँ, यह बहुत बड़ी क्रान्ति होगी

दूसरी बात यह है कि बहनें अपने आप में हीनता का अनुभव करती हैं यह क्यों ? आप तो महापुरुषों की माताएं हैं। तब फिर आप में यह कायरता क्यों। बहनें तो पुरुषों से कई बातों में आगे हैं। भारत में चरित्र का स्थान पुरुषों से बहनों का ऊंचा है। तब फिर अपने आपको हीन मानना, क्या अपराध नहीं है ?

मैं बहुधा बहनों से यह सुनता हू कि उनका आदर नहीं होता। पर मैं आप से एक बात कहूँ कि आपके पुत्री हो जाये तो आपके मन में कितनी हीन भावना पैदा होती है। राजस्थान में एक कुप्रथा है कि लड़का पैदा होता है तो उसकी खुशी में थाली बजाई जाती है और लड़की पैदा होती है तो छाज पीटा जाता है। कहा जाता है—यह पत्थर कहाँ से आगया। और भी कितने हीन भाव मन में आते होंगे। तो फिर सोचिये आपके मन में ही यदि लड़की के प्रति हीन भावना है तो पुरुषों के मन तो उच्च भावना होगी ही कैसे ? अतः आप को स्वयं अपने मन से यह दुर्भावना निकाल देनी चाहिये। मैं समझ नहीं पाया, जबकि दोनों ही सृष्टि के अंग है, तो फिर उनमें यह भेदभाव क्यों ?

तीसरी बात है—आप सोचती हैं कि हमारा उत्थान पुरुष करेंगे। पर यह बात निराधार है। अपना उत्थान व्यक्ति स्वयं करता जाता है। कोई किसी का उत्थान नहीं कर सकता। उत्थान आखिर है क्या? अपनी कमियों को दूर किया कि उत्थान हुआ। हमें प्रगति नहीं करनी है। बल्कि अपनी दुर्गति को हटा देना है। यही वास्तव में प्रगति है और यह किसी दूसरे से होने वाली नहीं है।

रामायण में सीता जी के लिए कितना सुन्दर उदाहरण है। अरण्य में छोड़ देने के बाद राम स्वयं सीता को याद करते हैं। वहाँ कितना सुन्दर चित्रण किया जाता है —

मन्त्री देव मन्त्रीत्व सुकाम समारण दासी

राम कहते हैं—समाट् होने के लिए सीता मेरे मन्त्री का काम करती था। जब कभी उससे सलाह लेने का काम पड़ता वह कितनी सुन्दर सलाह देता थी। पर वही सीता घर का काम करने के लिये दासी थी। आज स्त्रियाँ सोचती हैं कि घर का काम करना तो उनका है ही नहीं। कई बार हमारी ये बहनें कहती हैं—महाराज सेवा करने का इच्छा तो थी। पर करें क्या, साथ में कोई औरत नहीं है। इस प्रसंग पर मुझे यह कथा याद आती है—

'एक व्यक्ति एक सेठ जी के पास गया और कहा—मुझे अमुक चीज चाहिये। सेठ जी ने कहा—हाँ भाई वह चीज तो है पर देने वाला कोई आदमी नहीं है। वह हँसा और कहने लगा—मैं तो आपको आदमी ही समझता था। व्यंग को सेठ जी समझ गये।

इसी प्रकार हमारी बहनें कहती हैं—उनके साथ काम काज करने के लिये कोई औरत नहीं है। तो मैं समझ नहीं पाया कि आप औरत हैं या और कोई। अतः जब तक बहनों में स्वावलम्बन नहीं आएगा, तब तक वे वास्तविक उन्नति नहीं कर सकेंगी।

इसी प्रकार दहेज-प्रथा के बारे में भी मैं यह कहूँगा कि क्या यह नारी जाति के लिये पैसे पसों से भर

बकरियां की तरह म। रतो को खरीदना और बचना क्या नम की बात नहीं है। आप कहेंगी हम क्या करें, पुरुषों का दिमाग ही ऐसा है। बात ठाक है। पर एक बात तो आप कर सकती हैं—अपन पुत्रों की नादी म स्वय तो कुछ न लें। अगर आप इतना भी कर सकीं तो नतिक क्रांति में आप बड़ा भारी काम कर सकेंगी।

आप मेरी भावना को समझें और तदनुकूल जीवन बिताने का प्रयास करें।'

आज के मानव का मूल्य

कांग्रेस क अध्यक्ष श्री ढेबर भाई न कहा— हम सबने महाराज श्री का प्रवचन सुना। शब्द त सब ही बोलते हैं। पर कितनक शब्दों का बल दूसरा ही होता है। और सचमुच ही आचाय श्री न जो बातें कहीं वे बड़ी वन वाली बातें हैं। अणुव्रत की बात उनके लिये नई नहीं है। फिर भी वे हमारे बीच आये। इसलिये नहीं कि यहाँ आपसे उन्हें कोई स्वाथ साधना है या इसलिये नहीं कि आपको अपना शिष्य बनाना है पर वे हमारी हालत देखकर अनुकम्पा से प्रेरित होकर ही यहाँ आये हैं।

मनुष्य ईश्वर की सबसे बड़ी कृति है। पर मनुष्य ने अपनी जाति को बिगाड़ने की जितनी हरकतें की हैं, उतनी शायद किसी ने नहीं कीं। गाय बल पत्थर, पक्ष कोई भी अपने धम को नहीं भूले, पर मनुष्य सब कुछ भूलकर आज कहाँ पहुच गया है? वह मनुष्य जो अपने हाथ से सीना निकालता था आज सोन का गुलाम बन गया है। वह मनुष्य जो अपने हाथ से समृद्धि पदा करता था आज समृद्धि का गुलाम बन गया है। वह मनुष्य जो अपने हाथों से अपने पुरुषाय से ससार को बनाता है वही आज ससार का गुलाम बन गया है एसे तो मनुष्य जीवन अमूल्य है पर आज वह सबसे सस्ती चीज समझा जाता है।

आज मनुष्य का मूल्य बदल गया है। मूल्यांकन की दृष्टि बदल गई

किन्तु सबसे बड़ा पाप है अपने आप को धोखा देना। व्यक्ति दूसरों का बुरा करता है पर यह नहीं सोचता कि सबसे ज्यादा बुरा स्वयं का होता है। बुरे व्यक्ति से समाज बुरा बनता है बुरे समाज से राष्ट्र बुरा बनता है और बुरे राष्ट्र का प्रभाव अनेक राष्ट्रों पर पड़ता है। इसीलिए स्वयं को धोखा देने से बचना चाहिए। भरत तप प्रवचन में कहा था—

> धोखा दो और लय को, समाज को धोखा न दो।
> नरक बहनी श्रीर करनी देख से आग बढ़ो॥
> व्यक्ति जाति व संघ का इससे सदा कल्याण है॥

जब तक कथनी और करनी में समानता नहीं आती तब तक पवित्रता नहीं आती।

यह नारकीय जीवन है जिसमें मन-वाणी और काया का सामञ्जस्य नहीं आत्मविश्वास नहीं, इसानियत या मानवता नहीं।

यह स्वर्गीय जीवन है जिसमें सत्य, अहिंसा व प्रेम भरा हुआ है जिसमें आत्म सम्मान है आत्म निष्ठा है।

आज मनुष्य की निष्ठा पैसे में है। वह सुख-सुविधा व विलास चाहता है। विलास पैसे के बिना नहीं आता। पैसों का ढेर शोषण के बिना नहीं होता। इसलिए अपनी विलास की अभिलाषा को तृप्त करने के लिए शोषण भी करता है। कभी-कभी अपनी मानवता को भी बेच देता है। उसे पैसा चाहिए, वह कैसे भी क्यों न मिले वह यह नहीं सोचता। उसका ध्यान पैसे पर केन्द्रित है। इसी को बनाये रखने के लिये वह ज्यादा व्यावहारिक बनता है। अपनी सभ्यता को अपमान में कभी नहीं हिचकता। यहीं से बुराई का चक्र घूमने लगता है। घूमते-घूमते जब वह व्यक्तियों को ओछाशय बना देता है तब व्रतों की बात याद आती है। उसके चिन्तन के प्रकार में एक मोड़ आता है और वह भोग से त्याग की ओर मुड़ता है। महाव्रतों को वह अपना नहीं सकता। अणुव्रतों की ओर गति करता है।

अतिभोग विनाश का कारण है और अति त्याग (महाव्रत) व्यापक

नहीं हो सकते। अणुव्रत बीच का मार्ग है मध्यम प्रतिपदा है। व छोटे-छोटे व्रत व्यापक बन सकते हैं। साधारण से साधारण व्यक्ति भी इन्हें अपना सकता है।

विशिष्ट अणुव्रती किसी भी कर की चोरी नहीं करता। राज्य निषिद्ध वस्तुओं का व्यापार नहीं करता। कट-तोल-माप नहीं करता, जीवन को आडम्बर युक्त नहीं कर सकता। इस प्रकार जीवन का प्रत्येक क्षेत्र पवित्र बनता चला जाता है और जीवन सुखी व भारमुक्त हो जाता है।

मैं आपसे अनुरोध करूंगा कि आप अणुव्रतों को समझें। प्रवेशक अणुव्रती, अणुव्रती या विशिष्ट अणुव्रती इन तीनों म से किसी भी श्रेणी में अपनी शक्ति के अनुसार सहयोग दें। व्रतों से घबराएँ नहीं।

प्रश्नोत्तरों का भी कार्यक्रम रहा। व्रतों का वाचन हुआ। बिक्रय कर कार्यालय म प्रवचन कर आचार्य श्री मित्रों पधारे। उस समय राजस्थान के राज्यपाल सरदार गुरमुख निहालसिंह दर्शनार्थ आये। लगभग २० मिनट तक बातचीत हुई। उन्होंने कहा—अब मैं आपके राजस्थान में आ गया हूं। यदि सभव हुआ तो मर्यादा महोत्सव पर सरदार शहर आ सकूंगा।

आत्मतत्त्व का बोध

१६ दिसम्बर १६५६ की अपराह्न में दूसरा कार्यक्रम वकील-संघ की ओर से आयोजित किया गया।

सर्व प्रथम मुनि श्री नगराज जी ने परिचयात्मक भाषण दिया। वकील-संघ के अध्यक्ष श्री राधलाल अग्रवाल ने स्वागत भाषण दिया। तदनन्तर आचार्य श्री ने प्रवचन आरम्भ करते हुए कहा—"आज सप्ताह का अंतिम दिन है। जहाँ पिछले दिनों विद्यार्थियों अध्यापकों हरिजनों तथा अन्यान्य वर्गीय लोगों के बीच इस नैतिक निर्माणकारी आंदोलन का कार्यक्रम चला, वहाँ आज विशिष्ट बौद्धिक क्षेत्र के लोग—आप वकीलों, जजों एवं मजिस्ट्रेटों के बीच यह कार्यक्रम रखा गया है, जिसे मैं आवश्यक समझता हूँ।

हम जिस देश में रहते हैं उसे पुण्यभूमि कहा जाता है। आप कहेंगे—क्यों? यहाँ पर सत्य और अहिंसा की जगमगाती ज्योति निरंतर जलती रहती है। दूसरे देशों को इसने सत्य और अहिंसा का पाठ पढ़ाया। यहाँ पर विध्वंसात्मक शस्त्रों का अन्वेषण नहीं हुआ, यहाँ की गवेषणा से आत्म-तत्व प्राप्त हुआ है। पश्चिम में एटमबम और हाईड्रोजन बम का आविष्कार हुआ, वहाँ हमारे ऋषियों ने सत्य और अहिंसा का आविष्कार किया। केवल यह कहने भर के लिए नहीं उन्होंने अपने जीवन में उतारा भी। अतएव यह कहा गया है—

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः ।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ॥

अर्थात संसार के लोगों को नीति और चरित्र की शिक्षा लेनी है तो वह ज्ञानी और सच्चरित्र भारतीय से लें। यही कारण है, भारत ने संसार का आध्यात्मिक और नैतिक नेतृत्व किया था, पर आज

खेद है कि भारत में बाहर से लोग नीति की शिक्षा देने आते हैं। कोई भी आये उसकी हमें शिकायत नहीं। भारतीय संस्कृति ने बन्धु होकर रहने वालों का हमेशा स्वागत किया है। पर वास्तव में जो भारतीय होगा उसके मन में दुःख होगा कि आज भारत की क्या दशा हो गई है ? मैं जानता हूँ कि आज भारत में ऊंची ऊंची शिक्षाएं चल रही हैं पर इसके साथ-साथ यह भी जानता हूँ कि आज भारत में आत्म निरीक्षण की भावना बहुत कम हो गई है। हर कोई दूसरों को बुरा भला कह देगा पर अपना आत्म निरीक्षण करने को कोई तयार नहीं। दर्पण केवल शिरस्फोटन के लिए नहीं है वह देखने के लिए है अपने आपको देखने के लिए है। अतएव भारतीय ऋषियों ने कहा है—

अप्पाचेव दमेयव्वो, अप्पाहु खलु दुद्दमो।
अप्पावता सुही होई अस्सि लोए परत्थए

आत्मा का—अपने आपका ही दमन करना चाहिए। आत्मा निश्चय ही दुर्दमनीय है। जो अपने आप का दमन करता है, अपने आप को संयत बनाता है, वह इस लोक में और परलोक में सुखी होता है।

दूसरों पर अनुशासन करने के लिए सब तयार हैं, पर अपने पर कोई नहीं करता। वह विद्या ही क्या है जिसमें इतना भी ध्यान न आए कि दूसरों को पीड़ा नहीं देनी चाहिए ? भारतीय संस्कृति में कहा है —

"वर मे अप्पादतो, सजमेण तवेण य
माह परेहिं दम्मतो बधणेहिं वहेहि य।
अर्थात अच्छा हो अपने नियमों से हम अपना कंट्रोल करें।
मत ना दूजे बंध बंधन से मानवता की शान हरें॥

बहुत से लोग मौत से घबराते हैं। पांच क्षण के लिए भी दवाइयाँ लेकर जीवन की याचना करते रहते हैं। पर हमारे शास्त्रों में बताया गया है—"मौत से लड़ो" जब तुम और काम करने में समर्थ नहीं रहो, तब अनशन कर अपने शरीर का त्याग करदो।

अणुव्रत का मार्ग

महाव्रत की तो कल्पना ही शायद आप लोगों के लिये मुश्किल हो जायेगी। जीवन भर पैदल चलना, अपना बोझ स्वयं उठाना, चिकित्सा भी डाक्टर से नहीं करवाना नौकर-मजदूर नहीं रखना, भोजन आदि के लिये किसी को तंग नहीं करना बैंगल वन करना रात को कुछ भी नहीं खाना, न कुछ भी पीना। प्राण चले जायें पर प्रण नहीं जाये—यह साधुत्व का आदर्श है। पर अणुव्रत तो मध्यम मार्ग है। उसमें न तो इतना बड़ा त्याग है और न बहुत ज्यादा भोग के लिये छूट ही है। भोगों का नियन्त्रण यथाशक्य करते रहो, यही इसका सन्देश है। इसलिये यह प्रत्येक के लिये ग्रहण करने योग्य है। आप भी इसे ग्रहण कर सकते हैं।

आज लोगों में धर्म से अरुचि हो गई है। विशेषतः शिक्षित वर्ग तो धर्म को अफीम तक कह देते हैं। पर यह निरपेक्षता क्यों हुई? क्योंकि धर्म केवल धर्म स्थानों तक ही रह गया। जीवन-व्यवहार में वह नहीं उतरा। आज भी बाजार और कचहरी में जीवन-व्यवहार से धर्म को भुला दिया जाता है। इसी कारण धर्म बदनाम हो गया। पर वह क्या धर्म जो केवल धर्मस्थानों में ही किया जा सके। उसकी हर क्षेत्र में आवश्यकता है। वकालत में भी ईमानदारी की बड़ी आवश्यकता है। वकालत में निष्ठा यह हो कि वह केवल अपने लाभ के लिये ही नहीं की जाय। इसका अर्थ यह हो कि असलियत बतायें। सच्चे को झूठा और झूठे को सच्चा बताना वकालत नहीं है, धोखा है, हमारे ऐसे वकील अणुव्रती भी हैं जो कभी झूठा मामला नहीं लेते। झूठे गवाह तयार नहीं कराते। आप कहेंगे यह तो मुश्किल है। हमारा वकालत का धंधा ही ऐसा है कि हमें सच झूठ करनी ही पड़ती है। पर यह बात तो सबके लिये बराबर है। एक व्यापारी के लिये भी यही कठिनाई है। वह कहेगा—मिलावट किये बिना काम ही नहीं चलता। इसी

प्रकार की समस्या मिनिस्टरों के भी सामने हो सकती है। यहां, डाक्टर, भी तो यही कहेंगे। परन्तु यह बचाव व्यवधानिक है। अत मैं आपसे भी यही कहूँगा कि जब तक आप नैतिकता के इन स्थूल व्रतों को नहीं अपना लेते तब तक मानवता आपसे बहुत दूर रहेगी। आज हम आत्मा, परमात्मा और पुनर्जन्म की बातों को छोड़कर कम से कम व्यवहार की इन छोटी छोटी बातों पर तो ध्यान दें।

आप पूछेंगे—यह आन्दोलन किसका है ? उत्तर है—सबका है और इसीलिये आपका भी है। यह सब धर्म समन्वय की भावना को लेकर चलता है। अतः किसी धर्म सम्प्रदाय विशेष का नहीं है।

अणुव्रत-आन्दोलन की दृष्टि है—जीवन के मूल्य बदलो। आज तो धन और सत्ता का महत्त्व बढ़ गया है यह गलत बात है। जैसे दवा रोग मिटाने के लिये ही की जाती है उसी प्रकार धन केवल जीवन निर्वाह के लिये है, दूसरों पर प्रतिष्ठा जमाने के लिये नहीं। प्रतिष्ठा और अणुव्रत दोनों एक साथ नहीं चल सकते। अणुव्रतों की दृष्टि से ऊंचा वह है जो चरित्रवान है।

आप कहेंगे—हजारों वर्ष हो गये उपदेश होते आये हैं। भगवान् महावीर आये, बुद्ध आये महात्मा गांधी आये। उन्होंने अपना अपना उपदेश दिया। पर क्या बुराइयाँ समाज से मिट गई ? आपका कहना ठीक है। पर मैं तो कर्मवादी हूं। कर्म को मानता हूं। कितना होता है, इसकी मुझे परवाह नहीं। काम करना हमारा कर्त्तव्य है। जितना भला होता है उतना अच्छा है, उसे बुरा नहीं कहा जा सकता।

हम भी अपनी क्षमता के अनुसार काम करते हैं। विश्व कवि टगोर ने एक जगह कहा है—

"सूर्य छिपने लगा, अंधेरा होने लगा। सूर्य बोला—मैं तो चला जा रहा हूं। पीछे से अंधेरा न हो जाय, कौन प्रकाश करेगा ? टिमटिमाते दीपक ने कहा—मैं जो हूं, अपनी शक्ति के अनुसार प्रकाश करूंगा।"

उसी प्रकार अपनी शक्ति के अनुसार हम काम करते हैं। हाँ,

आपका सहयोग अपेक्षित है। अकेला मैं क्या कर सकता हूँ। श्री नेहरूजी से भी मैंने कहा—क्या आपका सहयोग इसमें अपेक्षित नहीं है ?

उन्होंने पूछा—कैसा सहयोग ?

मैंने कहा—हम राजनैतिक सहयोग नहीं चाहते।

उन्होंने कहा—मैं तो राजनीति में रचा-पचा व्यक्ति हूँ। मेरा सहयोग आपके क्या काम आयेगा ?

मैंने कहा—पर मैं तो राजनैतिक जवाहरलाल का सहयोग नहीं चाहता मैं तो व्यक्ति जवाहरलाल का सहयोग चाहता हूँ।

उन्होंने कहा—वह सहयोग तो है ही।

मैं इस भावना को शुभ सूचक मानता हूँ। अतः इसी प्रकार आप लोगों से भी कहूँगा कि आप अपना सहयोग हमें दें।

उपस्थित वकीलों की संख्या १२५ १५० थी। और भी जज, मजिस्ट्रेट व अनेक सम्भ्रान्त नागरिक उपस्थित थे। प्रवचनोपरान्त प्रश्नोत्तर भी हुये। सभी ने पूरा पूरा रस लिया।

प्रश्नोत्तर

प्र० हम काम करते हैं यह करने वाला कौन है ?

उ० आत्मा। दूसरे शब्दों में जो अहं का बोध करता है, वही तत्त्व काम भी करता है।

प्र० क्या अहंकार आत्मगुण है ?

उ० नहीं वह आत्मा की दुष्प्रवृत्ति है,

प्र० शरीर में आत्मा का वास कहाँ है ?

उ० सारे ही शरीर में। जिस प्रकार तिलों में तेल सभी जगह व्याप्त रहता है, उसी प्रकार आत्मा भी सारे शरीर में व्याप्त है।

प्र० आत्मा क्या है ?

उ० चैतन्य गुण युक्त पदार्थ आत्मा है।

प्र० "मैं यह कहता हूँ"— यह जो हमें बोध होता है क्या यही आत्मा है ?

उ० हाँ, यह आत्मा का एक गुण है। उसमें और भी अनेक गुण हैं जैसे श्रवण दर्शन आदि।

प्र० कर्म करने में आत्मा स्वतंत्र है या परतंत्र ?

उ० स्वतंत्र भी है और परतंत्र भी।

प्र० आप अहिंसा का प्रचार करते हैं। पर कमजोरों में उसके प्रचार की क्या आवश्यकता है ? अहिंसा के कारण ही तो भारत गुलाम हुआ था और आज भी वह पूरा सशक्त नहीं है। अतः पहले भारत को बलवान होने दीजिये फिर अहिंसा का प्रचार कीजिये।

उ० मैं कायरता को अहिंसा नहीं मानता। डर कर छुपने वाला यदि अपने को अहिंसक कहे तो मैं उसे प्रथम दर्जे की कायरता कहता हूं। और आज अगर हम हिंसा का प्रचार करने लगेंगे तो समूचा संसार क्या जगत नहीं हो जायेगा ? अणुव्रतों का मतलब यह तो नहीं है कि अपनी रक्षा मत करो। उसका मतलब तो है—कम से कम दूसरों पर तो प्रहार मत करो।

प्र० अणुव्रत का अर्थ है—नैतिकता का प्रसार। इस ओर सर्वोदय काम कर ही रहा है तो फिर उसके होते अणुव्रतों की क्या आवश्यकता हुई ?

उ० प्रत्येक आंदोलन की अपनी अपनी सीमायें हुआ करती हैं। अतः अणुव्रत-आंदोलन की भी अपनी स्वतंत्र सीमा है। सर्वोदय केवल नैतिक ही नहीं है वह आर्थिक भी है। पर अणुव्रत विशुद्ध नैतिक ही है। एक डाक्टर सब प्रकार की चिकित्साओं में निपुण है फिर भी स्पेशलिस्ट (विशेषज्ञ) डाक्टरों की आवश्यकता होती है।

प्र० अणुव्रतों में जो बातें बताई गई हैं, वे वेदों उपनिषदों आदि धर्मग्रन्थों में पहले ही बताई हुई हैं तो फिर अणुव्रत की क्या आवश्यकता है ? आवश्यकता तो ऐसे व्यक्तियों की है जो अपने जीवन में इन सब बातों का आचरण कर सकें ?

उ० मैं यह कब कहता हूं कि यह नया है। पुराने शास्त्रों में जो

अच्छी अच्छी बातें हैं, उनका आज के युग की दृष्टि से मैंने चुनाव किया है। वैसे शास्त्रों में है तो सब कुछ, पर लोग आज उसे भूल गये। अतः अणुव्रतों के माध्यम से हम लोगों को उस ओर आकृष्ट करने का प्रयास करते हैं

ऐसे व्यक्ति एक-दो नहीं अनेक हैं जिन्होंने ब्लैक मार्केटिंग के जमाने में भी ब्लैक मार्केट नहीं किया, झूठी मांग नहीं दी। वे सारे अणुव्रती हैं। और आप भी तो बन सकते हैं।

प्र० क्या दिल्ली में भी ऐसे व्यक्ति हैं?

उ० हाँ एक नहीं दस ऐसे व्यक्ति मिलेंगे।

पत्रकारों के लिये इस तथ्य को स्वीकार करने के अलावा कुछ अवशेष था ही नहीं।

कार्यक्रम सानन्द सम्पन्न हुआ।

आयोजन (१५)

आज के व्यापारी

राष्ट्रीय चरित्र निर्माण अणुव्रत सप्ताह के अंतर्गत ता० २० दिसंबर को प्रातः ९ बजे दिल्ली मर्केंटाइल एसोसियेशन की ओर से आचार्य श्री के सान्निध्य में व्यापारी सम्मेलन का आयोजन रखा गया जिसमें दिल्ली तथा अन्यान्य स्थानों के विभिन्न क्षेत्रीय व्यापारी बड़ी संख्या में उपस्थित थे। भारत के वाणिज्य मंत्री श्री मोरारजी देसाई ने प्रमुख वक्ता के रूप में भाग लिया।

आचार्य श्री ने उपस्थित व्यापारियों को संबोधित करते हुए कहा—

स्थिति के लायक बनें वे गुणों से ऊँचे बनें। नतिकता की बुनियाद सचाई है। यह मनुष्य का स्वभाव है। झूठ क्या है, अन्दर से भट मालूम हो जाता है पर उसे हम रोकते जाते हैं। झूठ की आदत पड़ जाती है, सचाई के प्रति निष्ठा कम हो जाती है। हर एक व्यक्ति की उससे (झूठ से) बचने की कोशिश करनी है। अन्याय पेशों की तरह व्यापार भी जीवन चलाने का एक पेशा है और वह एक जरूरी काम है। यदि वह न हो तो लोगों को चीज कसे मिले ? पर वह झूठ के बिना नहीं चल सकता ऐसा कहने वालों को भरोसा नहीं है, धर्म पर, सचाई पर। आज केवल व्यापारी ही नहीं हर एक आदमी चाहता है उसे जीवन के साधन अधिक से अधिक प्राप्त हों—मोटर गाड़ी उसके पास रहे मुलायम कपड़े उसे मिलें, खाना अच्छा मिले, चाहे पचे या नहीं। यह सब इसलिये कि उसका दिमाग कुछ ऐसा बन गया है, वह सुविधा और आराम चाहता है, इसलिये वह पसे के पीछे पड़ा है। पर ध्यान रहे भोग से आत्मा कभी तृप्त नहीं होते उससे तो दुःख बढ़ता है। व्यापारी भाई इतना समझ लें, यदि वे सच का व्यवहार करेंगे तो पसा तो उनको मिलेगा और जीवन भी उनका ऊंचा होगा। यदि सत्य को छोड़ा तो जीवन तो गिरेगा और पसा भी नहीं रहेगा।"

प्रस्तुत आयोजन में पूना के सर्वोदयवादी विचारक श्री रिषभदास रांका ने श्री मोरार जी देसाई के परिचय में भाषण दिया। दिल्ली मर्केंटाइल एसोसियेशन के अध्यक्ष रायसाहिब श्री गुरुप्रसाद कपूर ने समागत अतिथियों का स्वागत किया तथा श्री छगनलाल शास्त्री ने अणुव्रत सप्ताह के कार्यक्रम पर प्रकाश डाला।

दोपहर में दो बजे लक्ष्मी हायर सेकेण्ड्री स्कूल की लगभग ३०० छात्रायें आचार्य श्री का सदेश सुनने को नया बाजार आई। अध्यापिकायें भी साथ थीं।

आचार्य श्री ने उन्हें जीवन उत्थान की प्रेरणा देते हुए बताया कि वे विवेक, विनय और नम्रता जसे सद्गुणों का संचय करें। बाहरी साज

सज्जा और दिखावे में न भूल वे आंतरिक सौंदर्य की साधना करें। आंतरिक सौंदर्य का अर्थ है—संयम, सादगी और सच्चरित्रता।

आयोजन (१६)

चुनावों में चरित्र शुद्धि

आगामी देशव्यापी आम चुनावों में अनैतिक और अनुचित प्रवृत्तियों का समावेश न हो इस सम्बन्ध से आचार्य श्री के सान्निध्य में २२ दिसंबर १९६६ को कांस्टीट्यूशन क्लब, कर्जन रोड, नई दिल्ली में अखिल भारतीय राजनैतिक दलों के नेताओं की एक सभा का आयोजन रखा गया जिसमें चुनाव मुख्यायुक्त श्री सुकुमारसेन कांग्रेस अध्यक्ष श्री यू० एन० ढेबर, साम्यवादी नेता श्री० ए० के० गोपालन, प्रजा समाजवादी नेता आचार्य जे० बी० कृपलानी आदि देश के प्रमुख राजनीतिज्ञ उपस्थित थे।

आचार्य श्री ने अपने सन्देश में कहा— मनुष्य ने जब से संगठित रूप में रहने की सोची किसी व्यक्ति को अपना नायक चुना। उसका सीमित क्षेत्र था कुल या परिवार जिसका नियता कुलकर कहा जाता था। यह व्यवस्था शासन सूत्र में गणतन्त्र के रूप में परिव्याप्त थी। प्राचीन भारत के मल्लि और लिच्छवि गणतन्त्र इसके उदाहरण हैं। समय ने पलटा खाया, जन साधारण से मिलने वाली प्रभुसत्ता का अधिकारी एक व्यक्ति बन बैठा एकतन्त्र बना। जहाँ व्यक्ति एकाकी अपने स्वार्थ और हित साधन में लग जाता है, वहाँ अनहित जाता है। ... इसनी गहरी जड़ जमाई कि राजा

अवतार माना जाने लगा। युग ने करवट ली, भारत में राजतंत्र मिटा, विदेशी हुकूमत हटी स्वतंत्रता आई, जनतांत्रिक आधार पर इसकी शासन व्यवस्था गठित हुई। आप जानते हैं जनतंत्र का आधार है जन जन। उस व्यवस्था का प्रकार चुनाव है। यदि चुनाव में अनैतिकता और अन्याय का समावेश रहे तो उससे फलित होने वाला जनतंत्र शुद्ध नहीं हो सकता। जैसा कि अणुव्रत आन्दोलन का लक्ष्य है—लोक जीवन में नैतिक प्रतिष्ठा और चारित्रिक जागृति लाना, चुनाव कार्य में भी इस शुद्धिमूलक भावना का प्रसार हो एकमात्र इसके लिये हमारा यह प्रयास है। हमारा किसी दल पार्टी व पक्ष से कोई संबंध नहीं है। अध्यात्म प्रेरणा और सत्य निष्ठा जागृत करना हमारा कार्य है।

यह किसी से छिपा नहीं है कि चुनाव कार्य में कितनी अशुद्धि और अनैतिकता घुसी हुई है। दलगत और व्यक्तिगत स्वार्थ से मनुष्य इस कदर घिर जाता है कि वह सत्य, न्याय और जनसेवा से पराङ्मुख होने लगता है। जनतंत्र के मूल आधार चुनावों में से अनैतिकता दूर हो सके, इस दृष्टि से उम्मीदवारों मतदाताओं व समर्थक आदि के लिये कुछ नियम प्रस्तुत करता हूं

उम्मीदवारों के लिये नियम

(१) रुपये-पैसे व अन्य अवैध प्रलोभन देकर मत ग्रहण नहीं करूंगा।

(२) किसी दल व उम्मीदवार के प्रति मिथ्या, अश्लील व भद्दा प्रचार नहीं करूंगा।

(३) धमकी व अन्य हिंसात्मक प्रभाव से किसी को मतदान के लिये प्रभावित नहीं करूंगा।

(४) मत गणना में पर्चियों हेर फेर करवाने का प्रयत्न नहीं करूंगा।

(५) प्रतिपक्षी उम्मीदवार और उसके मतदाताओं को प्रलोभन व

भय आदि दिखा कर तथा शराब आदि पिलाकर तटस्थ करने का प्रयत्न नहीं करूंगा।

(६) दूसरे उम्मीदवार या दल से अर्थ प्राप्त करने के लिये उम्मीदवार नहीं बनूंगा।

(७) सेवा भाव से रहित केवल व्यवसाय बुद्धि से उम्मीदवार नहीं बनूंगा।

(८) अनुचित व अवैध उपायों से पार्टी टिकिट लेने का प्रयत्न नहीं करूंगा।

मतदाता और समर्थक के लिये नियम

(१) रुपये पैसे आदि लेकर या लेने का ठहराव कर मतदान न करूंगा और न करवाऊंगा।

(२) किसी उम्मीदवार या दल को झूठा भरोसा न दूंगा और न दिलवाऊंगा।

(३) जाली नाम से मतदान न करूंगा।

(४) अपने पक्ष या विपक्ष के किसी उम्मीदवार का भद्दा या बुरा असत्य प्रचार न करूंगा और न करवाऊंगा।

राष्ट्र के नेता इन पर विचार करें और इनके व्यापक प्रसार का प्रयास करें।'

चुनाव मुख्यायुक्त द्वारा समर्थन

चुनाव मुख्यायुक्त श्री सुकुमारसेन ने अपने भाषण में कहा—'आचार्य श्री तुलसी ने जैसा अपने भाषण में बताया आज के आयोजन का उद्देश्य है—चुनावों में अपवित्रता न रहे इसका प्रसार करना। मुझे बहुत प्रसन्नता है कि सब राजनैतिक दलों के नेता इसमें सम्मिलित हुये हैं। हमारे देश में विभिन्न हकूमत के समय भी चुनाव होते थे पर तब हमारी हालत मालिकों की नहीं थी। आज हमारी हालत मालिकों की है। हमारे ऊपर भारी जिम्मेवारी है। चुनावों में हमारे देश

के वे आदर्श प्रतिबिम्बित हों, जिन्हें हम सदियों से मानते आ रहे हैं। आचार्य श्री ने जो नैतिकतामूलक नियम प्रस्तुत किये हैं, उन्हें बार-बार दुहराया जाये। जनता के सामने प्रतिज्ञा की जाय ताकि जनता के सान्निध्य में उन में शक्ति पैदा हो। प्रतिज्ञायें तोड़ने के लिये नहीं, पालने के लिए की जाए। जो नियम आचार्य श्री ने रखे हैं मैं उनमें दो बातें और जोड़ने का निवेदन करूंगा।

(१) मतदाता यह प्रतिज्ञा करे कि मैं वोट अपने अन्तरतम की आवाज के अनुसार दूंगा देश के लाभ को सोचते हुये दूंगा।

(२) मैं किसी ऐसे उम्मीदवार को वोट नहीं दूंगा जिसने उम्मीदवार के लिये निर्धारित उक्त नियम नहीं लिये हों।

मैं आशा करूंगा हर पार्टी इन आदर्शों को ध्यान में रखेगी।

श्री ढेबर का कथन

कांग्रेस अध्यक्ष श्री यू० एन० ढेबर ने कहा— मनुष्य की कोई प्रवृत्ति ऐसी न हो, जो उसे गिराने वाली हो। हमारे उद्देश्य भी शुद्ध हों साधन भी शुद्ध हों। शुद्ध उद्देश्य को हासिल करने के लिये अशुद्ध साधन का प्रयोग हुआ तो व्यक्ति को तो नुकसान होता ही है, देश को भी उससे नुकसान होता है। गलत रास्ते से कोई अच्छा काम हो नहीं सकता। यह जरूरी है कि चुनावों में इस ओर पूरा ध्यान रहे। मैं आचार्य श्री को विश्वास दिलाना चाहूंगा कि इस ओर हमारी जो जिम्मेवारी है उस तथा बुनियादी बातों को समझते हुए सहयोग करेंगे।"

साम्यवादी नेता का मत

साम्यवादी नेता श्री ए० के० गोपालन ने अपने भाषण में कहा—"यह अत्यन्त आवश्यक है कि चुनावों में पवित्रता और निष्पक्षता रहे। वहां ऐसा न हो कि चुनावों में वोट पाने की गरज से उम्मीदवार झूठी प्रतिज्ञाएँ को ले लें। जो प्रतिज्ञायें लें वह निभाये भी। रुपयों के लिये वोट देना सचमुच एक कलंक है। ये नियम चुनावों में पवित्रता लाने वाले

है। यदि मैं अपनी पार्टी की ओर से चुनाव लड़ूंगा तो इन नियमों के पालन की प्रतिज्ञा करता हूँ। मेरी पार्टी मे यदि कोई विपरीत बात देख तो मैं कहूँगा—वह हम बताये, हम उसको रोकने का प्रयत्न करेंगे। मेरा एक सुझाव भी है कि जिस तरह उम्मीदवार व मतदाता के लिये प्रतिज्ञायें रखी गई हैं वसे ही चुनाव विभाग के अधिकारियों के लिये भी नियम रख जावें कि वे भी सचाई और नतिकता का व्यवहार रखेंगे।

आचार्य कृपलानी का अभिमत

प्रजा समाजवादी नेता आचार्य ज० बी० कृपलानी ने अपने भाषण में कहा—'जहा उम्मीदवार व मतदाता के लिये नियम रखे गये हैं एक्जीक्यूटिव कमेटी के मेम्बरो के लिये भी नियम रखे जायें, क्योंकि टिकट तो वे ही देने वाले हैं उसी तरह मत्रियो के लिये भी नियम रखे जाने चाहियें कि वे सरकारी साधनो का चुनाव मे उपयोग न करें।

अ० भा० अणुव्रत समिति के मत्री श्री जयचन्दलाल दफ्तरी ने समागत नेताओ एव अन्य महानुभावो के प्रति आभार प्रदर्शन किया। श्री छगनलाल शास्त्री ने आज के कार्यक्रम पर प्रकाश डाला।

चुनाव शुद्धि नियम

चुनाव सबधी नियम परिवर्तन-परिवर्धन आदि के पश्चात निम्नांकित रूप मे देश मे सर्वत्र प्रसारित हुए—

उम्मीदवारों के लिये नियम

(१) रुपये-पैसे व अन्य अवध प्रलोभन देकर मत ग्रहण नहीं करूँगा।

(२) किसी दल व उम्मीदवार के प्रति मिथ्या, अश्लील व भद्दा प्रचार नहीं करूँगा।

(३) धमकी व अन्य हिंसात्मक उपाय से किसी को मतदान के लिये प्रभावित नहीं करूँगा।

(४) मतगणना में पक्षियों हेर-फेर करवाने का प्रयत्न नहीं करूँगा।

(५) प्रतिपक्षी उम्मीदवार और उसके मतदाताओं को प्रलोभन व भय आदि दिखाकर तथा शराब आदि पिलाकर तटस्थ करने का प्रयत्न नहीं करूंगा।

(६) दूसरे उम्मीदवार या दल से अर्थ प्राप्त करने के लिये उम्मीदवार नहीं बनूंगा।

(७) सेवा भाव से रहित केवल व्यवसाय बुद्धि से उम्मीदवार नहीं बनूंगा।

(८) अनुचित व अवैध उपायों से पार्टी टिकिट लेने का प्रयत्न नहीं करूंगा।

(९) अपने अभिकर्ता (एजन्ट), समर्थक और कार्यकर्ता को इन व्रतों की भावनाओं का उल्लंघन करने की अनुमति नहीं दूंगा।

मतदाताओं के लिये नियम

(१) रुपये-पैसे आदि लेकर या लेने का ठहराव कर मतदान नहीं करूँगा।

(२) किसी उम्मीदवार या दल को झूठा भरोसा नहीं दूंगा।

(३) जाली नाम से मतदान नहीं करूंगा।

समर्थकों के लिये नियम

(१) अपने पक्ष या विपक्ष के किसी उम्मीदवार का असत्य प्रचार नहीं करूंगा।

(२) अनैतिक उपक्रमों से दूसरे की सभा को भंग करने का प्रयत्न नहीं करूँगा।

(३) उम्मीदवार संबंधी सारे नियमों का पालन करूंगा।

चुनाव अधिकारियों के लिये नियम

(१) अपने कर्तव्य-पालन में पक्षपात, प्रलोभन व अन्याय को प्रश्रय नहीं दूँगा।

सत्तारूढ उम्मीदवारों के लिये नियम

(१) राजकीय साधनों तथा अधिकारों का अवैध उपयोग नहीं करूंगा।

आयोजन (१७)

संस्कृति का रूप

२८ दिसम्बर १९५६ को सायकालीन प्रार्थना के बाद सामूहिक ध्यान का कार्यक्रम रखा गया था। आचार्य प्रवर ने कहा—"आंख मूंद लेना ही ध्यान नहीं है। ध्यान में आत्म-शोधन के लिए चिन्तन होना चाहिये। प्रत्येक को यह सोचना जरूरी है कि समूचे दिन और रात में किसी के साथ प्रतिकूल व्यवहार तो नहीं किया। यदि भूल हुई है, तो उसका प्रायश्चित्त किया या नहीं। उसके साथ साथ आगे उन भूलों को न दुहराने की प्रतिज्ञा या दृढ़ संकल्प भी करना चाहिये। यही यहाँ अपेक्षित है।"

ध्यान का कार्यक्रम सानन्द सम्पन्न हुआ। साधु सब बैठे ही थे। आचार्य श्री ने कहा—"पाँच मिनट का समय दिया जाता है। सब यह सोचें और मुझे बतायें कि संस्कृति क्या है?" आदेश पाकर सब सोचने लग गये। बारी बारी से एक एक से आचार्य श्री ने पूछना प्रारम्भ किया। तब सब ने अपने अपने विचार बताये। वे संक्षेप में इस प्रकार हैं —

१—जीवन की कला संस्कृति है।
२—जीवन की आन्तरानुभूति संस्कृति है।
३—विशुद्ध आचार परम्परा संस्कृति है।

४—रूढ़िगत परम्पराएं संस्कृति हैं।

५—आत्म शुद्धि के विचार संस्कृति हैं।

जो विद्वान आचार्य श्री से वार्तालाप करने आये थे उन्होंने चर्चा में रस लिया और अपने विचार भी व्यक्त किये। विद्वानों के अनुरोध पर दूसरे दिन भी इस विषय पर चर्चा करने का निश्चय किया गया। दूसरे दिन भी अनेक परिभाषाएं सामने आई। आचार्य प्रवर ने विषय को स्पष्ट करते हुए कहा—'यह विषय बड़ा जटिल है। अनेक परिभाषायें की गई फिर भी समाधान नहीं हो सका। और विचार किया जाना चाहिये।'

आयोजन (१८

कार्यकर्ताओं का दायित्व

आचार्य प्रवर २९ दिसम्बर १९५६ को सब्जीमण्डी से नया बाजार होकर नई दिल्ली पधारे। 'बारा खम्भा रोड' पर विराजना हुआ। दोपहर में श्री एन उपाध्याय आचार्य श्री के दर्शन करने आये।

आचार्य श्री अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के महामन्त्री श्री श्रीमन्नारायण जी अग्रवाल के घर पधारे। वहां उनके साथ अत्यन्त आत्मीयता से बातचीत हुई। चुनाव के विषय मे उन्होंने कहा—'अब की बार कांग्रेस के अधिवेशन पर जिक्र आया तो मैं अवश्य इसकी चर्चा करूंगा। श्रीमती सुचेता कृपलानी भी वहीं आगई। लगभग १ घंटे तक अनेक विषयों पर बातें हुई। उनके आग्रह पर आचार्य श्री ने वहां थोड़ी गोचरी भी की।

ससत् सदस्य श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के घर

श्री श्रीमन्नारायण जी के घर से लौटते वक्त नवीन जी का घर बीच में आ गया। उनके आग्रह पर थोडी देर आचार्य श्री वहाँ भी विराजे। कई प्रश्नोत्तर भी हुए। कविताए भी सुनाई।

उसके बाद 'भारत सेवक समाज' के केन्द्रीय कार्यालय मे उसके कार्यकर्त्ताओं के बीच प्रवचन करने पधारे। मन्त्री श्री धांदीवाला जी ने आचार्य श्री व साथ मे आये साधुओं का हार्दिक स्वागत किया।

भारत सेवक समाज में

भारत सेवक समाज दिल्ली की ओर से दोपहर मे ३ बजे आचार्य श्री के सान्निध्य मे एक सभा का आयोजन रखा गया, जिसमें भारत सेवक समाज के विभिन्न क्षेत्रीय सयोजकों तथा प्रमुख कार्यकर्त्ताओं ने भाग लिया।

प्रारम्भ में श्री छगनलाल शास्त्री ने अणुव्रत आन्दोलन की गतिविधि और चुनावों में अनतिकता निवारण के लिये आचार्य श्री की ओर से प्रस्तुत किये गये कार्यक्रम पर प्रकाश डाला।

पश्चात भारत सेवक समाज के अग्रणी श्री ब्रज कृष्ण धांदीवाला ने कार्यकर्त्ताओं की ओर से आचार्य श्री का स्वागत किया। आचार्य श्री ने कार्यकर्त्ताओं को सम्बोधित करते हुये कहा—

"कार्यकर्त्ताओं पर बहुत बडी जिम्मेदारी है बहुत बडा उद्देश्य उनके सामने है। इसके लिये सबसे पहले उन्हें अपना जीवन बनाना होगा। जब तक जीवन में सत्यनिष्ठा विश्वास, सादगी और सयतवृत्ति नहीं होगी तब तक दूसरो को उनसे क्या प्रेरणा मिल सकेगी ? आरामतलबी और सुविधावाद कार्यकर्ता के मार्ग में अवरोध पैदा करने वाले दुस्तर रोड़े हैं जिनसे कार्यकर्त्ताओं को बचना है। कार्यकर्त्ताओं को यह अच्छी तरह समझ लेना है कि सबसे अधिक महत्वपूर्ण कार्य चरित्रनिर्माण का है। देश के लोगो का चरित्र जब तक समुन्नत नहीं होगा, देश तब तक ऊंचा

नहीं उठ सकता। कितने खेद और आश्चर्य का विषय है, जहां एक ओर बड़ी बड़ी अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझाने मे मानव चिंतित दीखता है दूसरी ओर उसका अपना जीवन किधर जा रहा है, इसका उसे भान तक नहीं। दीपक तले अंधेरा—कैसी विचित्र बात है।

कार्यकर्ताओं से एक विशेष बात मैं और कहना चाहूँगा—पद, प्रतिष्ठा और नाम की भावना उन मे न हो। जहाँ ये भावनाएं आ जाती हैं, वहाँ कार्यकर्ताओं का जीवन सुस्थिर और आदर्श नहीं रह पाता। उसमें गिरावट आ जाती है। कार्यकर्ता उन बुराइयों से बचें।'

आचार्य श्री के प्रवचन के पश्चात श्री व्रजकृष्ण चांदीवाला ने चुनावों में अनैतिकता और अनौचित्य निवारण के लिये आचार्य श्री द्वारा उद्घोषित नियमों को कार्यकर्ताओं का पढ़कर सुनाया और कहा कि "भारत सेवक समाज की ओर से इन नियमों को हम प्रसारित करेंगे। अपनी शाखाओं में इन्हें भेजेंगे, जिससे विभिन्न स्थानों पर लोगों को इनसे अवगत कराया जा सके।'

अन्त में अ० भा० अणुव्रत समिति के मन्त्री श्री जयचंद लाल दफ्तरी ने चरित्र विकास के उदय को लेकर विभिन्न संस्थाओं के कार्यकर्ताओं से पारस्परिक समन्वय से काम करने की अपील की तथा इसके लिये अपने व अपने साथियों के सहयोग की भावना प्रकट की।

मैत्री दिवस का विराट समारोह

विश्वशान्ति की ओर एक ठोस कदम

आचार्य श्री के दिल्ली पधारने का लाभ उठाते हुये जो विविध आयोजन किये गये उनमें सब से अधिक महत्वपूर्ण आयोजन की व्यवस्था राजधानी के प्रमुख सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक स्थल पर की गयी। विश्ववंद्य महात्मा गांधी की समाधि के कारण राजघाट को सहज ही में अन्तर्राष्ट्रीय महत्व प्राप्त हो गया है और देशविदेश से आने वाले प्रायः सभी यात्री तथा राजनीतिज्ञ व कूटनीतिज्ञ उस समाधि के दर्शन करके अपनी पुष्पाञ्जलि अर्पित कर अपने को धन्य मानते हैं। इस पुनीत स्थल पर आज के अन्तर्राष्ट्रीय आयोजन की विशेष व्यवस्था की गयी। यह आयोजन था 'मैत्री दिवस' का जिसका प्रयोजन है वर्ष में एक बार अपनी समस्त ज्ञात अज्ञात भूलों तथा अपराधों के लिये एक दूसरे से क्षमा मांग कर विश्व मैत्री के लिए वातावरण को पवित्र एवं अनुकूल बनाना। सम्भवतः हमारे देश में महात्मा गांधी की हत्या से अधिक बड़ा कोई दूसरा अपराध मानव समाज के प्रति नहीं किया गया है। इसी कारण इस आयोजन की व्यवस्था राजघाट पर गांधी जी की समाधि पर की गयी थी। आचार्य श्री की यह मान्यता है कि इस प्रकार मानव अपनी भूलों एवं अपराधों का परिमार्जन करते हुए विश्वशांति की स्थापना में बहुत बड़ा सहयोग दे सकता है और विश्व की एक महान समस्या के हल करने में अपने कर्तव्य का यत्किञ्चित् पालन कर सकता है। विश्वशान्ति के प्रति उसकी सच्चाई और ईमानदारी का यह एक प्रबल प्रमाण हो सकता है। आचार्य श्री ने राष्ट्रपति, प्रधान मन्त्री तथा अन्य नेताओं एवं विदेशी राजनीतिज्ञों के साथ भी इस

में जो चर्चा वार्ता की थी उसी का परिणाम यह शुभ मंगलमय आयोजन था और राष्ट्रपति ने इसका उद्घाटन करने के लिए अपनी उदार सहमति प्रदान की थी।

३० दिसम्बर १९५६ प्रातः बाराखम्भा रोड से चलकर आचार्य श्री दरियागंज में श्री प्रभुदयाल जी डाबड़ी वालों के मकान पर थोड़ी देर विराजे। वहाँ से महात्मा गांधी की समाधि राजघाट पर पधारे। पिछाड़ी के राजदूत मोंसिय लूगो वालन्टीना ने वहाँ आचार्य श्री के दर्शन किये। उनसे लोगों ने "मैत्री दिवस" के उपलक्ष में बोलने के लिये कहा। वे सहमत न हुए। परन्तु आचार्य श्री से समारोह की पूरी जानकारी पाकर बोलने के लिए सहमत हो गये।

प्रधानमन्त्री श्री नेहरू ने अपने प्राइवेट सेक्रेटरी और कृष्णा बहिन को विशेष रूप से आयोजन में सम्मिलित होने के लिये भेजा था। उन्होंने आचार्य श्री से कुछ बातचीत की। थोड़ी ही देर में राष्ट्रपति जी पधारे। आचार्य श्री व राष्ट्रपति जी साथ-साथ सभास्थल पर आकर विराजे।

करीब ढाई तीन हजार की उपस्थिति थी। अत्यन्त मनोरम वाता वरण में कुछ आप्त वाक्यों का पाठ करने के बाद आचार्य श्री ने अपना स्फूर्तिप्रद भाषण प्रारम्भ किया।

विश्वव्यापी आतंक और उसका उपाय

राष्ट्रपति जी भाइयो और बहिनो!

आज हम सब यहाँ मैत्री दिवस मनाने के लिये एकत्रित हुये हैं। मैत्री की व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं सभी लोग इससे परिचित हैं। मित्र के नाम से ही स्वर कितना प्यार भरा हुआ है और मित्र के साथ बात कर हर मनुष्य जैसे स्वर्गीय सुख का अनुभव करता है वैसा शायद और बातों में कम करता होगा। वास्तव में मैत्री कितनी सुन्दर होती है। पर आज लोग इसे भूलते जा रहे हैं। अतः आवश्यक है कि

हम उन्हें पुन सचेत करें। इसीलिये आज मत्री दिवस समारोह रखा गया है।

आज दुनिया की स्थिति के बारे में कुछ भी कहना आवश्यक नहीं है क्योंकि नये-नये वज्ञानिक साधनों के कारण ससार के एक क्षेत्र की बात दूसरे क्षत्र मे आसानी से अति शीघ्रतया जानी जा सकती है अत सभी लोग स्थिति से परिचित हैं ही।

आज लोगों के दिमाग मे दो बातें है। पहली-अपने जीवन की सुरक्षा का भय और दूसरी भविष्य की आशका। इसी कारण आज मनुष्य आतकित है। राष्ट्रों म भी एक दूसरे के प्रति भय का वातावरण फला हुआ है।

पडित नेहरू के विचारों से हमने जाना कि अन्तर्राष्ट्रीय तनाव अब कुछ कम है। परन्तु स्थिति अब भी विषम बनी हुई है। इसका मूल कारण क्या है? इसका मूल है—भय। भय का भूत जब मनुष्य के सिर पर सवार हो जाता है तो मनुष्य अपने को भूल जाता है। उससे उसमें अविश्वास बढ़ता है। उसी के गर्भ में से शीतयुद्ध पदा होता है और आगे चलकर वह 'गर्म युद्ध' के रूप म परिवर्तित हो जाता है। विचारों का युद्ध साक्षात युद्ध का रूप ले लेता है।

मनुष्य युद्ध के परिणामों से परिचित है। अत वह उससे भयभीत है। कोई यह नहीं चाहता कि युद्ध हो। अत कई लोग इस विषय पर अपनी अपनी दृष्टि से सोचते हैं पर मिलता कुछ नहीं। लोग सही कारण सोच नहीं पाते। इसका कारण भी भय है।

मैंने भी इस पर विचार करने का प्रयास किया है, मुझे तो यही लगा कि उसका मूल कारण केवल भय ही है। शस्त्रास्त्रों की तयारी का मूल कारण भी भय ही है। यदि मनुष्य भयहीन हो तो शस्त्रास्त्रों की तयारी का कोई प्रश्न पदा ही नहीं होता। आज सब लोग शान्ति की बात करते हैं। पर शान्ति की इन बातों मे भी परस्पर कटाक्ष और आक्षेप होते हैं। यह सर्वथा अवाछनीय है। मैंने सोचा—यह क्या है?

में जो चर्चा चला की थी उसी का परिणाम यह शुभ मंगलमय आयोजन था और राष्ट्रपति ने इसका उद्घाटन करने के लिए अपनी उदार सहमति प्रदान की थी।

३० दिसम्बर १६५६ प्रात बाराखम्भा रोड से चलकर आचार्य श्री दरियागंज में श्री प्रभुदयाल जी डाबड़ी वालों के मकान पर थोड़ी देर विराजे। वहां से महात्मा गांधी की समाधि राजघाट पर पधारे। फिलिपाइन के राजदूत मोसिय ह्यूगो वालत्रास ने वहाँ आचार्य श्री के दर्शन किये। उनसे लोगों ने 'मैत्री दिवस' के उपलक्ष्य में बोलने के लिये कहा। वे सहमत न हुए। परन्तु आचार्य श्री से समारोह की पूरी जानकारी पाकर बोलने के लिए सहमत हो गये।

प्रधानमंत्री श्री नेहरू ने अपने प्राइवेट सेक्रेटरी और कृष्णा बहिन को विशेष रूप से आयोजन में सम्मिलित होने के लिये भेजा था। उन्होंने आचार्य श्री से कुछ बातचीत की। थोड़ी ही देर में राष्ट्रपति जी पधारे। आचार्य श्री व राष्ट्रपति जी साथ-साथ सभास्थल पर आकर विराजे।

करीब ढाई तीन हजार की उपस्थिति थी। अत्यन्त मनोरम वातावरण में कुछ मास्त्र वाक्यों का पाठ करने के बाद आचार्य श्री ने अपना स्फूर्तिप्रद भाषण प्रारम्भ किया।

विश्वव्यापी आतंक और उसका उपाय

'राष्ट्रपति जी भाइयो और बहिनों!

आज हम सब यहाँ मैत्री दिवस मनाने के लिये एकत्रित हुये हैं। मैत्री की व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं सभी लोग इससे परिचित हैं। मित्र के नाम में ही स्वयं कितना प्यार भरा हुआ है और मित्र के साथ बात कर हर मनुष्य जैसे स्वर्गीय सुख का अनुभव करता है वैसा शायद और बातों में कम करता होगा। वास्तव में मैत्री कितनी सुन्दर होती है। पर आज लोग इसे भूलते जा रहे हैं। अतः आवश्यक है कि

हम उन्हें पुन: सचेत करें। इसीलिये आज मंत्री दिवस समारोह रखा गया है।

आज दुनिया की स्थिति के बारे में कुछ भी कहना आवश्यक नहीं है क्योंकि नये-नये वैज्ञानिक साधनों के कारण संसार के एक क्षेत्र की बात दूसरे क्षेत्र में आसानी से अति शीघ्रतया जानी जा सकती है अत सभी लोग स्थिति से परिचित हैं ही।

आज लोगों के दिमाग में दो बातें हैं। पहली—अपने जीवन की सुरक्षा का भय और दूसरी भविष्य की आशंका। इसी कारण आज मनुष्य आतंकित है। राष्ट्रों में भी एक दूसरे के प्रति भय का वातावरण फैला हुआ है।

पंडित नेहरू के विचारों से हमने जाना कि अन्तर्राष्ट्रीय तनाव अब कुछ कम है। परन्तु स्थिति अब भी विषम बनी हुई है। इसका मूल कारण क्या है ? इसका मूल है—भय। भय का भूत जब मनुष्य के सिर पर सवार हो जाता है तो मनुष्य अपना को भूल जाता है। उससे उसमें अविश्वास बढ़ता है। उसी के गर्भ में से शीतयुद्ध पैदा होता है और आगे चलकर वह गर्म युद्ध के रूप में परिवर्तित हो जाता है। विचारों का युद्ध शस्त्रास्त्र युद्ध का रूप ले लेता है।

मनुष्य युद्ध के परिणामों से परिचित है। अत वह उससे भयभीत है। कोई यह नहीं चाहता कि युद्ध हो। अत कई लोग इस विषय पर अपनी अपनी दृष्टि से सोचते हैं पर मिलता कुछ नहीं। लोग सही कारण सोच नहीं पाते। इसका कारण भी भय है।

मैंने भी इस पर विचार करने का प्रयास किया है मुझे तो यही लगा कि उसका मूल कारण केवल भय ही है। शस्त्रास्त्रों की तैयारी का मूल कारण भी भय ही है। यदि मनुष्य भयहीन हो तो शस्त्रास्त्रों की तैयारी का कोई प्रश्न पैदा ही नहीं होता। आज सब लोग शांति की बात करते हैं। पर शांति की इन बातों में भी परस्पर अविश्वास और आक्षेप होते हैं। यह सर्वथा अवांछनीय है। मैंने

मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि यह भय संसार में अथवा ग्राम जनता में नहीं है बल्कि कुछ व्यक्तियों में है, जो नेता हैं और जिन पर समाज के नीति निर्धारण अथवा उसके निर्माण की जिम्मेवारी है। ग्राम जनता भय को नहीं जानती। वह अपने वर्तमान सुख पर ज्यादा सोचती है। पर उन मस्तिष्कों के चिन्तन से भय पैदा होता है और बड़े हुये वैज्ञानिक साधना के द्वारा उसका प्रचार होने में देरी नहीं लगती।

भय से भय बढ़ता है, वैर से वैर बढ़ता है। अतः अवैर अहिंसा के द्वारा ही वैर हिंसा खत्म हो सकती है। सत्य और अहिंसा, जो भारतीय संस्कृति का मूल है और कोई भी धर्म जिसके बिना नहीं चल सकता—शांति का रास्ता है। मैं मानता हूं, सब धर्म एक नहीं हो सकते, सब राजनीति भी एक नहीं हो सकती। अतएव पंचशील के सिद्धांत सामने आये और सहअस्तित्व की भावना का उदय हुआ। पर यह सब तभी कामयाब हो सकता है जबकि इसकी नींव में सत्य और अहिंसा हो। जिस प्रकार बिना नींव के मकान नहीं ठहर सकता, उसी प्रकार बिना भूमिका के सहअस्तित्व भी नहीं ठहर सकता। प्रश्न यह हो सकता है कि वह भूमिका क्या है? मेरी सम्मति में यह भूमिका है

सद्‌भावना, सहिष्णुता और समन्वय।

इन तीन बातों के आधार पर अभय की बड़ी इमारत खड़ी की जा सकती है। पर इन्हें भी कैसे पैदा किया जाए। यद्यपि सहिष्णुता से सदभावना, सदभावना से समन्वय और उससे अभय, यह शांति का मार्ग है। इन्हें लाने के लिये और भी बड़े बड़े तरीके हो सकते हैं पर वह सब बड़े आदमियों का काम है। हम अकिंचन और पैदल चलने वाले इसे कैसे सोचें? उन बड़े-बड़े सोचने वाले आदमियों में राष्ट्रपति भी एक हैं जो अभी हमारे बीच में उपस्थित हैं। हमने सोचा—बड़ी बड़ी नहीं छोटी योजना ही अपने हाथ में लें जिससे आज के भय भ्रांत संसार का कुछ पथ प्रदर्शन हो सके। सब घूमने और अनेकों विचारकों से बात करने के बाद आखिर एक रास्ता हमें सूझ पड़ा कि कम से कम हम लोगों में इसके

सम्बन्ध में एक भावना को पैदा करें और उसी भावना को [illegible] सामने रखने के लिये मैत्रीदिवस का आयोजन किया जाय। मैं यह मानता हूँ कि यह कोई रामबाण दवा नहीं है परन्तु एक रास्ता अवश्य है। इसके लिये हम एक दिन तय करें कि जिस दिन मनुष्य कुछ याद करे और कुछ भूले भी। होना तो यह चाहिये कि मनुष्य अपनी प्रतिदिन की दिनचर्या को देखे। जिस प्रकार एक व्यापारी रोज अपना खाता मिलाता है और साधु रोज अपनी आत्मा के लिये प्रतिक्रमण करते हैं उसी प्रकार हर एक अपने प्रतिदिन के जीवन की आलोचना करे। लोगों के लिये कम से कम एक दिन तो ऐसा हो जिस पर वे वर्ष भर में हुई अपनी भूलों की क्षमा दूसरों से मांगें और दूसरों को अपनी ओर से क्षमा करें।

मैत्री बड़े सुख का कारण है पर वह तब तक नहीं हो सकती जब तक कि मनुष्य विगत की अपनी भूलों को भूल जाने के लिये विनम्र और क्षमाशील नहीं हो जाता साथ साथ में दूसरों को स्वयं भूलने का प्रयास नहीं करता।

यह कार्यक्रम ऊपर और नीचे दोनों ओर से होना आवश्यक है। (ऊपर याने बड़े लोगों से और नीचे यानी सामान्य लोगों से) यद्यपि मेरी दृष्टि में मनुष्य ऊंचा और नीचा कोई नहीं होता पर आम दृष्टि से यह दोनों ओर से होना आवश्यक है। ऊंचे लोगों के लिये तो यह और भी जरूरी है क्योंकि ऊपर का पानी स्वतः नीचे आता है। बड़े लोगों में यदि क्षमा की भावना पैदा होगी तो छोटे लोग उनका अनुकरण अवश्य करेंगे। अतः मैं दोनों ही से अनुरोध करूंगा कि वे इस बात पर गहराई से सोचें। इसके लिये तीन बातें जरूरी हैं—

(१) प्रत्येक मनुष्य अपनी ओर से सारे प्राणियों को क्षमा दान करे।

(२) अपनी भूलों के लिये दूसरों से क्षमा याचना करे।

(३) दूसरों की भूलों को स्वयं भूल जाए।

मैं मानता हूँ यह कोई बड़ा कदम नहीं है, एक छोटा सा कदम है।

पर हमें आदि में छोटे काम से शुरु करना चाहिये। आगे चलकर वह स्वयं बड़ा बन जाता है। अतः आज हम इसका प्रयोग करें। यह छोटा प्रारंभ भी आगे बड़ा रूप ले सकता है।

आज के लिये दो बातें

अभी अभी राज्य पुनर्गठन को लेकर देश में जो कटुता फैली वह किसी से छिपी नहीं है। सामने चुनाव का प्रश्न आ रहा है। उसमें भी कटुता की संभावना हो सकती है। अतः भूत और भविष्य के बीच आज हम मैत्री की ऐसी भावना जगायें जिससे एक सुन्दर वातावरण बन जाय।

अणुव्रत आन्दोलन के द्वारा हम जो कुछ कर रहे हैं, उससे इन तीनों बातों के प्रसार का अच्छा मौका मिलता है।'

विश्वमैत्री का महत्व

राष्ट्रपति ने अपने भाषण में कहा—

"आचार्य जी ! भाइयो तथा बहिनो !

सबसे पहले मैं आपको इस मंगल दिवस के आयोजन के लिये बधाई देना चाहता हूं।

मैं मानता हूँ कि हमारे देश में आज अधिक से अधिक जिस चीज की आवश्यकता है वह है मैत्री। अतः उसके लिये जो कुछ भी किया जा सके, वह स्वागत करने योग्य है। मैं सोचता था कि आपके पत्र पत्रिकाओं में जो 'फ्रेटरनिटी' शब्द का प्रयोग हुआ है और दूसरी भाषा में जिसको हमने मैत्री कहा है इसमें कोई भेद है या दोनों एक ही हैं। फ्रेटरनिटी का अर्थ है—भ्रातभाव। वह जन्मजात होता है। क्योंकि एक मनुष्य जन्म से ही दूसरे मनुष्य का भाई है। अतः उनके बीच में जन्म से ही एक दूसरे के साथ भ्रातभाव होना चाहिये और होता भी है। पर हम सोचते हैं कि कई बार भाई भाई में भी इतना वैमनस्य हो जाता है कि उसका कोई ठिकाना नहीं रहता। उनके आपस में मिलने को

मत्रीभाव कहते हैं। अत हम देखते हैं कि मत्रीभाव जन्मजात नहीं होता। उसे स्वेच्छापूर्वक लाया जा सकता है। एक मनुष्य का दूसरे मनुष्य के प्रति एक समाज का दूसरे समाज के प्रति और एक प्राणी का दूसरे प्राणी के प्रति। अत यह भावभाव से ज्यादा है और स्वेच्छापूर्वक होने से जब तक कायम रखना चाहे, रखा जा सकता है। जो इसका जन्म स्वेच्छा से होता है यह हम भी। अतएव यह आवश्यक हो जाता है कि मत्रीभाव को केवल जन्म ही नहीं पोषण भी दिया जाय। इस के लिये निरंतर प्रयत्न और प्रयास किया जाना चाहिये। आज के कार्यक्रम का महत्व स्वयं स्पष्ट है और इसलिये मैंने इसका स्वागत किया। आशा करता हूं कि भविष्य में भी इसे जारी रखा जाए और अधिक बढ़ाया जाये।

भागवत जी ने यह ठीक ही कहा कि मनुष्य अपने हृदय में ही भय को पैदा करता और बढ़ाता है। आज जो शस्त्रास्त्र बनाये जा रहे हैं उनका भी यही कारण है। एक राष्ट्र सोचता है मेरे पास दूसरे से कम शस्त्र हैं। अत वह उनके बढ़ाने के प्रयास में लग जाता है। फिर वह उससे कुछ आगे बढ़ना चाहता है और बढ़ जाता है। इससे एक बात और पैदा होती है कि फिर वह किसी दूसरे को बड़ा देखना नहीं चाहता। इस प्रकार एक दूसरे को दबाने के लिये अनेक राष्ट्र लड़ते हो जाते हैं और अशांति पैदा कर देते हैं। इसी कारण जो प्रयत्न आज चल रहे हैं, उनसे लाभ नहीं होता। हमारे देश में यह कहावत प्रचलित है, कि कीचड़ को कीचड़ से नहीं धोया जा सकता। उसे धोने के लिये तो जल की आवश्यकता होती है। हिंसा को हिंसा से नहीं, अहिंसा से मिटाया जा सकता है। हिंसा को हिंसा से मिटाने की कोशिश की गई तो वह दूसरा कदम भी हिंसा ही हो जाता है। फिर उसे मिटाने के लिये हिंसा की गई तो तीसरा कदम भी हिंसा हो जायगा। इस प्रकार हिंसा का कोई अंत नहीं हो सकता। अगर उसे पहले ही कदम में रोक दिया जाय तो वहीं पर उसकी जड़ खतम हो सकती है। इस प्रकार मत्री भावना हिंसा को

ाड़ से निकाल सकती है। इतिहास में हम इसके एक नहीं, अनेक उदाहरण देख सकते हैं।

उन्नति एक-मुखी नहीं हो सकती। वह चतुमुखी होती है। हमें विद्या और संपत्ति सर्जन मे ही नहीं, भावना मे भी उन्नति करनी चाहिये। आज भारत के लिये एक नवयुग है, क्रांति का युग है, जिसमें हम हर प्रकार की उन्नति करनी है। उसमें हमारी सदभावना सबसे अधिक जरूरी है। उसके बिना और किसी भी प्रकार की उन्नति नहीं हो सकती। विष को बोकर हम उससे विष ही पायेंगे, अत हम उसे जड़ से ही सुधारना है, जिससे आगे हमें सुखद फल मिले।

यह हमारे देश के सौभाग्य के बात है कि धर्माचार्यों के मन में यह भावना पैदा हुई है। सम्प्रदाय से उठकर वे समस्त मानव समाज के लिये काम करते हैं। वसे वे जो कुछ करें सो करें। पर उसकी जड़ में सद्भावना रखें। यदि यह प्रयास सफल हो गया तो सब अन्य प्रयास भी सफल हो जायेंगे।

आपके आंदोलन का मैं हमेशा से समर्थक रहा हूँ और इसके लिये आप अगर मुझे कोई पद देना चाहें, तो मैं समर्थक का पद लेना चाहूंगा।

हमारा पुरानी परंपरा है कि यहाँ देश और विदेश से अनेकों मत धर्म आये। उन्हें देश भर के लोगों न एक करके रखा। भाषा की दृष्टि से भी एक भारत में ही उतनी भाषाएँ बोली जाती हैं जितनी कि सारे यूरोप मे। धर्म के संबंध मे भी संसार मे जितने धर्म हैं उनके अनुयायी लाखों की संख्या म हमारे यहाँ रहत हैं। इसी प्रकार रहन-सहन और पहनावे की दृष्टि से भी अनेक प्रकार के लोग हमारे देश में बसते हैं। इन सबसे मिलकर हमारी संस्कृति बनी है। सहिष्णुता को हमने हमेशा आदर्श माना है, वह केवल प्रसारों मे ही नहीं जीवन में भी। इसी का है कि हमारे देश में जितना वचित्र्य है, उतना और किसी दूसरे । में नहीं है। हिंदुओं की विधि में केवल इतना नहीं है कि उस

किसी विधान विशेष को ही मान्यता दी है। एक प्रांत और एक जाति मे ही नहीं, एक खानदान मे भी अलग अलग रिवाज हैं और हिन्दू विधि ने उन सबको मान्यता दी है। यह सहिष्णुता के बिना कैसे सभव हो सकता था। अतः हमारी यह परपरा आपस में घुल मिल गई है। आज तो इसके बारे में हम जानने की आवश्यकता अनुभव नहीं करते। इसीलिये हमारा ससार के प्रति उत्तरदायित्व अधिक हो जाता है कि हम अपनी भावना सब लोगों में पहुचाए। यह हमारी परपरा के रूप में चली आई है। प्रश्न यह है कि आज हम इसको आधुनिक जामा कैसे पहनाए जिससे मानव समाज इसे समझे और अपनाए।

महात्मा जी ने यही काम किया था। उन्होंने प्राचीन चीजों को नई भाषा में रखा। हम लोगों ने, जो पश्चिमी रग में रग गये थे— उसका महत्व समझा और विदेशों में तो इसमें कई लोग हम से भी अधिक रस लेते हैं। आज उसी बात को जागत करने का आचार्य जी ने प्रयत्न किया है और कर रहे हैं। मैं इस प्रयत्न का स्वागत करता हूँ।

सबोदिन के पीछे उसे परिपुष्ट करने का और भी तौर-तरीका सोचा जाना चाहिये। मझ विश्वास और आशा है कि इस काम में आपन को सभी प्रकार के लोगों की सदभावना मिलगी क्योंकि यह दिल की बात है जो आज कुछ दब गई है पर बहुत जल्दी ही उसका दबा जाना दूर हो सकता है और यह बहुत प्रकाश देगी। अन्त मे मैं यही आशा करता हू कि आपका यह प्रयास सफल हो।'

इसके बाद स्विटजरलैण्ड के राजदूत मोसिय ह्यूगो वालवन्ना तथा रामकृष्ण मिशन दिल्ली के स्वामी रगनाथानद जी ने भी अपने विचार प्रस्तुत किये। अन्त में अणुव्रत समिति के मत्री श्री जयचद लाल दफ्तरी ने सब को धन्यवाद दिया और बड़े ही उल्लासित वातावरण में आयोजन सानन्द सम्पन्न हुआ।

आयोजन सम्पन्न होने के बाद वहां से आचार्य श्री हैदरकुली में लाला द्वारकादास मगलराम के यहाँ पधारे। आहार के बाद कई घरों में

पधारना हुआ। करीबन ५०० सीढ़ियाँ उतरनी चढ़नी पड़ीं। वहाँ से सब्जीमण्डी पधारे।

आयोजन (२०)

संस्कृत गोष्ठी

आचार्य श्री के अभिनन्दन मे तारीख १ जनवरी सन १९५७ को अपराह्न मे दो बजे अखिल भारतीय संस्कृत साहित्य सम्मेलन की ओर से हिन्दी विश्वविद्यालय के संस्कृत विभागाध्यक्ष डा० नरेन्द्र नाथ चौधरी एम० ए० डी० लिट की अध्यक्षता म कठौतिया भवन म एक सभा का आयोजन किया गया, जिसमे दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत प्रोफसरो, संस्कृत विद्यालयों एव पाठशालाओं क पडितों, छात्रों, राजधानी के अन्य विद्वानों, हिन्दी-साहित्यकारो तथा साहित्यानुरागी नागरिकों न भाग लिया।

अ० भा० स० सा० सम्मेलन के मत्री डा० इन्द्रचन्द्र शास्त्री एम० ए०, पी० एच० डी० न सम्मेलन की ओर से आचार्य श्री के सम्मान मे निम्नाकित अभिनन्दन पत्र पढ़ा —

अणुव्रतान्दोलन सम्प्रवर्तकाना विद्यात्याग तपोनिधीना मत्यन्तोदार चेतसा परमपावन जनाचार्यप्रवर पूज्यवर श्री तुलसीदास गणि महा भागाना सेवायां सादर समर्पितम्।

अभिनन्दन पत्रम्

पूज्यचरणा,

सुरसरस्वतीसमाराधन सलग्नचेतसो वयमद्य तत्रभवतां श्रीमता-

ऋषियों का मार्ग

आचार्य प्रवर ने उत्तर में बोलते हुए कहा—

भारतीय संस्कृति में वही मार्ग अनुकरणीय है जिस पर ऋषि चलें, आत्मद्रष्टाओं के पद चिह्न जिस पर पड़े। वह मार्ग है आत्मचेतना और अन्तर जागति का। यह वह सरणि है, जिस पर भारतीय परम्परा का इतिहास अवस्थित है। चाहे कैसा भी युग क्यों न हो, इस मूल परम्परा का सर्वथा विलोप भारतीयों में हो नहीं सकता। उस पर आवरण पड़ सकता है जैसा कि इस समय पड़ रहा है। इसलिए मैं विद्वानों से कहूंगा कि भारत की अन्तर जागतिमयी संस्कृति के परिवर्द्धन और परिपोषण के लिये कृत प्रयत्न होते हुए वे राष्ट्र की अध्यात्म परम्परा को आगे बढ़ाएँ अपना निजी जीवन उस पर ढालें और औरों को भी इस ओर प्रेरित करें। आप लोगों ने मेरा अभिनन्दन किया। आप जानते हैं मैं एक अकिंचन व्यक्ति हूँ पादचारी हूँ, वैभव विलास से सर्वथा शून्य। मेरा कैसा अभिनन्दन है? मैं चाहूंगा कि जन जागति के जो उदात्त विचार मैं देना चाहता हूँ जिनको लेकर मैं चल रहा हूँ, उन्हें आप अपने जीवन में उतारें, औरों तक पहुंचाने में सहयोगी बनें। इसको ही मैं सच्चा अभिनन्दन मानूंगा।

साहित्य गोष्ठी का भी आयोजन किया गया था। मुनि श्री नथमल जी श्री बुद्धमल जी तथा श्री नगराज जी ने उपस्थित विद्वानों द्वारा दिये गये विषयों और समस्याओं पर तत्काल संस्कृत में आशु कविताएँ कीं। मुनि श्री नथमल जी, प० वासुदेव शास्त्री एम० ए० एम० ओ० एल०, प्रो० एम० कृष्णमूर्ति, डा० सत्यव्रत व्याकरणाचार्य एम० ए० डी० लिट श्री छगनपाल शास्त्री काव्यतीर्थ, श्री कृष्णदेव शास्त्री तथा आचार्य श्यामलाल शास्त्री ने संस्कृत में भाषण दिये।

मुनि श्री दुलीचन्द जी, श्री बुद्धमल जी कविनिग्णु तथा बच्चन ने कविता पाठ किया।

साहित्य गोष्ठी

४ जनवरी १९५७ को ६ बजे आचार्य श्री के अभिनन्दन के निमित्त हिन्दी भवन की ओर से १६ बाराखम्भा रोड पर साहित्यकारों एवं कवियों की विशेष गोष्ठी का आयोजन किया गया। जीवन साहित्य के सम्पादक श्री यशपाल जैन ने अभिनन्दन भाषण दिया।

मुनि श्री नथमल जी श्री बुलीचन्द जी, श्री बुद्धमल जी, श्री नगराज जी श्री सागरमल जी श्री रूपचन्द जी श्री मानमल जी श्री मनोहरलाल जी तथा श्री गोपीनाथ जी अमन श्री ललित मोहन जोशी, श्री रमेशचन्द, श्री रामेश्वर प्रशांत आदि कवियों ने अपनी कविताएं प्रस्तुत कीं।

आचार्य प्रवर ने कवियों एवं साहित्यकारों को उनके महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व से अवगत कराते हुए कहा कि—स्वयं अपने जीवन को आत्मनिर्माण में लगाते हुए जन-जन को अन्तर्मुख बनाने में वे अपनी प्रतिभा और कल्पना को संप्रयुक्त करें। अणुव्रत आन्दोलन आत्म निर्माण और अन्तर्मुखता का आन्दोलन है जिस पर उन्हें मनन एवं अनुशीलन करना है।

अन्त में हिन्दी भवन की मंत्रिणी श्रीमती सत्यवती मलिक ने आभार प्रदर्शन करते हुए कहा—

मैं यह नहीं समझती थी कि आपके संत इतनी गंभीर एवं हृदय स्पर्शी कवितायें करते हैं। आपके संघ में साहित्य विकास का जो सर्वतोमुखी प्रयास चल रहा है, वह स्तुत्य है। मैं उससे बहुत प्रभावित हुई।

विदाई समारोह

महत्वशील साधना

७ जनवरी १६५७ को आचार्य श्री दिल्ली से राजस्थान के लिए प्रस्थान करेंगे, इसलिये ६ जनवरी १६५७ को प्रात काल काठोतिया भवन मे सकडो भाई बहिनो की उपस्थिति में विदाई समारोह का आयोजन किया गया। सब क मुख पर खेद मिश्रित प्रसन्नता दौड रही थी। प्रसन्नता इसलिये थी कि आचार्य प्रवर का दिल्ली प्रवास पूर्ण सफल रहा। देश मे ही नहीं विदेशों में भी नैतिक भावना का काफी प्रसार हुआ। खद इसीलिये था कि आचार्य श्री उन्हें छोड चले जा रहे हैं। आचार्य श्री का विदाई सन्देश सुनने के लिये सभी उत्सुक थे। आचार्य श्री ने कहा—

'मैं उस साधक, साधना और प्रगति को अधिक महत्वशील मानता हूँ जो केवल अकेला ही उत्थान-पथ पर न बढ़ता हुआ औरों को भी उस विकास और प्रगति की राह पर बढ़ने की प्रेरणा दे। यही कारण है कि अणुव्रत आंदोलन के रूप मे जन जन के अन्तर जागरण का काम अम लिये मैं पयटन कर रहा हू। मुझे प्रसन्नता है कि आंदोलन की भावना दिल्ली के विभिन्न क्षत्र, वग और समाज के लोगों में व्यापक रूप मे फली। मै मानता हू दिल्ली केवल एक राष्ट्रीय ही नहीं अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र है और मैं यह आवश्यक समझता हू कि एसे क्षत्रों मे इस प्रकार के नैतिनिष्ठ और चरित्र विकास के कायक्रमों का ज्यादा से ज्यादा फलाव हो। मै कहना चाहूगा कि नतिक भावना का दिल्ली मे जो प्रसार हुआ है लोग उसे भूलें नहीं।

सकोण और उच नोच की भावना न राष्ट्र का बहुत बिगाड किया

है। अणुव्रत आंदोलन साम्प्रदायिक मतवाद और जातीय कटता से दूर जीवन आचरण का प्रशस्त पथ है जिस पर मानव मात्र को चलने का अधिकार है। यह धर्म का व्यावहारिक रूप है जिसकी जन जन में महती आवश्यकता है क्योंकि धर्म के ऊँचे सिद्धांत जब तक जीवन में नहीं उतरते तब तक उसका कथन मात्र रहने से कुछ बनने का नहीं है।

यहाँ के कार्यक्रमों को पूर्ण सफल बनाने में यहाँ पर स्थित मुनि श्री नगराज जी, मुनि श्री महेन्द्र जी तथा उनके सहयोगी सन्तों ने बहुत परिश्रम किया बहुत से व्यक्तियों से सम्पर्क साधा और आंदोलन की भावना उन्हें समझाई। साथ-साथ यहाँ के स्थानीय कार्यकर्त्ताओं तथा इस अवसर पर बाहर से आये हुये कार्यकर्त्ताओं ने भी नैतिक भावना के प्रसार में बहुत परिश्रम किया है। इससे दूसरों को भी प्रेरणा लेनी चाहिये। धार्मिक तत्वों का प्रचार करना जीवन का भी ध्येय होना चाहिए।

मुनि श्री नगराज जी और मुनि श्री महेन्द्र जी ने भी इस अवसर पर अपने विचार प्रकट किये। श्री मोहनलाल जी कठोतिया श्री जय चन्दलाल जी दफ्तरी तथा प्रो० एम० कृष्णमूर्ति ने भी अपने श्रद्धा भक्ति सम्पन्न भाव व्यक्त किए।

आयोजन (२१)

पिलानी में संस्कृत साहित्य गोष्ठी

आकाश प्रातःकाल से ही प्रायः मेघाच्छन्न था। रह रह कर बूँदें पड़ रही थीं। आशंका थी कि कहीं आज के कार्य क्रम में विघ्न न आ जाए। आज १८ जनवरी १९५७ का प्रातःकालीन आयोजन बिरला मांटसरी पब्लिक स्कूल में था। उसके बाद वर्षा ज़ोर से पड़ने लगी।

गोचरी भी पूरी तरह से नहीं हो सकी। अत ग्यारह बजे का सप्रू हाउस में प्रवचन का कार्यक्रम स्थगित करना पड़ा। इधर हाल में विद्या विहार के हजारों छात्र इकट्ठे हो गये थे। जब उन्हें पता चला कि आचार्य श्री आज नहीं आ सकेंगे तो उन्हें निराशा हुई। आचार्य श्री के इधर के कार्यक्रमों से व परिचित थे अत प्रवचन सुनने के लिए अति उत्सुक थे। पहले दिन कुहरे के कारण आने में देर हो गई थी। दूसरे दिन वर्षा के कारण प्रवचन नहीं हो सका था। दूसरे कार्यक्रम भी नहीं हो सके थे। लोगों में इतनी उत्कंठा थी कि अगर आचार्य श्री बाहर नहीं आ सकें तो वहीं उनके स्थान पर ही कुछ कार्यक्रम कर लेना चाहिए। किन्तु वह भी नहीं किया जा सका। अत उसी दिन तीसरे पहर चार बजे संस्कृत साहित्य गोष्ठी का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। गोष्ठी में बिरला विद्या विहार के संस्कृत प्राध्यापक, छात्र, वेद वेदांग संस्कृत महाविद्यालय के पंडित छात्र एवं आयुर्वेद कालेज के विद्वान व विद्यार्थी सोत्साह उपस्थित थे।

सर्व प्रथम मुनि श्री बुधीचन्दजी ने सुमधुर स्वर से एक संस्कृत गीतिका का गान किया। पश्चात् श्री छगनलाल शास्त्री काव्यतीर्थ ने आचार्य प्रवर के निर्देशन में साधु साध्वीगण में चल रही संस्कृत साहित्य के बहुमुखी विकास, अनुशीलन साहित्य सृजन आदि विविध प्रवृत्तियों पर प्रकाश डाला। वेद वेदांग संस्कृत महाविद्यालय के प्रधान आचार्य श्री अनन्तदेव शास्त्री व्याकरणाचार्य ने आचार्य प्रवर के अभिनन्दन में भाषण किया। वेदवेदांग संस्कृत महाविद्यालय के एक छात्र श्री रामस्वरूप शर्मा ने संस्कृत प्रसार के विषय में अपने विचार प्रकट किये। मुनि श्री सुखलाल जी ने संस्कृत भाषा की उपयोगिता के बारे में बताया। मुनि श्री नथमल जी तथा मुनि श्री बुद्धमल जी ने तत्क्षण प्रस्तुत विषयों पर आशु कविता की।

मुनि श्री नथमल जी ने अपने भाषण में बताया—आज जो पंडितों और प्रोफेसरों का भेद है वह जब तक नहीं मिट जाता तब तक संस्कृत

भाषा प्रगति नहीं कर सकती। पंडित लोग केवल व्याकरण में उलझे रहते हैं और प्रोफेसर लोग व्याकरण की उपेक्षा कर देते हैं। ये दोनों पक्ष उचित नहीं हैं। व्याकरण ही कोई भाषा नहीं है और व्याकरण की उपेक्षा से भी भाषा नहीं बन सकती। अतः मध्यम मार्ग ऐसा होना चाहिये जिससे यह भेद मिटे और संस्कृत भाषा विकास कर सके। संस्कृत का महत्व केवल इसलिये ही नहीं कि वह लालित्यमयी भाषा है। इसका महत्व इसलिये है कि इसके साहित्य में अध्यात्म अनुभूति उचित मात्रा में प्रस्फुटित हुई है।

मुनि श्री ने अपनी भाव कविता में संस्कृत की गरिमा गाते हुए कहा—आज देवता तो हमारे सामने हैं नहीं जिनसे हम उनकी वाणी को जान सकें और इधर संस्कृत को लोग देव भाषा मानते हैं तो यहाँ मैं "क प्रमाणं मन्ये"—किसको प्रमाण मानूं ?

इतना सुनते ही वहाँ उपस्थित एक संस्कृत पंडित आवेश में आकर बोल उठे—यहाँ आपने प्रमाण शब्द का जो नपुंसक लिंग का है पुल्लिंग रूप विशेषण कैसे कर दिया। मुनि श्री ने उन्हें समझाया कि यह प्रमाण का विशेषण नहीं है। यहाँ मैंने "कं पुरुषं प्रमाणं मन्ये" इस पुरुष शब्द को ध्यान में रखकर ''क'' विशेषण का प्रयोग किया है। पंडित जी विवाद करने पर उतारू हो गये। कहने लगे—बिना विशेष्य के आप ने विशेषण का प्रयोग कैसे किया ? मुनि श्री ने उन्हें समझाया—*ऐसा होता है, यह साहित्य का दोष नहीं है।* वे कहने लगे पद्य में ऐसा नहीं होता। चर्चा में कुछ तनाव पैदा हो गई। पंडित जी ने फिर आवेश में पूछा कि देव कौन होता है ?

मुनि श्री ने कहा—हम तो अपने आगमों पर श्रद्धाशील हैं अतः मानते हैं कि देव भी होते हैं।

उन्होंने कहा—नहीं, यह बात गलत है। देव तो वे ही हैं जो संस्कृत भाषा बोलते हैं। फिर बहस चल पड़ी। उन्हें समझाया गया कि केवल संस्कृत बोलने वाले ही देव नहीं होते। अगर इसी से देव हो जाते

हो तो हम मनुष्य भी देव हो जायेंगे जो सस्कृत बोलते हैं, पर एसा नहीं है। हम मनुष्य हैं, यह स्पष्ट है। मस्कराते हुये आचार्य श्री ने कहा—यदि सस्कृत म बोलनमात्र से ही कोई देव हो जाता हो तब तो विदेशो मे भी अनक लोग सस्कृत बोलते हैं। क्या वे देव हो गए?

अबकी बार पडित जी अचकचाये। कहने लगे—नहीं, देव तो भारतवासी ही हो सकते हैं। वे तो अब म्लच्छ हैं। आचार्य श्री ने कहा तब आप सस्कृत बोलनेम.त्र से किसी को देव कसे मान लते हैं? यदि मानते हैं तो उन्हें भी आप को देव मानना पडेगा। वे कहने लगे—नहीं, वे सस्कृत बोलते तो हैं पर उनका सस्कृत के प्रति अनुराग और विश्वास नहीं है।

आचार्य श्री—नहीं, यह बात गलत है। अनक विदेशी विद्वान सस्कृत से अच्छा अनुराग रखते हैं। यह बात आप कसे कह सकते हैं कि उनको सस्कृत से अनुराग नहीं है। इस बात पर वे टाल मटोल करने लगे। इधर समय भी काफी हो गया था। मेघ आकाश पर अपना गहरा अधिकार जमाये हुए थे। दिन भी छिप चुका था। आचार्य श्री न आज क विषय का उपसहार करते हुए गोष्ठी को समाप्त किया। आचार्य श्री न बहस से कटुता पदा नहीं होने दी।

गोष्ठी के बाद एक सस्कृत प्रोफसर मिलने आये। वे कहने लगे—हम प्रोफसरो और पडितों मे यही तो अन्तर है। एक शब्द के लिए उन्होंने सारा मजा बिगाड दिया। अच्छा प्रकरण चल रहा था। बडा आनन्द आ रहा था। शब्द की गलती भी हो सकती है पर वह तुच्छ है। उसम उलझ जाना उचित नहीं है। पर पडित लोगो की यह प्रवृत्ति रहती है। आपने तो कोई गलती की भी नहीं थी। पर क्या किया जाए? एक ओर से वे सस्कृत विकास की ऊंची ऊंची उडानें भरते हैं और उसके लिये इकट्ठे होते हैं दूसरी ओर आपस मे ऐसी कलह कर लेते हैं। इसी कारण सस्कृत का विकास रुका हुआ है।

प्रवचन

श्रमण संस्कृति का स्वरूप

चेतना के जगत मे हिंसा और अहिंसा का झमेला नहीं है। वहाँ अतर और बाहर का द्वद्व नहीं है। स्वभाव ही सब कुछ है। वहाँ पहुचने पर बाहर का आकर्षण मिट जाता है।

पौद्गलिक जगत मे चेतन और अचेतन का द्वद्व है, इसलिए वहाँ हिंसा भी है और अहिंसा भी है। बाहरी आकर्षण हिंसा को लाता है, उसकी मात्रा बढ़ती है तब उसका निषेध होता है। वह अहिंसा है।

अहिंसा का अर्थ है— बाहरी आकर्षण से मुक्ति। बाहरी पदार्थों के प्रति खिंचाव होता है इसीलिये तो मनुष्य सग्रह करता है। सग्रह के लिये शोषण और युद्ध करता है।

अहिंसा और अध्यात्म को अव्यावहारिक मानने वाले वे ही लोग हैं जो बाहर स अधिक घुल मिल हैं। उनकी दृष्टि से जीवन के स्थूल पहलू ही अधिक मूल्यवान हैं।

बाहरी आकर्षण हिंसा है। बाहर से आसक्ति परिग्रह और उसके समर्थन का आग्रह-एकान्तवाद, कठिनाइयों के मूल ये तीन हैं और सारे दोष इनके पत्र-पुष्प हैं।

आज का विश्व विपदाओं के कगार पर खड़ा है। उसे अशान्ति से उबारने के लिये 'अनेकान्त दृष्टि' सहारा बन सकती है। बाहरी पदार्थों के बिना जीवन नहीं चल सकता। गृहस्थ जीवन में उनकी पूर्ण उपेक्षा नहीं की जा सकती पूरा निषेध नहीं किया जा सकता यह एक सत्य है। किन्तु उनके प्रति जो अत्यधिक झुकाव है वही सारा दुविधाएँ पैदा करता है।

अहिंसा आकर्षण की दूरी से नापी जाती है, वह केवल योग्य वस्तुओं

को दूरी से नहीं नापी जा सकती। मूर्च्छा का ममत्व स्वयं परिग्रह है। वस्तु का संग्रह हो या न हो ममत्व से जुड़ी हुई वस्तुएँ भी परिग्रह हैं।

भगवान महावीर ने कहा— हिंसा और परिग्रह होना सत्य की उपलब्धि में बाधा हैं। इन्हें नहीं त्यागने वाला धार्मिक नहीं बन सकता। दुःख के बाहरी उपचार से दुःख के मूल का विनाश नहीं होता। भगवान ने कहा— धीर! तू दुःख के अग्र और मूल दोनों को उखाड़ फेंक। (अग्रं च मूलं च विगिंच धीरे।)

अतुल और अशांति में दोनों महा भयकारक हैं। (अगाय अपरिनिव्वाणं महब्भय)। इनका प्रवाह कर्म से है। कर्म का प्रवाह मोह में है। प्रिय और अप्रिय पदार्थों में मूढ़ बनने वाला शांति नहीं पा सकता और सुख भी नहीं पा सकता। सुख इन्द्रिय और मन की अनुभूति है। वह प्रियता की कोटि का तत्व है। शांति आत्मा की समवृत्ति है। सुख-दुःख, लाभ-अलाभ जीवन-मृत्यु उत्कर्ष अपकर्ष आदि आदि उतरती-चढ़ती सभी अवस्थाओं मे वृत्तियों का समता जो है वह शांति है।

अप्रिय और प्रतिकूल संयोगों मे भी विचार तरंगों की जो अप्रकम्पना है वह शांति है। आत्म निर्भरता और स्वावलम्बन शांति है। श्रमण संस्कृति का अर्थ है— शांति की संस्कृति। वह सम, शम और श्रम—स्वावलंबन या वैयक्तिकता के आधार पर टिकी हुई है। भगवान ने कहा श्रामण्य का सार उपशम है। उपशम जो है वही श्रामण्य है। उवसमसारं सामण्णं

सम्यक दृष्टि सम्यक ज्ञान और सम्यक चरित्र की आराधना जो है वही जैन धर्म है।

अनेकांत, अनाग्रह और अध्यात्म का जो विचार है वही जैन दर्शन है

अहिंसा, अपरिग्रह और अभय की जो साधना है वही जैन दर्शन का मुक्ति मार्ग है।

विश्व मैत्री का मार्ग यही है। वैयक्तिक दुर्बलताओं को जीते बिना

प्रतिक्रमण के बाद टी० सी० ओ० के एक भागीदार श्री पुष्कर आभा स्नानार्थ आये। आचार्य प्रवर ने उन्हें अणुव्रत आदोलन की जानकारी दी। फिर प्रार्थना के बाद जैन सेमिनार के मध्य में भारत के प्रमुख उद्योगपति श्री साहू शांतिप्रसाद जी जैन आचार्य श्री के दर्शनार्थ आये। उनसे जैन साहित्य और समाज के बारे में काफी चर्चा की।

प्रवचन (२)

धर्म व नीति

दिल्ली में मैं तीन बार आया हूं, पहिले पहल मैं जब आया तब अणुव्रत आदोलन का पहिला वार्षिक अधिवेशन हुआ था। दूसरी बार मैं यहाँ चातुर्मास करने आया और अब तीसरा बार मैं एक बहुत लम्बी यात्रा तय करके आ रहा हूं। दिल्ली मे मेरे न आने पर भी हमारे साधुओं ने यहाँ अच्छा कार्य किया है। विभिन्न कार्यक्रमों से अणुव्रत की जानकारी और निष्ठा भी पैदा हुई है। मैं चाहता हूं, हमारा यह क्रम जारी रहना चाहिए। कई लोग कहते हैं कि साधुओं को इस से क्या मतलब ? उन्हें तो जगल में एकान्तवास और ध्यान करना चाहिए। पर यह सही नहीं है। भगवान महावीर ने कहा है—साधुओं का कार्य है साधना करना। वह जगल मे भी हो सकती है और लोगों के बीच में भी 'साध्यति स्वपरकार्याणीति साधु' साधु वही है जो अपना और दूसरों का भी कार्य साधे। अपना साधु का अपना काम करना भी साधना है और दूसरों के आत्मगुणवर्धक कार्यों में सहायक होना भी साधना है।

शास्त्रों में चार प्रकार के मनुष्य बतलाये गये हैं। एक प्रकार के मनुष्य आत्मानुकम्पी—जो अपनी ही चिंता करने वाले होते हैं। दूसरे

परानुकम्पी—जो दूसरों की ही चिन्ता करने वाले होते हैं। तीसरे उभयानुकम्पी—जो अपनी भी और दूसरों की भी चिन्ता करने वाले होते हैं। चौथे प्रकार के मनुष्य जो न आत्मानुकम्पी हैं न परानुकम्पी—न अपनी ही चिन्ता करते हैं और न पर की ही। इसमें आज के साधु तीसरे प्रकार के होने चाहिए अर्थात वे अपना हित भी साधें और दूसरों का भी। अपनी साधना के साथ साथ वे लोगो मे आकर कुछ काय करें। यह हमारा साधना के सर्वथा अनुकूल है।

आज यह हमारा मुख्य काय है—मानवता हीन मानव समाज मे मानवता की पुन प्रतिष्ठा करना। आज मानव ने सबसे बड़ी चीज जो खोई है, वह है—मानवता। इसलिए आज भी सबसे बड़ी आवश्यकता है कि उसे प्राप्त किया जाय। मुझे आश्चर्य होता है कि आज उन छोटी छोटी बातो के लिए भी हम उपदेश करने पड़ते हैं, जो सहज ही जीवन मे होनी चाहिए। एक मनुष्य दूसरे के साथ विश्वासघात करते नहीं सकुचाता। इससे बढ़कर और क्या पतन होगा। यह वतमान युग का जमाने का रग है। पर हमें निराश होने की आवश्यकता नहीं। हमे कर्तव्य करना है। और उस खोई हुई मानवता को पुन प्राप्त करना है। इसी कारण आज नीति की प्रतिष्ठा करना आवश्यक हो गया है। पर यह अध्यात्म की भूमि के बिना टिक नहीं सकती। बहुत से लोग स्वाथ के लिए नीति का अवलबन करते हैं। पर यह स्थायी नहीं होता। जब तक स्वाथ सिद्ध होता है तब तक नीति का अवलम्बन किया जाता है। और स्वाथ साधना के बन्द होते ही नीति की साधना भी बन्द हो जाती है।

गाधी जी ने एक बार कहा था—अहिंसा मेरा व्यक्तिगत धम है। काग्रेस ने उसे नीति के रूप मे स्वीकार किया है। यह उसका धम नहीं है। इसी का यह परिणाम है कि आज गाधी जी के चले जाने के बाद काग्रेस के वे व्यक्ति जिनसे कुछ आशा थी, अहिंसा को भुला बठे हैं। अगर काग्रेस ने इस को धम के रूप म स्वीकार किया होता तो आज अहिंसा को इस प्रकार भुलाया नहीं जाता। पर वह कवल नीति

सब कुछ अति प्राचीन काल से चला आ रहा है अत व्रत की परम्परा भी पुरानी है। पर आज के युग में जब संसार अणुअस्त्र से भयभीत है, अणुव्रत की अत्यधिक आवश्यकता है। अणुव्रत अभय बनाता है। आप अपने मन से भय को निकाल दें तो संसार में कोई भय है ही नहीं। और यह व्रतों से ही पैदा की जा सकती है।

आज १ दिसम्बर १९५६ को प्रातः काल पंचमी समिति से निवृत्त होकर आचार्य श्री नार्थ एवेन्यू एम० पी० क्लब पधारे। राष्ट्र कवि श्री मैथिलीशरण जी गुप्त श्री सावित्री देवी निगम आदि कई ससंद-सदस्य आचार्य श्री को लेने आये। क्लब में पधारने पर श्री सावित्री देवी निगम ने आचार्य श्री का स्वागत किया और अणुव्रत आन्दोलन की भूरि भूरि प्रशंसा की।

वहाँ उपस्थित संसद-सदस्यों एवं प्रमुख नागरिकों के बीच आचार्य श्री ने मर्मस्पर्शी प्रवचन किया।

प्रवचन के उपरान्त क्लब के मंत्री श्री येशर अय्यंगार ने आचार्य श्री का आभार मानते हुए कहा—आप हमें उपदेश देने पधारे हैं यह आपकी बड़ी कृपा है। बहुत से लोग आपके इस संयम मूलक आन्दोलन को महत्त्व नहीं देते। आज जब मैं राज्यसभा की गैलरी में सदस्यों को आपके कार्यक्रम और अणुव्रत आन्दोलन की जानकारी दे रहा था तो बहुत से सदस्य कहने लगे—भला इस आन्दोलन से क्या होने वाला है। यह तो बालू में तेल निकालने जैसा प्रयास है। आज के युग में संयम के माध्यम से राष्ट्र की समस्याओं को सुलझाना हास्यास्पद प्रतीत होता है। मैंने उन्हें समझाया कि संयम के माध्यम से ही सही हल निकलने वाला है। लोग भले ही आज इसके महत्त्व को न समझें। परन्तु यह बुनियादी काम है जिसका महत्त्व स्वीकार करना ही होगा।

विद्याध्ययन का लक्ष्य

वह ज्ञान अज्ञान है जो जीवन के अन्तरतम को छूता नहीं। वह विद्या अविद्या है जो अन्तवृत्तियों में परिशुद्धि नहीं लाती—ये हमारे भारतीय महर्षियों के वाक्य हैं जिनमें प्रेरणा भरी है ओज भरा है। मैं बहुधा कहा करता हू कि विद्याध्ययन का लक्ष्य जीविकोपार्जन नहीं है। ऋषियों के शब्दों मे सा विद्या या विमुक्तये। उसका लक्ष्य है 'विमुक्ति' बुराइयों से छुटकारा अपने शुद्ध स्वरूप में अवस्थान। पर बड़े खेद का विषय है कि जीवन का यह महान लक्ष्य आज आँखों से ओझल होता जा रहा है। तभी तो किताबी पढ़ाई के लिहाज से शिक्षा का अधिक प्रचार होने के बावजूद भी अ तर चेतना की दृष्टि से उसमें कुछ भी विकास नहीं हो सका है।

हम आये दिन सुनते हैं अमुक स्थान पर विद्यार्थियों न उद्दण्डता की, उच्छृङ्खलता की अनुशासनहीनता बरती। यह सब क्यों सारा वायुमंडल ही कुछ इस प्रकार का बना हुआ है। क्या घर में क्या परिवार के इर्द गिर्द, वे ऐसा ही पाते हैं। आज सपूर्ण वातावरण में एक नया आलोक भरना होगा। विद्यार्थियों को अपने जीवन का सही मूल्य समझना होगा। अभिभावकों और अध्यापकों को भी यह समझना होगा कि विद्यार्थी राष्ट्र की सब से बड़ी सपत्ति हैं। उन्हें अभ्युत्थान और जागृति की ओर ले आना सब का काम है। इसके लिये उन्हें स्वयं को अति जागरूक बनाना होगा।

प्रवचन का उपसहार करते हुए आचार्य प्रवर न
भौतिकवाद सवत्र पाता जा रहा है। हिंसा से
आतुरता मैं प्रवृत्तियाँ पनप रही हैं।

जीवन का महत्व आज बाहरी दिखावे में समाता जा रहा है। यदि अतर जीवन का सच्चा सरक्षण हम चाहते हैं तो इसे रोकना होगा।

इसका सब से अधिक उपयोगी एक यही उपाय है कि बालकों को गहरा अध्यात्म की शिक्षा दी जाय। फलत वे बहिर्दृष्टि नहीं बनेंगे। बहिर्दृष्टि नहीं बनने का अर्थ है—आत्मोन्मुख बनना। जहाँ आत्मोन्मुखता है वहाँ बुराइयाँ नहीं आतीं कालुष्य नहीं पनपता। जीवनवृत्ति परिमार्जित हो इसके लिये मैं विद्यार्थियों साथ-साथ अध्यापकों एव अभिभावकों से भी कहना चाहूँगा कि वे अणुव्रत आंदोलन के नियमों को देखें उन्हें आत्मसात करें। विद्यार्थियों के लिये विशेष रूप में ये पाँच नियम रख गये हैं—

(१) मद्यपान नहीं करना।

(२) धूम्रपान नहीं करना।

(३) किसी भी तोड फोड मूलक हिंसात्मक प्रवृत्ति मे भाग नहीं लेना।

(४) अवधानिक तरीकों से परीक्षा मे उत्तीण होने का प्रयास नहीं करना।

(५) रुपये आदि लेने का ठहराव कर वैवाहिक सबध स्वीकार नहीं करना।

यह प्रवचन ५ दिसम्बर १९५६ को प्रातःकाल नयी दिल्ली की अत्यन्त अनुशासित प्रमुख शिक्षण सस्था माडर्न हायर सेकण्डरी स्कूल मे हुआ। इस विद्यालय म एक हजार स अधिक छात्र छात्रायें पढ़ती हैं।

श्रद्धा व आत्मनिष्ठा

विनिगिच्छा समावण्णेण अप्पाणेण णो लहई समाहिं' संशयशील मनुष्य समाधि शान्ति को प्राप्त नहीं कर सकता। संशयशील को दूसरे शब्दों में हम मिथ्या भी कह सकते हैं। जो श्रद्धाशील होता है उसे संशय नहीं होता। वह सम्यक्त्वी कहलाता है। इसके बीच भी एक अवस्था होती है 'सासादन सम्यक्त्व' पर उसकी स्थिति बहुत थोडी होती है।

प्राणी का स्वभाव है क्रिया करना। अगर क्रिया करेगा तो वह सम्यक् या मिथ्या अवश्य होगी। गीता में भी कहा है—

> अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति।
> नाय लोकोऽस्ति न परो न सुख संशयात्मन ॥ गीता ४ ४०
> अश्रद्धाशील मनुष्य का विनाश हो जाता है।

प्रश्न उठता है आखिर श्रद्धा किसमें रखनी चाहिये। वसे तो भिन्न भिन्न लोग भिन्न भिन्न प्रतीकों म विश्वास करते हैं। कोई प्रतिमा में कोई अग्नि में कोई वृक्ष म कोई आकाश में श्रद्धा करता है। इस प्रकार श्रद्धा क स्थान अनक हो जाते हैं। पर श्रद्धा का आखिर आधार क्या है ? यह सही है कि यह भी श्रद्धा ही है। पर वास्तव मे श्रद्धा का मतलब है आस्तिक्य। यही इसका आधार है। आस्तिक्य यानी आत्मा परमात्मा, देव भगवान और अपन आपका विश्वास। जो व्यक्ति अपन आपको 'मैं हू' यह विश्वास कर लेगा तो वह अपन जस ही दूसरों के आस्तित्व मे भी विश्वास कर लगा। जसा मुझ दुःख होता है वसा औरों को भी होता है यह बात भी उसकी समझ में आ जायगी। अत. वह किसी को भी कष्ट नहीं देगा।

भगवान पर हमारी श्रद्धा होती है, अत हम उनका

हैं। पर उससे हमें क्या मिलने वाला है ? क्या भगवान हमें कुछ देते हैं ? नहीं भगवान न तो हमें कुछ देते हैं और न हम कुछ उनसे पाते हैं। परन्तु उनके गुणों का स्मरण कर हम अपने आपको तदनुकूल बनाने का प्रयत्न करते हैं। उनमें जो गुण हैं, उन्हें हम भी पा सकते हैं। इस प्रकार श्रद्धा के द्वारा हम अपना चौमुखी विकास कर सकते हैं। बहुधा श्रद्धेय का नाम लेकर निकल जाने पर कार्यसिद्धि होती है। इसमें श्रद्धेय की अपेक्षा स्वय की निष्ठा का चमत्कार ही अधिक है।

इसी प्रकार कोई भी आन्दोलन बिना निष्ठा के सफल नहीं हो सकता। भला, जिसमें स्वय की श्रद्धा नहीं उसमें दूसरों की निष्ठा कैसे हो सकती है। अगर आन्दोलन में हमारी निष्ठा हुई तो आज भले ही उसकी आवाज को कोई न सुने पर एक दिन अवश्य हमारी बात सुनी जायगी। भिक्षु स्वामी ने प्रारम्भ में जब तेरापथ की नींव डाली, तब उनके पास कौन सुनने आता था ? वे अपने साधुओं को लेकर बैठ जाते और कहते 'आओ प्रवचन करें'। साधु कहते—महाराज ! आपका प्रवचन सुनने के लिये कोई श्रावक तो है ही नहीं आप किसको सुनायेंगे ? वे कहते, तुम्हें सुनायेंगे। एक बार नहीं, अनेक बार भिक्षु स्वामी ने ऐसा किया था और उसी दृढ़ निष्ठा का फल है कि आज उनकी बात सुनने वाले लोगों की भीड़ नहीं समाती। गांधी जी भी कहा करते थे—'अगर तुम्हारी बात सुनने वाला कोई नहीं है तो तुम जगल में जाकर निष्ठापूर्वक अपनी बात जोर जोर से कहो। वह अवश्य फल लायेगी।'

जब अणुव्रत आन्दोलन शुरू हुआ तो कौन जानता था कि यह इतना व्यापक बन जायगा। इतना ही नहीं, हमारे निकट रहने वाले लोग भी इसकी खिल्लियाँ उड़ाया करते थे। पर हमारी निष्ठा बलवती थी। उसका ही यह परिणाम है कि आन्दोलन प्रतिदिन आगे बढ़ रहा है। यद्यपि मैं यह मानता हूँ कि हमने आज तक जितना किया है, उससे कई गुना ज्यादा और करना है। और इसके लिये मैं कार्यकर्ताओं से कहूंगा कि वे निष्ठापूर्वक काम करते रहें। अगर कार्यकर्ताओं ने निष्ठा

पूर्वक काम किया तो मेरा विश्वास है कि एक दिन ऐसा आयगा, जबकि सारा संसार हमारे काम को देखगा।

आप अपने आपको कभी तुच्छ न समझें। साथ-साथ अभिमान भी न करें। यह कभी न सोचें कि हम क्या कर सकते हैं? हमारी आत्मा में अनन्त शक्ति है, उसे विकसित करते चलें, सब कुछ सम्भव है।

४ दिसम्बर १९५६ को प्रातःकाल ठहरने के स्थान पर यह पहला प्रवचन था।

प्रथम प्रहर में पंचमी से लौटते समय आचार्य प्रवर थोड़ी देर डालमियाँ की कोठी पर ठहरे। श्रीमती दिनेशनन्दिनी डालमियाँ ने श्रद्धापूर्वक सम्मान किया। धर्म प्रचार व प्रसार के विषय में बातचीत हुई। स्थान पर वापस आने के बाद श्रीमती मन्नानमा देवी (धर्मपत्नी श्री श्रीमन्नारायण अग्रवाल) ने थोड़ी देर बातचीत करने के बाद प्रवचन प्रारम्भ हुआ।

प्रवचन के बाद कई व्यक्तियों ने आचार्य श्री से भेंट की। इधर हांसी नगर के कई प्रतिष्ठित व्यक्ति मर्यादा महोत्सव की अर्ज करने श्री चरणों में उपस्थित हुए।

प्रवचन (४)

मानवधर्म

देहली में आये नौ दिन हो जाने के बाद भी इस बस्ती में मैं आज पहली ही बार आया हूँ। यहाँ की खटपट में तो मनुष्य की आवाज ही नहीं सुनाई देती। इसीलिये आप लोग बोलने के लिये भौतिक साधन (साउंड स्पीकर) का उपयोग कर रहे हैं। यदि आप प्रकृति में रहते

तो इन भौतिक साधनों की कोई आवश्यकता नहीं होती। भारतीय संस्कृति में प्राकृतिक जीवन को महत्व दिया जाता रहा है और इसीलिये हमें तो प्रकृति में ही रहना है। अत लाउडस्पीकर का उपयोग नहीं करते। केवल बोलने में ही नहीं, हमारी प्रत्येक प्रवृत्ति में प्रकृति का ही सहारा है और यही तो साधुत्व है। साधुत्व कोई सेब थोड़े ही है। प्रकृति में रहना ही वास्तव में साधना है और इसीलिये भारत में आज भी साधना की आवाज सुनी जाती है। हम अपनी साधना की दो बातें आपको भी सुना दें। साधना से हमें जो फल मिला है, उसे स्वार्थी बनकर अकेले ही नहीं खायें दूसरे लोगों म भी बाँटें।

एक बात मैं आपसे पूछना चाहता हूं—आप जो ससार में आनन्द मान रहे हैं, उसका आधार क्या है ? हो सकता है आपके पास जीवन है पर आप सोचिये इसका क्या भरोसा है। एक कवि ने कहा है—

आयुर्वायुतर तरगतरल लग्नापद सम्पद,
सर्वेऽपीन्द्रिय गोचराश्च चटला सध्याभ्र रागादिवत।
मित्रस्त्रीस्वजनादिसगमसुख स्वप्नेन्द्रजालोपम
तत्किं वस्तु भवे भवे दिह मुदामालम्बन यत् सताम॥

यह आयु तो वायु की चचल लहरों के समान अस्थिर है। देखिये, कल की ही घटना है—एक भाई मेरे पास आता है और कहता है कि डा० अम्बेडकर ने कहा है कि मैं आचार्य श्री से मिलना चाहता हू और आध घन्टे बाद ही दूसरा भाई आता है और कहता है कि डा० अम्बेडकर तो चल बसे। तो इस प्रकार के अस्थिर जीवन का भरोसा कर आप आनन्द मना रहे हैं। इसमें क्या बुद्धिमानी है ? इसी प्रकार जितनी भी धन सम्पत्ति है उसके पीछे विपत्तियाँ लगी हुई हैं। इन्द्रियों के जितने विषय हैं वे भी इन्द्रजाल के समान हैं। इनमें आनन्द मानकर क्या आप सचमुच ही धोखा नहीं खाते हैं ? आप जो ससार में सुख मान रहे हैं, आखिर वह है क्या ? हाँ यदि कोई वास्तविक सुख है तो हमें भी बताइये। हम भी उससे वचित क्यों रहें ? पर हजारों मील घूम आने के बाद और लाखों

के स्तर को ऊंचा उठाने में आपको अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा पर आप उनसे घबरायें नहीं। उसका आनन्द भी अपूर्व होगा। जीने के स्तर और जीवन के स्तर के भेद को आप उदाहरण से समझिये। यह जैन आगमों की घटना है—

इषुकार नामक राजा की रानी अपने महलों के ऊपरी भाग में बैठी हुई थी। उसने देखा—शहर में सब जगह धूल उड़ रही है। पूछने पर पता लगा कि उनके पुरोहित—कुटुम्ब के सारे प्राणी अपनी समग्र धनराशि को छोड़कर दीक्षा लेने जा रहे हैं और राजा उस अपार धनराशि को अपने खजाने में मंगवा रहा है। वह तत्क्षण राजसभा में आई और राजा से कहने लगी—

'वंता सी पुरिसो राय न सो होइ पसंसि आ।
माहणेण परिच्चत्त, धणं आदा उमिच्छसि॥'

राजन् ! वमन को खाने वाला व्यक्ति कभी प्रशंसित नहीं होता। ब्राह्मण (पुरोहित) द्वारा परित्यक्त धन को आप लेना चाहते हैं ?

रानी के इस उद्बोधन से राजा की आंखें खुल गईं। वह धन के द्वारा जीने के स्तर को उन्नत बनाना चाहता था पर रानी ने उसे जीवन के स्तर को ऊंचा उठाने की प्रेरणा दी और आखिर में वह और रानी दोनों ही साधु-जीवन में प्रव्रजित हो गये।

इस प्रकार आप समझ गये होंगे कि मानव धर्म का क्या मतलब होता है। आप अपने जीवन के स्तर को ऊंचा उठायें, यही मानव धर्म है।

६ दिसम्बर १९५६ को प्रातःकाल इस प्रवचन का आयोजन पहाड़गंज में वहाँ के निवासियों के विशेष अनुरोध पर किया गया था। प्रवचन से पहले मुनि श्री बुद्धमल जी और सततसम्प्य बाबा श्री नरहरि विष्णु गाडगील ने भी अपने विचार प्रकट किये।

सच्ची प्रार्थना व उपासना

'परमात्मा की उपासना जीवन का सर्वश्रेष्ठ लक्ष्य है। प्रार्थना, स्वाध्याय, ध्यान चिन्तन आदि आदि उपासना के प्रकार हैं। लोग परमात्मा की उपासना करते हैं आत्म विकास के लिये नहीं, किन्तु भौतिक अभिसिद्धियों के लिये। परमात्मा को वे अपनी इच्छापूर्ति का साधन मानकर उनसे भौतिक सिद्धियाँ चाहते हैं। यह वचना है, ईश्वर के साथ धोखा है। उपासना आत्मिक गुणों को विकसित करने के लिये करनी चाहिये। परमात्मा किसी को दुखी या सुखी नहीं बनाता। हम अपने पुरुषार्थ से ही सब कुछ पाते हैं। पुरुषार्थ से ईश्वर बन सकते हैं यह हमें नहीं भूलना चाहिये।

आज लोग भूत ग्रस्त हैं। कहा भी है— 'चेन प्रतहतो जहाति न भवप्रमानवाय मम' —चित्त में भूत का वास है। लोग स्वतः को भूलकर पीढ़ियों की बातें करते हैं, क्या यह पागलपन नहीं है। आकाश को अपने बाहों में पकड़ने का प्रयास करना बचपन नहीं तो क्या है? अपने हितों को गौणकर पीढ़ियों के हितों की बातें सोचना भूल है।

एक दिन एक योगी बादशाह सिकन्दर के पास आये। सिकन्दर ने उसका यथोचित सम्मान किया। योगी ने पूछा—राजन! तुम क्या करना चाहते हो?

सिकन्दर ने कहा—मैं एक एक कर सारे देशों को जीतूंगा। विश्व में अपना साम्राज्य कायम करूंगा। धन-कुबेर बन कर मैं विश्व की समस्त सुख-सुविधाओं के बीच जीवन के प्रत्येक क्षण को अपूर्व आनन्द से व्यतीत करूंगा। इतना कर लेने के बाद राज्य के झंझटों से छूट कर आराम करूंगा

यह सुन योगी कुछ मुस्कराया । मुस्कराहट में छिपे रहस्य को सिकन्दर समझ न सका । उसने पूछा—योगिराज ! क्या मेरी बातों से आपको आश्चर्य हुआ है ? आप जानते हैं—बादशाह सिकन्दर जो कहता है उसे पूरा भी करता है। मेरे भाग्य ने मुझे साथ दिया है । मैं जो चाहता हूं वही होता है । आप अपनी मुस्कराहट का रहस्य मुझे समझायें ।

योगी ने कहा—मैं जानता हूं आप अपनी महत्वाकांक्षाओं को पूर्ण करने में समर्थ हैं, पर आपकी नादानी पर मुझे हँसी आती है कि जो कार्य आप बाद में करना चाहते हैं वह अभी क्यों नहीं कर लेते । रहस्य सम्राट की समझ में आ गया ।

वर्तमान में लोगों की यही दशा है । सिकन्दर जैसे मनोविचार प्रायः सुनते रहते हैं । क्या यह पागलपन नहीं है ? इससे छुटकारा पाने का एकमात्र साधन है—परमात्मा की उपासना ।

आत्मा की उपासना परमात्मा की उपासना है । उपासना में श्रद्धा और हृदय होना चाहिये । जहाँ दिखावा होता है वहाँ वंचना होती है । ऐसी उपासना फल नहीं लाती ।

हम प्रवचन करते हैं या आप उसे सुनते हैं यह भी साधना या उपासना का ही एक अंग है ।

लोग अज्ञानवश कई बार यह पूछ बैठते हैं कि साधु उपदेश देने घर घर क्यों जाते हैं ? प्रश्न ठीक है । हम भिक्षा लेने घर घर जाते हैं तो उपदेश देने के लिये या जन जीवन में नैतिक उत्थान के लिये घर घर जाएं तो अनुचित कैसे हो सकता है ?

साधु समता के प्रतीक हैं । सभी वर्ग व जाति के प्राणी उनके लिये समान हैं । उनका उपदेश किसी देश या राष्ट्र विशेष के लिये नहीं होता । आचारांग सूत्र में कहा है—'जहा पुण्णस्स कत्थई तहा तुच्छस्स कत्थई, जहा तुच्छस्स कत्थई तहा पुण्णस्स कत्थई' साधु जिस प्रकार धन कुबेरों या भाग्यशाली व्यक्तियों को उपदेश करते हैं, उसी प्रकार टूटी फूटी

झोंपड़ियों में रहने वाले निर्धनों को भी उपदेश देते हैं। यह समता की उत्कृष्ट साधना है।

अर्जुन ने भगवान कृष्ण से पूछा—योग क्या है? कृष्ण ने कहा—'समत्वं योग उच्यते-समता का आचरण योग है। आगे उन्होंने बताया— योगः कर्मसु कौशलम् —अपने कर्मों में कुशलता योग है।' व्यक्ति खाता है पीता है उठता है बैठता है चलता है बोलता है इन सभी कर्मों में अपनी मर्यादा को जानने व तदनुरूप बर्ताव करने वाला वास्तव में योगी है। केवल खाना या न खाना ही योग नहीं है किन्तु खाकर या भूखा रहकर भी मन में विकारों को न आने देना योग है। "समो निन्दा पसंसासु तहा माणाव माणओ"—यह योग की कसौटी है।

ध्यान उपासना का सर्वश्रेष्ठ साधन है। स्वरूप का चिन्तन योग की विशिष्ट क्रिया है। प्रत्येक को यह सोचना चाहिये—'कोऽहं कस्य कुत आयातः —मैं कौन हूं तुम कौन हो कहां से आये हो? इसका चिन्तन पवित्रता लाता है। परन्तु आज के लोग यह नहीं सोचते। वे ईश्वर स्वर्ग नरक की बातों में उलझ कर अपने आपको भूल रहे हैं। इसी आशय को स्पष्ट करते हुये तेरा पंथ के आद्य प्रवर्तक आचार्य भिक्षु ने कहा—आपरो भाषा रो भान भुलाय छ, काचरी ओरी में स्वान ज्यूं—एक कांच की कोठरी है। चारों ओर कांच ही कांच लगे हुये हैं। कुत्ते को उस कमरे में छोड़ दिया तो अपनी परछाई देखकर यह भूल जाता है कि कांच में जो प्रतिबिम्ब पड़ रहा है वह मैं ही हूं। वह यह सोचता है कि यह कोई दूसरा कुत्ता है। यह सोचकर वह उस पर झपटता है। कई बार प्रयत्न करने पर भी वह उसे नहीं पकड़ सकता और लहूलुहान हो जाता है। इसी प्रकार मनुष्य को अपने आपका ध्यान नहीं है। वह अपने मूल स्वरूप को भूलकर इधर उधर भटक रहा है।

१० सितम्बर १९५५ को प्रातःकाल यह प्रवचन नयी दिल्ली में १६ बाराखम्भा रोड पर निवास स्थान पर हुआ।

जीवन की साधना

प्रातःकालीन प्रवचन में आचार्य श्री ने कहा—'सूत्रों में कहा गया है— आणाए मामगं धम्मं' आज्ञा में मेरा धर्म है। प्रश्न होता है कि क्या 'आज्ञा' और 'मेरा धर्म' ये दो तत्त्व हैं या एक ही तत्त्व के दो पहलू? इसका समाधान है कि दोनों एक हैं, दो नहीं।

साधक साधना करता है। साधना का आधार आज्ञा है, वही उसका धर्म है। जहाँ आज्ञा है वहाँ 'मेरा धर्म' (आत्म धर्म) है और जहाँ "मेरा धर्म" है वहाँ आज्ञा है, ऐसा अन्वय बनता है।

आज्ञा हम किसे मानें? इसका समाधान करते हुये कहा है— 'अर्हदुपदेश आज्ञा'—वीतराग के आत्म शुद्धि-उपायभूत प्रवचन को आज्ञा कहते हैं।

साधक ने भगवान से पूछा—प्रभो साधना क्या है? भगवान ने कहा— जयं चरे जयं चिट्ठे जयं मासे जयं सये। जयं भुंजंतो भासंतो, पाव कम्मं न बंधई। (दशवैकालिक सूत्र-४) यत्ना से चलो, यत्ना से बैठो, यत्नापूर्वक शयन करो, यत्ना से बोलो, आहार विहार तथा विचार यत्ना पूर्वक करो—यही साधना है।'

खाते, पीते, चलते सब हैं किन्तु खाने, पीने व चलने की कला नहीं जानते। कला के बिना साधना नहीं आती। साधना के बिना आनन्द नहीं आता।

शरीर धर्म का साधन है। खाये बिना शरीर नहीं चलता। जीवन निर्वाह के लिये भोजन आवश्यक है। मोक्ष की साधना भी शरीर के अभाव में नहीं होती। तो क्या खाना मात्र साधना है? नहीं भोजन करना साधना है भी और नहीं भी।

जो भोजन केवल शरीर पुष्टि के लिये किया जाता है, वह साधना

नहीं। संयम की पुष्टि के लिये खाना साधना है। इसीलिये खाना चाहिये और नहीं भी। शरीर जब तक मोक्ष साधना में साधक बने, तब तक भोजन करना साधना है और जब शरीर साधक नहीं बनता तब शरीर छोड़ना ही उत्कृष्ट साधना है। घोर तपस्वी मुनि सुमतिचन्द्र जी का ज्वलन्त उदाहरण हमारे सामने है।

अभी दो महीने की बात है। मुनि सुमतिचन्द्र जी मेरे पास आये। हाथ जोड़कर कहने लगे— गुरुदेव मैं कई महीनों से तपस्या कर रहा हूं। तपस्या से जो आनन्द और समाधि का अनुभव होता है वह वाणी का विषय नहीं बन सकता, केवल अनुभवगम्य है। मैं यह चाहता था कि अन्तिम समय तक इसी प्रकार तपस्या करता रहूं और जीवन का आनन्द लूटता रहूं। किन्तु कुछ दिनों से भावना बदली है। इसका भी कारण है। जिस शरीर को मैं साधना में लगाये रखने के लिये कुछ आहार देता हूं वह उसे पचाता नहीं, खाते ही बाहर फेंक देता है। यह देख मुझे ग्लानि हो गई है। अब मैं चाहता हूं कि जब शरीर भी मेरा साथ छोड़ रहा है तो क्यों नहीं मैं इससे पहले सम्हल कर अपना कल्याण करूं। भोजन मुझे नहीं भाता। साधना में शरीर बाधक बन रहा है। मैं इसे छोड़ना चाहता हूं। कृपा कर आप मेरी मदद करें। अस्तु मुनि सुमतिचन्द्रजी ने वीरत्व दिखाया वह इस आणविक युग को चुनौती है। किस प्रकार एक वीर साधक अपने बाधक तत्वों से लोहा ले सकता है यह हम इस ज्वलन्त घटना से सीखना है।

खाने के तीन उद्देश्य हैं

(१) स्वाद के लिये खाना (२) जीने के लिये खाना और (३) संयम निर्वाह के लिये खाना। स्वाद के लिये खाना अनैतिक है जीने के लिये खाना आवश्यकता है और संयम के लिये खाना साधना है तपस्या है। इसलिये प्रत्येक ग्रन्थ पात्र-दान की महिमा बताता है। दान देने वाला

वाली वस्तु शुद्ध हो, देने वाला शुद्ध हो, तथा लेने वाला संयमी हो—यही पात्र दान है।

अपने हिस्से का देना साधुओं की साधना का उपष्टम्भ होता है। जैसे तैसे देना धर्म नहीं अशुद्ध देना धर्म है। न देने से शुद्ध देना ज्यादा हानिकारक है।

साधकों के भोजन तथा तपस्या साधना के दो प्रकार हैं—भोजन संयम पुष्टि का कारण बनता है और तपस्या विशेष निर्जरा के हेतु। साधु नगर में रहे या अरण्य में साधना ही उसका जीवन है। अरण्यवास में मौन रहना भी एक साधना का प्रकार है और नगर में रहकर उपदेश देना भी साधना का ही प्रकार है। मेरा अनुभव है कि अरण्यवास की साधना से भी नगर में रहकर पवित्र रहना अति कठिन है। सभी संयोगों में मन को स्थिर रखना बहुत कठिन है। आज स्थूलिभद्र बनने की आवश्यकता नहीं। आज आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति आदर्शों को निभाये। वास्तव में वह कठोर ब्रह्मचारी है, जो अपने घर में रहकर भी ब्रह्मचर्य का पूर्ण पालन करें। किन्तु सब कोई गृहस्थाश्रम में रहकर ही ब्रह्मचर्य का पालन करें यह कोई आवश्यक नहीं। आत्म साधना के प्रत्येक प्रकार में वीतराग की आज्ञा है। प्रश्न हो सकता है कि यदि वीतराग विपरीत आज्ञा दे दे तो साधक को क्या करना चाहिये ? इसका समाधान यह है कि व्यक्ति झूठ बोलता नहीं बोला जाता है। असत्य के मूल भूत कारण हैं—क्रोध, लोभ भय और हास्य। इन्हीं के कारण व्यक्ति असत्य बोलता है। वीतराग में इनका अभाव होता है। उसमें इतनी पवित्रता आ जाती है कि असत्य का आचरण होता ही नहीं, इसीलिये उसकी वाणी आदर्श बनाती है।

शास्त्रों में कहा है—वीतराग की वाणी में सन्देह करने वाला मिथ्यात्व को प्राप्त होता है। सन्देहशील बन जाता है, इसीलिये श्रद्धा को दृढ़ करने के लिये यह मंत्र उपयोगी होगा कि—'तमेव सच्चं निस्संकं जिणेहिं पवेइयं'—वही सत्य है जो वीतराग द्वारा कहा गया है।

श्रद्धा से व्यक्ति कितना ऊंचा हो जाता है, यह आचार्य भिक्षु की जीवनी से स्पष्ट हो जाता है। स्वामी जी के लिये जिनवाणी ही सब कुछ थी। उनकी प्रत्येक रचना में, कथा में जिनवाणी की पुट है। यही श्रद्धा उनकी जीवन घटनाओं के कण कण से बोल रही है।

१७ सितम्बर १९५६ का प्रातःकालीन प्रवचन।

प्रवचन (८)

वीरता की कसौटी

'पणया वीरा महावीहिं'—महापथ पर चलने वाले वीर होते हैं। शारीरिक श्रम वीरता का लक्षण नहीं वह तो पशु में भी होता है। वीरता की कसौटी है—आत्मबल। यदि यह मानदण्ड न मानें तो डाकू आततायी सिंह बल कसाई आदि भी वीर की कोटि में आजाते हैं। ये शारीरिक शक्ति की दृष्टि से बलवान हो सकते हैं किन्तु वीर नहीं। जब शारीरिक बल के साथ सहिष्णुता का गुण जुड़ता है तब वीरता आ जाती है।

भगवान महावीर अनन्त बली थे। अपनी कनिष्ठिका से मेरु को कंपित कर देने की शक्ति उनमें थी। उनके शरीर का संहनन 'वज्र ऋषभ नाराच' था। संस्थान समचतुरस्र था। इतने पर भी वे महावीर नहीं कहलाए। जब वे संसार को छोड़ अकिंचन बने, दुःसह परिषहों को समभाव से सहन की जब उनमें क्षमता आई तब देवों ने उन्हें 'महावीर' कहा। केवल शरीर के बल की प्रशंसा से बनते तो कभी के वीर बन जाते।

कष्टों को समभाव से सहना वीरता है। कष्ट सहन का अर्थ केवल शारीरिक कष्ट सहन से ही नहीं, किन्तु मानसिक संकल्प को धैर्यपूर्वक

सहना भी है। मानसिक संघर्ष के समय मनके अनुसार करो वा देना पहले दर्जे की कायरता है। इसीलिए कहा है—

'सहनशील बन धीर बनेंगे, विश्वभरी का सबक सुनेंगे।
पर मन का प्रश्रय नहीं देंगे 'तुलसी' धार्मिकता पनपायेंगे,

सहनशील बनना धीरताकी ओर बढ़ना है। आचार्य भिक्षु ने हमारे सामने सहनशीलता का महान आदर्श रखा। आज हम उसी आदर्श पर चलते हैं इसीलिए हमें विरोध विनोद सा लगता है। हमारी सफलता का मूल यही है। यदि विरोधों को हम धैर्यपूर्वक नहीं सहते तो कभी के खत्म हो गए होते। हमारे विरोधी ने क्या क्या न हमारे प्रति क्या नहीं किया। यदि मैं विरोध का इतिहास बताऊं, तो काफी समय लग जायेगा। थोड़े मे ही समझें कि विरोध हुआ है और आज भी होता है उससे घबराना नहीं चाहिए।

धीर का तीसरा गुण है—परमार्थ-वृत्ति। स्वार्थी को भय रहता है। भय कायरता है।

फलित यह हुआ कि (१) शारीरिक बल (२) सहनशीलता (३) पारमार्थिकता—इन तीनों के योग से व्यक्ति धीर बनता है और इन्हीं से साध्य की प्राप्ति होती है।

कुमार गजसुकुमाल "महा पथ" की ओर जाना चाहते थे। मन संसार से ऊब चुका था। दीक्षा ग्रहण कर भगवान अरिष्टनेमि के पास आये। आज्ञा ले श्मशान की ओर चल पड़े। भीषण परिषह सामने आए। समता से सहन कर नश्वर शरीर को छोड़ चल बसे। यह विशेष साधना थी। महाव्रतों का पालन था। संयत अवस्था में भी एक विशेष पडिमा का ग्रहण था।

आज इतनी कठोर साधना होती नहीं। अणुव्रतों की साधना भी इसी ओर सही कदम है। व्रतों की साधना कष्टमय होती है। अपनी वृत्तियों का निग्रह करना पड़ता है। किन्तु यह सीधा मार्ग है।

१८ दिसम्बर सन् १९५६ को प्रातः काल नया बाजार में।

धर्म का रूप

धर्म के दो प्रकार हैं—(१) आचारात्मक धर्म (२) विचारात्मक धर्म। दोनों की पूर्णता ही जीवन को चमक दे सकती है।

विचारात्मक धर्म के लक्षण हैं—

(१) विचारों में आग्रह हीनता

(२) दूसरों के विचार जानने में सहिष्णुता

(३) भावों में पवित्रता

आचारात्मक धर्म के लक्षण हैं—

(१) आचार उच्च निर्मल व पवित्र हो।

(२) व्यवहार शुद्ध हो।

(३) सत्य में निष्ठा हो अहिंसा की साधना हो।

जो व्यक्ति कथनी और करनी में समान रहता है वही सच्चा साधक है। जैन धर्म साधना का मार्ग है। इसका तत्व ज्ञान गम्भीर गहन है। फिर भी समझने का प्रयत्न करना चाहिए।

१६ सितम्बर १९५६ को इस प्रवचन के लिये आचार्य श्री सुबह को नया बाजार से मिनर्वा विशेष रूप से पधारे। प्रवचन के प्रारम्भ में आचार्य श्री ने सरल शब्दों में नयवाद प्रमाणवाद तथा स्याद्वाद का सुन्दर विवेचन किया। प्रवचन के बाद श्रीमती सुचेता कृपलानी एम० पी० से बहुत देर तक चर्चा चलती रही।

मेधावी कौन ?

आयाराग सूत्र मे एक प्रसग आता है—शिष्य पूछता है—मेधावी कौन ? आजकल साधारणतया जो पढ़ालिखा है, वही मेधावी माना जाता है किन्तु यह अर्थ सही नहीं है। संस्कृत कोष मे "मेधा" बुद्धि का पर्याय वाची शब्द है। किन्तु आगम भद्र प्रभवा मे ऐसा कहा गया है कि—सा मेधा धारणक्षमा—वही बुद्धि मेधा है जो धारण करने मे समर्थ है। सुनकर धारण करने वाला मेधावी है। यही इसकी सही परिभाषा है।

यह कोई बात नहीं कि पढ़ लिखे ही मेधावी होते हैं, किन्तु आज तो पढ़ लिखे भी ठोठ (अबुद्धिशाल) बहुत मिलते हैं। उनके पढ़ाई सिर्फ भार स्वरूप होती है। जैसे कहा—' यथा खरश्चन्दन भारवाही, भारस्य वेत्ता न तु चन्दनस्य' —जिस प्रकार गधे को चन्दन का बोझ भी बोझ स्वरूप ही लगता है, वह उसका आनन्द नहीं ले सकता। उसी प्रकार पढ़ लिखे' भी पढ़ाई को भार स्वरूप ही लादे फिरते हैं विद्या का आनन्द नहीं लूट सकते।

विद्या किसको दी जाय ? इसका भी विवेक रखना आवश्यक है। जैसे तैसे या जिस किसी को दी जाने वाली विद्या फल नहीं लाती। उपनिषदों मे एक सुन्दर प्रसग आया है —

एक बार विद्या ब्राह्मण के पास आई और उससे प्रार्थना करने लगी—हे भूदेव मेरी रक्षा करें। मैं आपकी निधि हू। मुझे ऐसे व्यक्ति को कभी न दें जो (१) मत्सरी ईर्ष्यालु है (२) कुटिल है और (३) प्रमादी है। कारण कि इनके पास जाने से मेरा वीर्य-बल नष्ट हो जाता है। वे मेरा दुरुपयोग करते हैं। मत्सरी सदा छिद्रान्वेषी बना रहता है। ऋजुता के बिना विद्या फल नहीं लाती। कुटिल और मायावी अपने लक्ष्य में सफल

मेधावी वह है जिसकी रग रग में श्रद्धा के कण उछलते हैं। तर्क उसे उलझा नहीं सकता आशंका उसे डिगा नहीं सकती।

[illegible] सितम्बर १९८६ को प्रातःकाल काठोतिया भवन सब्जीमण्डी में प्रदत्त।

प्रवचन (११)

आत्मगवेषणा का महत्व

मनुष्य भौतिक गवेषणा में कितना भी क्यों न बढ़ जाय, वह जीवन के सही लक्ष्य की पूर्ति की दिशा में कुछ नहीं कर सकेगा जब तक कि वह आत्म-गवेषणा की ओर उन्मुख नहीं होगा। असा भारतीय महर्षियों ने कहा है—जिसने आत्मा को नहीं जाना, अपने आप की परख नहीं की, उसने कुछ नहीं जाना। सब कुछ जानकर भी वह अज्ञानी है। भारतीय तत्त्व-दर्शन में उस विद्या को अविद्या कहा है, उस ज्ञान को अज्ञान कहा है जहाँ आत्मा को पवित्र बना संयम की ओर नहीं लगाया जाता। इसीलिये मैं आपलोगों से कहना चाहूँगा कि आप अपने में आत्ममुखी दृष्टि पैदा करें। उससे पराङ्मुख होने की न सोचें। केवल बहिर्मुख में रचे पचे रहने से कुछ नहीं बनता।

आज स्कूलों कालेजों, युनीवर्सिटियों की दिनों दिन वृद्धि हो रही है। विभिन्न विषयों पर बड़े बड़े गवेषणा-केन्द्र काम कर रहे हैं पर आत्म-गवेषणा की ओर उपेक्षा सी हो रही है। यह भूल है। इसीलिये सत्य शौच शील और नीति आदि मानवीय गुण बढ़ने के बजाय घट रहे हैं। वह जीवन क्या जीवन कहा जाय, जो असत्य चौर्य और अश्लील

से जर्जर है। यह कैसा जीवन है ? यह तो केवल हाड़-मांस का लोथड़ा है।

२९ सितम्बर १९५९ को दोपहर को ३ बजे आचार्य श्री के इस प्रवचन की व्यवस्था श्रीरामकृष्ण-मिशन रिसर्च इन्स्टीट्यूट में विशेष रूप से की गयी थी।

इन्स्टीट्यूट का पुस्तकालय भवन अधिकारियों व कार्यकर्ताओं से खचाखच भरा था। आचार्य श्री के पधारने पर इन्स्टीट्यूट के डाइरेक्टर डा० टी० एन दारूवाला का स्वागत भाषण हुआ।

कार्यकर्ताओं के अनुरोध पर आचार्य श्री ने गवेषणाशाला के कई स्थानों का निरीक्षण किया। लाहे के कण से बनी हुई रुई भी देखी और कुछ जाँच कर साथ भी लाये।

प्रवचन (१२)

आत्मविस्मृति का दुष्परिणाम

आचार्य श्री ने अपने प्रवचन में कहा—किसी के प्रति शत्रुभाव न रखना किसी का बुरा न चाहना और न अपनी ओर से किसी के प्रति प्रतिकूल आचरण करना अहिंसा है। यह मैत्री और बन्धुत्व का मूल है। अणुबम और उदजनबम की विभीषिका से संत्रस्त मानव के लिये यही एक मात्र त्राण है। अहिंसा कायरों का नहीं वीरों का धर्म है। इसके लिये बहुत बड़े आत्मबल और धीरज की अपेक्षा है। हिंसा और प्रतिशोध के दुर्भावों से अभिशप्त मानवता के लिये यही वह मार्ग है जो उसे शान्ति की राह पर ले जा सकता है। अणुव्रत आन्दोलन

यही हमें सिखाता है कि किसी के प्रति आक्रांता मत बनो, निरपराध को मत सताओ। अर्थ लिप्सा और लोभ के भयावह तूफानों में अपना सतुलन न बिगाड़ो। धन जीवन का साध्य नहीं है। उसके पीछे सत्य निष्ठा और सदाचरण को मत छोड़ो।

आज के मानव की सबसे बड़ी भूल यह है कि वह नई-नई बातों का रहस्य खोजने और समझने की कोशिश करता है पर वह अपने आपको भूल जाता है। आत्मा अनन्त शक्तियों और सुखों का स्रोत है, उसे पहचानने की वह जरा भी चिन्ता नहीं करता।

अणुव्रत आन्दोलन व्यक्ति को आत्मोन्मुख बनाना चाहता है। उसका अर्थ है—जीवन में समाई बहिर्मुखता का परिहार और अन्तर्मुखता का संचार। यदि ऐसा हुआ तो अर्थ लोलुपता और महत्वाकांक्षा से जन्य काला बाजार धोखा विश्वासघात और रिश्वत जैसी अनैतिक और अनाचार मयी प्रवृत्तियाँ स्वत उन्मूलित हो जाएँगी। मैं पुन आप लोगों से यही कहना चाहूँगा कि अणुव्रत आन्दोलन जन-जन को आत्मोन्मुख बनाने का आन्दोलन है।

अन्त में आपने व्यापारियों में अनैतिकता और अनुचित प्रवृत्तियों के परिहार के लिये उद्बोधित नियमों की विस्तृत व्याख्या की।'

५ जनवरी १९५७ को प्रातःकालीन प्रवचन सदर बाजार में हुआ। आहार-पानी से निवृत्त हो आचार्य श्री दोपहर में १ बजे ओल्ड सेक्रेटेरिएट के विशाल भवन में पधारे जहाँ कि प्रवचन की विशेष व्यवस्था की गई थी। दिल्ली राज्य के चीफ कमिश्नर श्री ए० डी० पंडित ने आचार्य श्री का स्वागत किया। आचार्य प्रवर चीफ कमिश्नर के साथ असेम्बली हाल में पधारे। चीफ कमिश्नर श्री ए० डी० पंडित ने आचार्य श्री का अभिनन्दन करते हुये कहा—

जीवन-व्यवहार की छोटी छोटी बातों पर हमें गौर करना होगा। उनमें ईमानदारी और सचाई का बहुत बड़ा मूल्य है। यही वे बातें हैं,
। चरित्र ऊँचा उठता है। आचार्य श्री तुलसी द्वारा

प्रवर्तित एवं संचालित अणुव्रत आन्दोलन जीवन-व्यवहार में शुद्धि और चरित्र में ऊंचापन लाना चाहता है। पूजा आदि परम्पराओं का पालन मात्र धर्म नहीं है। धर्म का अर्थ है—नैतिक आचरण। आज जहां हमारे देश में पंचवर्षीय योजना के रूप में सामाजिक प्रगति का काम चल रहा है वहां नैतिक प्रगति की भी बहुत बड़ी जरूरत है। उसके बिना हमारा काम पूरा नहीं होगा। किसी भी देश में नीतिमान और चरित्रवान लोगों की आवश्यकता होती ही है। हम अपना चरित्र सुधारेंगे तो आर्थिक सुधार पर भी इसका असर पड़ेगा। आचार्य श्री बहुत बड़ा काम कर रहे हैं उनके काम में हमें सहयोग देना चाहिये।

प्रवचन के बाद प्रो० एम० कृष्णमूर्ति ने अंग्रेजी में अणुव्रत आन्दोलन का संक्षिप्त परिचय दिया। श्री गोपीनाथ अमन अध्यक्ष दिल्ली राज्य समाजसुधार समिति के द्वारा आभार प्रदर्शन करने के बाद आज का कार्यक्रम समाप्त हुआ।

प्रवचन (पिलानी में) (७३)

ऋषि प्रधान देश

लाखों योद्धाओं को जीतना सहज है पर अपनी एक आत्मा पर विजय पाना मुश्किल है। जिसने अपनी आत्मा को जीत लिया है अथवा भवभ्रमण में डालने वाले रागद्वेष आदि आत्म-शत्रुओं को जिसने क्षीण कर दिया है, वह वास्तव में विश्व विजेता है। वह चाहे जिन, विष्णु या बुद्ध किसी भी नाम से कहलाए, उस परम पुनीत आत्मा को हमारा नमस्कार है।

पिलानी में आने का मेरा यह पहला ही अवसर है। अब मैं राज-

स्थान मे पदार्पण करता था तो सुना करता था कि पिलानी विद्या का एक बहुत बड़ा केन्द्र है। बहुत से श्रावक मुझे यहाँ आने को प्रेरित भी करते थे। पर मैं ना आ सका। अब की बार दिल्ली से लौटते हुए मैंने सोचा कि पिलानी भी जाना चाहिये और इसलिए थोड़ा चक्कर लगाकर भी यहाँ आना तय कर लिया। आज पिलानी मे आकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई, जैसी कि विद्या केन्द्रों में आकर मुझे हमेशा हुआ करती है।

इस प्रथम प्रसंग पर अधिक न कहकर केवल इतना ही कहना चाहूगा कि भारतीय संस्कृति अपने ढंग की अनूठी है यहाँ आत्म-साधना और त्याग का महत्व रहा है। इसलिये जहाँ एक बार इसे कृषि प्रधान देश कहा जाता है वहाँ मैं इसको ऋषि प्रधान देश कहता हू। यह ऋषियों, मुनियों, और तप:पूत साधकों का देश रहा है परन्तु खेद का विषय है कि आज तप—जीवन शोधन की परंपरा शिथिल होती जा रही हैं। जीवन दायिनी ऋषिवाणी आज ह्रासोन्मुख है। फलत जीवन सदाचरण और सत कर्मों से सूना हुआ जा रहा है। सांस्कृतिक परपराएँ डगमगा रही हैं। आज भारतीयो को जगाना है। अपने अस्त-व्यस्त चारित्र्य जीवन और डगमगाती सांस्कृतिक परंपराओं को सहारा देना है। वह सहारा एक मात्र धर्म है। मैं उसे सम्प्रदाय जाति और वर्ग भेद से नहीं बाँधता। मेरी निगाह मे धर्म वह है जो विश्व मैत्री और विश्व बधुत्व की सुदृढ़ भित्ति पर अवलम्बित है जो सत्य और अहिंसा के विशाल खभों पर टिका है जो निर्धन, धनवान और सबल दुर्बल के भेद से अछूता है। जो शांति का स्रोत और करुणा का निकेतन है। मैं चाहूगा, आज का भारतीय उस व्यापक और विश्व जनीन धर्म से अपने को अनुप्राणित करे। विद्यार्थी जीवन से ही इन्हीं सद्वृत्तियों की ओर झुकाव हो तो कितना अच्छा हो। विद्यार्थियों में विनय, विवेक और आचार का मैं बहुत बड़ी आवश्यकता समझता हूँ। मुझे आशा है विद्यार्थी इस ओर आगे बढ़ेंगे।

यह प्रवचन पिलानी के बिड़ला कालेज में सबसे पहला था। दिल्ली से सरदार शहर को लौटते हुए आचार्य श्री १६ जनवरी १९५७ को

वरन घोल पड़ते हैं। अच्छा हो कि वे उस रूप में भले ही न दिये जाएँ। इसे मूल रूप में ही मिलें और हम उन्हें संस्कारित कर दें। मलिन को पुन शुद्ध करने में बड़ी कठिनाई होती है और उन्हें सुधारने में बहुत सा समय खत्म हो जाता है। किन्तु हम देखते हैं बच्चों के अभिभावक इस विषय में सजग नहीं रहते। मुझे खुशी है कि प्रस्तुत संस्था में बालकों को नैतिक दृष्टि से अच्छे साँचे में ढाला जा रहा है। बच्चों के शांत वातावरण को देखकर मुझे लगा कि ये काफी सबल बनाये जा रहे हैं। राजस्थानी कहावत है—'गाँव की सास भरे बाड़ा' गाँव बसा है, इसकी साक्षी ग्रामोपकंठ में बाड़ ही दे देते हैं।

मैं मानता हूँ कि प्रत्येक को विद्यार्थी बन रहना चाहिये। जो विद्यार्थी बना रहेगा, वह हर जगह कुछ न कुछ पा सकेगा, क्योंकि उसके अर्जन का रास्ता सदा खुला रहता है। विद्यार्थी रहने का अर्थ है—कुछ न कुछ प्राप्त करने की अवस्था में रहना। इस दृष्टि से हम स्वयं विद्यार्थी हैं और रहना भी चाहते हैं।

मैं मानता हूँ संस्कार भरने की दृष्टि से बाल्य अवस्था से बढ़कर कोई अन्य अवस्था नहीं। इसमें जो संस्कार भर जाते हैं वे गहरे जम जाते हैं। पर खेद है कि आज जो विद्यार्थियों को संस्कार मिल रहे हैं, वे अच्छे नहीं हैं। आज वे नास्तिकता के वातावरण में पल रहे हैं, जहाँ उन्हें आत्मा परमात्मा, धर्म और सद्व्यवहार की कोई शिक्षा नहीं मिलती। प्रत्युत इनसे विरोधी तत्त्व उनके जीवन में भरे जाते हैं। भौतिकता आज चरम सीमा पर है और लोग उसमें अधिकाधिक फँसते जा रहे हैं। ऐसी स्थिति में छात्रों में भी उसका आकर्षण स्वतः आ जाता है और छात्र अपने लक्ष्य को पाने में सफल नहीं होते। आज शिक्षा-केन्द्रों में भी इस बात की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। मैं समझता हूँ धर्म के मौलिक आदर्श यदि छात्रों के जीवन में आ जाएं तो उनकी नींव पक्की हो जाती है। आजीवन वे चरित्र निष्ठ और उदार बने रहते हैं।

धर्म इस्लाम, जैन, ईसाई और हिन्दू नहीं। ये तो धर्म के तरीके हैं।

धम का व्युत्पत्ति लभ्य श्रय है धारणात धम उच्यते जो धारण करन वाला है वह धम है और प्रवत्ति लभ्य श्रय है —श्रात्मा की शुद्धि का साधन। जिमसे श्रात्मा श्रपनी शुद्धावस्था को पाती है वह धम है। जसे शरीर को श्राभूषित करन के लिये सुन्दर-सुन्दर वस्त्र पहन जाते हैं वसे ही जीवन को श्रलङ्कृत करन के लिये धम का श्राचरण श्रावश्यक है।

धम का स्वरूप है—श्रहिसा सत्य श्रौर उदारता। इस धम का सबध किसी जाति वग श्रौर सप्रदाय से नहीं इसका सीधा सबध जीवन श्रौर श्रात्मा से है। जीवन को परिमार्जित करने के लिये ही इसका उपयोग होता है। जीवन जब मज जाता है श्रात्मा के समस्त बधन टूट जाते हैं तो श्रात्मा—परमात्मा म कुछ भद नहीं रहता।

सबसे पहली बात—मैं कौन हू श्रौर मेरा क्या कत्तव्य है—यह व्यक्ति को भान रह। यह ज्ञान उसे नहीं रहता तो वह कत्तव्योन्मुख कसे हो सकता है? इस प्रसग को स्पष्ट करने के लिये एक कहानी सुनाऊँ क्योकि सामन बाल मडली जो है।

एक शेर के बच्चे की मॉ मर गई। उसके लिये बडी दुविधा हुई। जगल में उसका कौन सहायक? विधिवश एक ग्वाला उधर स निकला। उसन बच्चे को देखा श्रौर उठा लिया। बकरियों का दूध पिला पिला कर उस पाला। जगल म बकरियों के साथ वह भी घास चरन लगा। उसे यह ज्ञान तक न रहा कि मैं शेर हू।

अकस्मात एक दिन एक शेर श्राया। उसकी श्रावाज सुनकर सारी बकरियाँ भागन लगीं। वह भी भागा। मगर पीछे मुडकर जब उसन उस शेर को देखा, तब सोचा—श्ररे! यह तो मेरे जसा ही है। क्या मैं एसी श्रावाज नहीं कर सकता। फौरन वह श्रपन श्रापको पहचान गया। इसी प्रकार श्रपन स्वरूप को पहचानन की श्रावश्यकता है।

श्रभिभावकों श्रौर श्रध्यापकों को चाहिए कि वे बच्चे को शिक्षा पुस्तकों से नहीं श्रपने जीवन व्यवहार से दें। जीवन व्यवहार की शिक्षा स्थायी होती है।

आज छात्रों में जो उद्दंडता और अनुशासन हीनता बढ़ रही है, वह खतरनाक है। छात्रों को हर एक छोटी छोटी बात पर भी विशेष ध्यान रखना चाहिए।

कानपुर में महामन्त्री श्री श्रीमन्नारायण जी ने अणुव्रत गोष्ठी में कहा था कि मुझे अणुव्रत आन्दोलन की इसी बात ने आकृष्ट किया है कि इसके नियम छोटे छोटे दैनंदिन व्यवहारों को विशेष महत्व देते हैं तथा उन्हें सुधारने का आग्रह रखते हैं।

जैन धर्म में जीवन शुद्धि की छोटी छोटी चीजों को भी विशेष महत्व दिया गया है। साधक पूछता है—

कहं चरे कहं चिट्ठे, कहं मासे कहं सए।
कहं भुंजतो भासतो, पाव कम्म न बंधई॥

प्रभो ! बतलाए मैं कैसे चलूं कैसे स्थिर रहूँ, कैसे बैठूं और कैसे सोऊँ ? कैसे भोजन करते और बोलते हुए के मेरे पाप कर्म न बंधें ? गुरु उसे विधि बताते हुए कहते हैं—

जयं चरे जयं चिट्ठे, जयमासे जयं सए।
जयं भुंजतो भासंतो पावकम्मं न बंधई॥

अर्थात् यत्नपूर्वक चल, स्थिर रह, बैठ और सो। यत्नपूर्वक खाते हुए और बोलते हुए के पाप कर्म नहीं बंधते। क्योंकि उससे किसी को भी कष्ट नहीं होता।

भारतीय संस्कृति का मूलमन्त्र है—"आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्"—जिन चीजों से अपने को दुःख होता है वे दूसरों के लिये भी न की जाएं। अणुव्रत आन्दोलन की यही प्रेरणा है। ये नियम बच्चे, तरुण और वृद्ध सभी के लिये समान रूप से आवश्यक हैं। चाहे कोई भी हो, जीवन में सीमा आवश्यक होती है। अणुव्रत नियम जीवन में सीमा निर्धारण करते हैं।

अध्यापकों का दायित्व

अध्यापकों को लक्ष्य करके आचार्य श्री ने कहा—

'अध्यापक शिक्षा के अधिकारी हैं और वे शिक्षा देते हैं पर मैं समझता हूं वे शिक्षाएं उनके जीवन में ओत प्रोत होनी चाहिये। ऐसा होने पर आपको कुछ कहने की आवश्यकता नहीं छात्र स्वयं आपके जीवन से शिक्षा ग्रहण करेंगे। इसलिये मैं चाहता हूं, अध्यापक अणुव्रती के सांचे में ढलें। जो आप विद्यार्थियों से चाहते हैं पहले वह स्वयं करें। अपने को संयत बनाये बिना और खुद का दमन—नियंत्रण किये बिना न हम दूसरों को कुछ सिखा सकते हैं और न स्वयं ही सुखी बन सकते हैं।'

प्रश्नोत्तर

प्रवचन के बाद कुछ प्रश्नोत्तर भी हुए। विद्यार्थियों ने विविध प्रश्न किये जिनका आचार्य प्रवर ने सरल एवं बोधगम्य भाषा में समाधान किया।

प्रश्न—आत्मा परमात्मा में फर्क नहीं तो भय कैसा ?

उत्तर—परमात्मा सब द्रष्टा है। उससे कोई कार्य छुपा नहीं रहता। अतः हम बुरा कार्य न करें यह भावना रखना ही डर है और यहाँ हिंसा जनित भय से मतलब नहीं।

प्रश्न—आप क्या करते हैं ?

उत्तर—एक वाक्य में इसका यही उत्तर है कि हम साधना करते हैं और विस्तार में पढ़ना लिखना उपदेश देना स्वाध्याय करना आदि अनेक संयमानुकूल प्रवृत्तियाँ करते हैं।

प्रश्न—आप क्या खाना खाते हैं ?

उत्तर—हम सात्विक भोजन करते हैं मादक खाना नहीं खाते कच्चे फल नहीं लेते। मांस नहीं खाते।

प्रश्न—ब्रह्मचर्य को आप अणुव्रत कहते हैं तो महाव्रत किसे कहते ?

उत्तर – ब्रह्मचर्य का सम्पूर्ण पालन महाव्रत है और उसके अंश का पालन अणुव्रत कहलाता है।

प्रश्न – आपके मन में जैन धर्म का प्रचार करने की इच्छा कैसे जगी?

उत्तर – मेरे पूर्वज जैन धर्मावलम्बी रहे हैं। मैं भी गृहस्थावास में इसे मानता रहा हूं। कुछ पूर्व संस्कारों की और कुछ यहाँ की प्रेरणा मिली। फलस्वरूप मैं जैन धर्म का परिव्राजक और प्रचारक बन गया।

इस प्रवचन की व्यवस्था १६ जनवरी सन् १९५७ को बिड़ला मान्टेसरी पब्लिक स्कूल में विशेष रूप से की गयी थी।

प्रवचन के बाद मुख्याध्यापक श्री राधारमण पाठक ने आचार्य श्री के प्रति आभार प्रदर्शन किया। विद्यार्थियों द्वारा समवेत स्वर से गाये गये सामूहिक गान से कार्यक्रम समाप्त हुआ।

प्रवचन (१५)

विद्यार्थी-भावना का महत्त्व

सब से पहले मुझे आप से क्षमा याचना करनी है। वह इसलिये कि मेरा कार्यक्रम सूचना के अनुसार नहीं हो पाया। परसों धुंध कुहरा के कारण मैं नहीं पहुंच सका। कल वर्षा ने रोक लिया। आप सोचें—हम कितने कमजोर हैं। साधारण से साधारण चीजें हम रोक देती हैं। जहाँ आपको बड़े बड़े बम भी नहीं रोक सकते, वहाँ मामूली से मामूली चींटियां और वर्षा की बूँदें भी हमें रोक देती हैं। पर इसके मान आप यह न समझें कि हम वस्तुतः कमजोर हैं। भारतीय संस्कृति में यह बात नहीं है।

आप भीरुता, कायरता या दुर्बलता नहीं यह तो आत्मबल का प्रतीक है। अतः अपनी चारित्र्य चर्या के मौलिक नियमों को सुरक्षित रखने की दृष्टि से ही मैं दो दिन तक नहीं आ सका। कल आप लोग मेरा प्रवचन सुनने का आये और निराश लौटे इसका मुझे दुःख है। कल मुझे अपने स्थान पर बैठे बैठे कभी प्रकृति पर रोष आता था, कभी यह पद याद आता था कि — श्रेयांसि बहुविघ्नानि —कल्याण कार्यों में अनेक विघ्न आ ही जाते हैं। पर मनुष्य उनसे पराजित न हो बल्कि उनको हटाता चले, यही सबसे सुन्दर बात है।

मैंने जो क्षमा याचना की बात कही सो तो जैन दर्शन का आदेश है—

"खामेमि सव्वे जीवे सव्वे जीवा खमन्तु मे" अतः इस दृष्टि से मैं अगर आपसे क्षमा याचना करूं तो उचित ही है। मैं बहुत दिनों से सोच रहा था कि पिलानी विद्या केन्द्र में मैं आऊं। बहुत से लोगों ने मुझ से यहां आने का आग्रह भी किया पर हम पैदल चलने वालों के लिये यह इतना सहज नहीं होता, अतः ऐसा नहीं हो सका। श्री जुगलकिशोरजी बिड़ला ने भी मुझे यहां आने के लिये कहा था। अब मैं यहां आप लोगों के बीच हूं। विद्यार्थियों में रहकर मुझे एक स्वर्गीय सुख का अनुभव हुआ करता है। यह मेरी स्वाभाविक प्रवृत्ति है। इसका कारण भी है— आप विद्यार्थी हैं और मैं भी विद्यार्थी हूं। आप मुझे कहेंगे, आप आचार्य हैं महात्मा हैं। पर मैं आप से सच कहता हूं—मैं तो जीवन भर विद्यार्थी ही रहना चाहता हूं और यह मानता भी हूं कि मनुष्य को जीवन भर विद्यार्थी ही रहना चाहिये।

भर्तृहरि ने एक जगह कहा है—

यदा किञ्चिज्ज्ञोऽहं द्विप इव मदान्धः समभवम्।

यह ऋषि वाणी है और अनुभूति की वाणी है। इसका मतलब है, मनुष्य जब तक अल्पज्ञ होता है तब तक वह अपने आपको महान मानता है। वही फिर ज्यों ज्यों ज्ञान को प्राप्त करता जाता है, त्यों

यह समझ सकता है कि वह कितना सम्पन्न है। मन में तो अपने आपमें जीवन भर विद्यार्थी रहने की आवश्यकता अनुभव करता हूँ।

मुझे जीवनभर विद्यार्थी रहने की शिक्षा मिली है। और आज भी जब मैं अपने साधु साध्वियों को पढ़ाता हूँ तो उनमें भी मुझे बड़ी नई चीजें मिल जाती हैं। वास्तव में मैं इनसे बहुत सी शिक्षाएं पाता हूँ। अध्यापकगण शायद इसका अनुभव ज्यादा कर सकते हैं।

मुझे स्मरण होता है जब मैं अपने पूर्वाचार्य श्री कालूगणी जी के पास पढ़ा करता था, कभी कभी उनकी कुछ बातें मेरी समझ में नहीं आती थीं। वे मुझे बार बार बताते पर तो भी मैं समझ नहीं पाता था, जब मैं आज उन्हीं बातों को दूसरों को पढ़ाता हूं तो मुझे बहुत से अनुभव होते हैं। इसलिये मैं बहुधा कहा करता हूँ कि वास्तव में प्रोफेसर ही छात्र होते हैं और छात्र प्रोफेसर।

आप यह सुनकर खुश होंगे कि आज तो महाराज ने अच्छा कहा— हम विद्यार्थियों को भी प्रोफेसर बना दिया और प्रोफेसरों को छात्र। मुझे लगता है अध्यापकगण वास्तव में अपने को छात्र अनुभव करेंगे।

इन चार-पाँच वर्षों में मैं अनेक विद्यार्थियों के सम्पर्क में आया हूँ। वैसे आप भी छात्र हैं और मैं भी छात्र हूँ। तब आप और मैं तो एक ही हैं। मैं आपको क्या बताऊं। आप सोचते होंगे, मैं बड़े-बड़े नेताओं से मिलकर आया हूं आपको कुछ नई बात सुनाऊंगा। पर मेरे पास ऐसा नया तो कुछ भी नहीं है, जो आपको सुना सकूँ और सोचता हूं कि नया कुछ होगा ही नहीं। आचार्य हेमचन्द्र ने भगवान महावीर की स्तुति करते हुए लिखा है—

> यथास्थितं वस्तु दिशन्नधीश !
> नतादृशं कौशलमाश्रितोऽसि।
> तुरङ्ग शृङ्गाण्युपपादयद्भ्यो
> नमः परेभ्यो नव पण्डितेभ्य ॥

भगवन आप तो वस्तु का जैसा स्वरूप है, वैसा विवेचन करते हैं।

अत आप मे उन अन्य दर्शनीय नये पंडितों जसा कौशल कहाँ जो घोड़े के भी सींग होन का निरूपण कर डालने की क्षमता रखते हैं ?

यह व्याज स्तुति है। मेरा तो यह मत है कि नया ससार में कुछ होता ही नहीं। अत अच्छा हो, हम उन पुराने तत्वों की अवगति कर लें।

सबसे पहले हमें इस बात पर सोचना है कि हमारा जीवन क्या है ? वह इधर और उधर से रहित नहीं है क्योंकि वह धारावाही प्रवाह है। इससे यह स्वीकार करना पड़ता है कि हमारा पूर्व जन्म था और पुनर्जन्म भी ग्रहण करना पड़ेगा। अगर हम आगे और पीछे दोनों तरफ नहीं देखेंगे तो यथेष्ट विकास नहीं कर पायेंगे। इसे ही मैं आस्तिकवाद कहता हूँ। मानो आत्मा-परमात्मा धर्म कर्म की केवल विवेचना ही नहीं मान्यता भी हो यही आस्तिकवाद है। अत सबसे पहले मैं आपको यह कहना चाहूँगा कि आप आत्मा के प्रभाव म विश्वास कर गुमराह न हो जावें केवल तर्क मे ही अपने आपको न भूल जाइये।

ऋषियों ने हमें तीन बातें बताई हैं—श्रद्धा, ज्ञान और चरित्र। इसीलिये शास्त्रों म कहा गया है—अगर सम्यक श्रद्धा न हो तो ज्ञान होते हुए भी आदमी अज्ञानी हो जाता है। श्रद्धायुक्त आदमी ही ज्ञानी है। तीसरी चीज है—चरित्र यानी सदाचरण। इसीलिये कहा गया है—सम्यग्ज्ञान दर्शन चरित्राणि मोक्ष मार्ग।

आज मेरी समझ मे सबसे बड़ी जो कमी है वह है श्रद्धा की। उसके बिना मनुष्य को अपने आपको पहचानने की ताकत नहीं मिल सकती। दर्शन और विज्ञान म यही फर्क है। दर्शन हजारों वर्षों से चला आ रहा है पर उसके चिंतन में हमेशा आध्यात्मिकता का अकुर रहता है। इससे दार्शनिकों ने गहरे चिन्तन के बाद सत्य और अहिंसा के तत्व ससार को दिये हैं। वैज्ञानिकों ने भी गहरा अनुशीलन किया और इसके फलस्वरूप उन्होंने ससार को एटमबम और हाइड्रोजन बम दिये। समुद्र-मथन में अमृत भी निकला और विष भी। अमृत से ससार का भला हुआ और

विष से यह हल हो गया। इसी प्रकार दार्शनिकों के मंथन से सत्य और अहिंसा निकली और वैज्ञानिकों के मंथन से बम।

इसीलिये आज उन्हीं वैज्ञानिकों का जिन्होंने बम तैयार किये हैं, कहना है कि जब तक इन पर आध्यात्मिकता का अंकुश नहीं होगा, तब तक वास्तविक शांति स्थापित नहीं हो हो सकती।

आज सबसे पहले हमें यह सोचना है—हमारा लक्ष्य क्या है ? कुछ लोग तो इस विषय पर सोचने का कष्ट नहीं करते और कुछ लोग सोचते हैं—वे अपनी पारिवारिक दुविधाओं को हटाना ही अपना लक्ष्य मानते हैं। पर यह भूल मे भूल है। विद्या का यह लक्ष्य कदापि नहीं हो सकता। उसका लक्ष्य तो है—अपने आपको सुसंस्कृत बनाना। इसीलिये कहा गया है—'अहसु विज्जा चरण पमोक्ख सा विद्या या विमुक्तये' यानी विद्या का लक्ष्य है मुक्तिपाना। मुक्ति का अर्थ है वास्तविक शांति। यदि शिक्षा से वास्तविक शांति नहीं मिली तो अपना पेट तो कीड़े मकोड़े भी भर लेते हैं। उसके लिये इतना शिर स्फोटन क्यों ? पर विद्या का वास्तविक लक्ष्य है—स्थायी शांति।

विद्या अर्जन का सही अर्थ है—जिस शिक्षा को पुस्तकों में से प्राप्त किया, उसे किताबों में ही नहीं, अपने जीवन में उतारकर जाए। कदम कदम पर वह जीवन में व्यापक बने। इसीलिये तो जिस वाक्य को अन्य विद्यार्थियों ने पाँच मिनट में याद कर लिया था, उसे धर्मपुत्र युधिष्ठिर महीनों में भी याद नहीं कर पाये। वह वाक्य था "क्रोध मा कुरु" अर्थात् क्रोध मत करो। उसे सबने याद कर लिया, दुर्योधन ने भी याद कर लिया पर धर्मपुत्र याद नहीं कर पाये। अध्यापक ने पूछा क्या सब ने याद कर लिया ? सबने कहा—हाँ कर लिया। पर धर्मपुत्र बोला गुरुदेव ! आपने पहला वाक्य बताया था—"सत्य वद" अर्थात सत्य बोलो वह तो याद हो गया है पर 'क्रोध मा कुरु'—यह याद नहीं हो पाया है। अध्यापक को गुस्सा आ गया। आप जानते हैं, पहले की अध्ययन प्रणाली दूसरी थी और अध्ययन का मानदंड भी दूसरा था।

पहले अध्यापक छात्रों की मरम्मत भी कर देते थे, पर आज युग बदल गया है। अब विद्यार्थी अध्यापकों की मरम्मत कर देते हैं। अतः अध्यापकों को डर रखना पड़ता है कहीं विद्यार्थी उनका अपमान न कर दें। इसीलिये वे विद्यार्थियों को कुछ कहते भी नहीं। अस्तु !—हाँ तो अध्यापक ने गुस्से में आकर धर्मपुत्र के गाल से एक चांटा लगा दिया। इतना होना था कि धर्मपुत्र खुशी से उछल पड़े और कहने लगे—अच्छा याद हो गया-याद हो गया।

अध्यापक विस्मय में पड़ गये। उन्होंने धर्मपुत्र से इसका कारण पूछा। धर्मपुत्र कहने लगे—मैं याद होना उसको मानता हूँ जिसको मैं अपने जीवन में उतार लेता हूँ। अन्यथा पढ़ने मात्र से मैं किसी बात का याद हो जाना नहीं मानता। मैंने इसका अभ्यास तो किया था पर आज मार पड़ने पर मैंने यह जान लिया कि वास्तव में वह पाठ मुझे याद हो गया है।

आज के हमारे विद्यार्थियों ने अनेकों डिग्रियाँ प्राप्त कर ली हैं पर क्या उन्होंने यह पाठ पढ़ा है? क्या प्रतिकूल परिस्थितियों में भी वे गुस्सा नहीं करते? साधना यही है कि जो कुछ पढ़ा जाए उसे जीवन में उतारा जाए। धर्म शास्त्रों में अनेकों अच्छी बातें लिखी पड़ी हैं पर आज आवश्यकता है उनको जीवन में उतारने की। यदि ऐसा नहीं हुआ तो पढ़े और अनपढ़े में कोई अन्तर नहीं है। शास्त्रों में पूछा गया है—पंडित कौन? वहीं उत्तर है—जिसका जीवन सफल है वही पंडित है। अतः आज ऐसा वातावरण बनाने की आवश्यकता है।

नेता लोग भी चिंतित हैं। वास्तव में हैं या नहीं, यह तो मैं नहीं कह सकता पर देखने में तो वे बड़े चिंतित लगते हैं। वे कहते हैं—आज की शिक्षा प्रणाली सुन्दर नहीं है पर हम इसे सुधार भी नहीं कर सकते। तो मैं कहा करता हूँ—आखिर इसे सुधारने के लिये क्या कोई ब्रह्मा जी आयेंगे? पर यह सही है कि वे चिंतित हैं। उनके पास कोई उपाय नहीं? इसका कारण क्या है? स्पष्ट है—वातावरण उनके

है । वे जो सुधार करना चाहते हैं वह कर नहीं पा रहे हैं ।

आज थोड़ी सी बात हुई कि विद्यार्थी हड़ताल तूफान और बगावतें करने में भी नहीं सकुचाते । यह देख कर बड़ा दुख होता है । जिस बुनियाद को हम बनाने जा रहे हैं उसमें कितनी खराबी है ।

मैं मानता हूं आपकी कोई मांग हो सकती है पर बड़े बड़े विरोध भी जब समझौते से सुलझाये जा सकते हैं तो छोटी छोटी बातों के लिये ऐसे घृणित काम कर बढ़ना क्या सचमुच में लज्जा की बात नहीं है ? देश के प्रांतीय पुनर्गठन के बारे में विद्यार्थियों ने जो जो कुछ किया, क्या यह शर्म की बात नहीं है ? मैंने जहां तक सुना है विद्यार्थियों ने उस समय उपद्रवों में बहुत बड़ा भाग लिया था । हो सकता है, उनको प्रोत्साहित करने में किन्हीं अवांछित तत्त्वों का हाथ रहा हो पर यह सही है कि विद्यार्थियों ने इसमें अपनी असहिष्णुता का परिचय दिया था । कम से कम हमारे भारतीय विद्यार्थियों के लिये यह कदापि उचित नहीं कहा जा सकता ।

अणुव्रत आंदोलन

अनेकांत का सिद्धांत उन्हें हर परिस्थिति में समझौते की शिक्षा देता है । अणुव्रत आंदोलन भी यही बात बताता है । देश में आज धार्मिक, सामाजिक राजनैतिक आदि अनेकों आंदोलन चलते हैं । आज वन महोत्सव का भी आंदोलन चल रहा है पर अणुव्रत आंदोलन आध्यात्मिक विकास और नैतिक सुधार का आंदोलन है । भारत में सुधार होगा तो वह हृदय परिवर्तन से ही संभव है बल प्रयोगों से नहीं हो सकता । अणुव्रत जन जन में यही भावना भरना चाहता है । यह किसी धर्म विशेष का आंदोलन नहीं है । क्योंकि यदि यह किसी धर्म विशेष का—किसी सम्प्रदाय का हो जाता है तो दूसरे उसे स्वीकार करने में संकोच करेंगे । वास्तव में तो धर्मों में कोई भेद होता ही नहीं । जैन जिन्हें पांच महाव्रत कहते हैं, वैदिक उन्हें पांच यम कहते हैं और बौद्ध इन्हें पंचशील कहते हैं । बात एक ही है । अणुव्रत आंदोलन उन सबका—छोटे छोटे व्रतों का संग्रह है ।

आप पूछेंगे, आप अहिंसा की बातें तो करते हैं पर देश पर आक्रमण हुआ तो आप की अहिंसा क्या काम आयगी। पर मैं आप से कहूंगा—आप इसे गौर से पढ़ें। अणुव्रत आप को यह नहीं कहता कि आप देश, समाज और परिवार की रक्षा करना छोड़ दें। क्योंकि यह महाव्रत का माग है, अणुव्रत का माग है किसी पर आक्रमण नहीं करना। यह न तो महाव्रत का माग है और न अणुव्रत का। महाव्रत सारे लोगों के लिये कठिन पड़ता है और अव्रत तो विनाश का माग है ही। अत इन दोनों का मध्यम माग है—अणुव्रत। इसके बिना जनता का जीवन स्तर ऊंचा नहीं उठ सकता।

यह एक प्रश्न गांधी जी के सामन भी रखा जाता था और मेरे सामन भी आया करता है कि अगर सारे सन्यासी बन जायेंगे, ब्रह्मचारी बन जायेंगे तो यह सृष्टि कसे चलेगी म आपसे कहूंगा—आप उसकी चिन्ता न करें। खर अणुव्रती तो बनें। यह सन्यास का माग तो नहीं है। इस प्रकार व्यक्ति-व्यक्ति क सुधार की यह योजना आप के सामन है। जीवन में इसे उतारें। हमको इसी रूप मे आप के सहयोग की उपेक्षा है।

अत मे मैं आप से यह भी कह देना चाहता हू कि यहाँ आकर मन आप पर कोई एहसान नहीं किया है। यह तो मेरी अपनी साधना है और इसीलिये अगर आपन मेरी बात को शांति से सुना है तो आपन भी मेरा कोई एहसान नहीं किया है। आपकी भी यह साधना ही होनी चाहिए।

प्रस्तुत समारोह म डा० श्री कन्हैयालाल सहल एम० ए० पी० एच० डी० तथा श्री छगनलाल शास्त्री न भी अपन विचार प्रकट किये।

प्रवचन के लिए निर्धारित पिछल समया म कुहरे तथा वर्षा के कारण आचाय श्री का आडिटोरियल हाल म पधारना नहीं हो सका था। दो दिन बाद १९ जनवरी १९५७ को आकाश साफ हुआ। सब क मन म उल्लास था। विद्या विहार के कालजो तथा अध्याय [illegible] के छात्रो की प्रबल इच्छा थी कि आज तो आचाय [illegible] लिए

यहाँ पधारना है, परन्तु क्योंकि पिछले दो दिन कोहरे और वर्षा के कारण कोई आयोजन तथा कार्यक्रम नहीं हो सका था। आचार्य श्री प्रातःकाल ही शिव गंगा स्थित अतिथि निवास में पधार गये थे। वहाँ से मेमोरियल आडिटोरियल हाल में प्रवचन करने पधारे। हाल विद्यार्थियों और अध्यापकों से खचाखच भरा था। दृश्य बड़ा ही मनोरम था। बिरला विद्या विहार के कुलपति श्री शुकदेव पांडे ने आचार्य श्री के अभिनन्दन में स्वागत भाषण किया। उसके बाद प्रवचन हुआ।

प्रकरण (१९

नैतिकता और जीवन का व्यवहार

इन बालिकाओं का यह खिला हुआ जीवन उस नन्हे से मृदु बीज जैसा है जो आगे चलकर विशाल वृक्ष के रूप में प्रस्फुटित हो जाता है। परन्तु उस बीज को यथेष्ट वायु जल, खाद आदि न मिलें तो वह मुरझा जाता है। यही बात बालक बालिकाओं के लिए है। यदि इस गौरवमयी मर्यादा के संरक्षण, संवर्द्धन और विकास की उपयुक्त व्यवस्था नहीं होती तो ये खिले हुए फूल विकास पाने के बदले झुलस जाते हैं अध्यापक तथा अध्यापिकाओं का यह सबसे पहला और आवश्यक कार्य है कि वे बालक बालिकाओं के जीवन में अनुशासन, शील मैत्री और आत्मविश्वास आदि सुसंस्कार भरने को सतत जागरूक रहें। इस के लिए उनके अपने जीवन की प्रामाणिकता सबसे पहले आवश्यक है। उनका जीवन छात्र छात्राओं के लिये एक खुली किताब होना चाहिए, जिससे वे उनसे जीवन निर्माण की मूल एवं सक्रिय प्रेरणा ले सकें।

लोग अनैतिक और अशुद्ध वृत्तियों की ओर धड़ाधड़ बढ़ते जा रहे हैं। इसकी मुझे इतनी चिन्ता नहीं, जितनी यह देखकर कि लोगों की यह निष्ठा और आस्था बनती जा रही है कि नैतिकता सच्चाई और अहिंसा से व्यावहारिक जीवन में काम नहीं चल सकता। यह नास्तिकता है। जीवन सत्व की विस्मृति है। बालिकाओं में ऐसी भावनाएं न जमने पावें ऐसा प्रयास अध्यापिकाओं को करना है। बहिनों से विशेषतः कहा करता हूं कि वे अपने को पुरुषों से हीन न समझें। अपने को हीन समझना आत्म शक्ति को कुण्ठित करना है। वास्तव में उनमें वह अदम्य उत्साह और अपरिमित शक्ति है जो विकास के पथ पर आगे बढ़ने में उन्हें बड़ी प्रेरणा दे सकती है।

आचार्य श्री का यह प्रवचन १६ जनवरी ५७ को दोपहर म दो बजे बिड़ला विद्या विहार के अन्तर्गत बालिका विद्यापीठ म छात्राओं एव अध्यापिकाओं के बीच म हुआ।

विद्यापीठ की सहायक अध्यापिका श्रीमती प्रेम सरीन ने आचार्य श्री के स्वागत म भाषण दिया।

अन्त म विद्यापीठ की प्रधानाध्यापिका श्रीमती कौल ने आभार प्रदर्शन किया।

अध्यापकों का दायित्व

कहते हुए बड़ा खेद होता है कि आज राष्ट्र में नैतिकता का दुर्भिक्ष आता जा रहा है। ईमानदारी, विश्वास और मैत्री की परम्पराएँ टूटती जा रही हैं। इस नैतिक दिवालियेपन से जन जीवन आज खोखला हुआ जा रहा है। यदि अनीति और अनाचार के इस चालू प्रवाह को रोका नहीं गया तो कहीं ऐसा न हो कि अनैतिकता का यह भयावह दानव मानव को निगल जाय। इन टूटती हुई नैतिक और चारित्रिक शृंखलाओं को सहारा मिले, लोक जीवन में सत्य निष्ठा और ईमानदारी का समावेश हो इसके लिए अणुव्रत आन्दोलन के रूप में चारित्रिक उदबोधन का काम हम चला रहे हैं। अध्यापक, लेखक, शिक्षा शास्त्री जैसे बौद्धिक क्षेत्र के लोग राष्ट्र का मस्तिष्क हैं। राष्ट्र के जीवन को तथा कथित वितथ विकास के बदले सही विकास और अभ्युत्थान के मार्ग पर ले जाने का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व उन पर है। इसलिए मैं चाहूंगा चारित्रिक जागृति के लक्ष्य को लेकर चल रहे अणुव्रत आन्दोलन के बहुमुखी कार्यों में वे सहयोगी बनें। दूसरे लोगों तक पहुँचाया जाए, इससे पहले यह आवश्यक होता है कि व्यक्ति स्वयं अपने जीवन को आदर्शों के अनुकूल बनायें। अध्यापकों से मैं कहना चाहूँगा—वे सत्य निष्ठा, प्रामाणिकता और निर्भयता—इन तीन बातों को अपने जीवन में उतारें, यदि वे ऐसा कर पाए तो उनका स्वयं का अपना जीवन तो सही मार्ग में प्रगतिशील बनेगा ही राष्ट्र के सहस्रों नौनिहाल जिनके जीवन निर्माण का कार्य उनके हाथों में सौंपा गया है, उन्हें भी वे उन्नतिपथ की ओर ले जा सकेंगे। राष्ट्र के समक्ष वे मूर्त आदर्श उपस्थित कर सकेंगे।

यह प्रवचन १६ जनवरी १६५७ को विडला विहार के इजीनीय रिंग कालेज के हाल म समस्त प्राध्यापको तथा ध्यापको के सम्मुख हुआ।

इजीनियरिंग कालेज के वाइस प्रिंसीपल श्री शाह ने आचाय श्री का प्राध्यापकों की ओर से अभिनन्दन किया।

अन्त म इजीनियरिंग कालेज के प्रिंसीपल श्री लक्ष्मी नारायण ने आचाय श्री के प्रति आभार प्रकट किया।

प्रवचन (१८)

जैन दर्शन तथा अनेकातवाद

जन दर्शन का चितन अनेकांतवाद पर आधारित है जो विश्व की समस्त विचार धाराओं में समन्वय और सामजस्य का पथ प्रदर्शन करता है। यह बताता है—एक ही वस्तु को अनेकों अपेक्षाओं अथवा दृष्टियों से परखा जा सकता है। क्योंकि अनेकों अपेक्षाओं को जन्म देते हैं तो उसके निरूपण म भी आपेक्षिक अनेक विधता का आना सहज है। यह अनेक विधता स्याद्वोत्पादक नहीं है। यह तो वस्तु के बहुमुखी स्वरूप की निरूपक है। हाथी के विविध अग प्रत्यगों को लेकर अपने-अपने द्वारा अनुभूत अग विशेष को हाथी कह कर लड़ने वाले उन अधों की कहानी सुप्रसिद्ध है जिनको किसी नववान ने उसी हाथी के भिन्न भिन्न अगों का अनुभव कराकर बताया था कि जिस वे हाथी कह रहे हैं, वह तो उसका एक एक अग है। हाथी उन सब अगों का समवाय है। जन दर्शन यहा तो बताता है कि वस्तु के एक पहलू को

लेकर दुराग्रही मत बनो, लड़ो मत, उसे एकान्तिक सत्य मत समझो। दूसरी अपेक्षाओं से भी वह परखा जा सकता है और उस परख से निकलने वाला निर्णय पहले से भिन्न भी हो सकता है क्योंकि यह अपेक्षा या दृष्टि पहले से भिन्न है। जैसे एक व्यक्ति किसी का पिता है पर साथ ही साथ वह किसी का पुत्र भी है भाई भी तो हो सकता है, पति भी तो हो सकता है। कहने का तात्पर्य यह है कि उसमें पितृत्व, पुत्रत्व, भ्रातृत्व एवं पतित्व आदि अनेकों धर्म हैं। यही जैन दर्शन का स्याद्वाद है जो विश्व की उलझी समस्याओं के हल का उपयुक्त साधन है।

जहाँ विचार क्षेत्र में अनेकान्तवाद भी जैन दर्शन की महत्वपूर्ण देन है, वहाँ आचार के क्षेत्र में अहिंसा की भावना का सफल मार्ग जैन दर्शन ने दिया। उसने बताया कि किसी को मारना, सताना, उत्पीड़ित करना कष्ट देना वीरता नहीं है, सच्ची वीरता है हिंसक आघातों का आत्मबल के साथ मुकाबला करना। प्रहार करने की क्षमता के होते हुये भी उसका प्रयोग न कर अहिंसक प्रतिकार के लिये डटा रहना।"

१९ जनवरी १९५७ को रात को ६॥। बजे शिवगंगा कोठी में बिड़ला विद्याविहार जैन एसोसियेशन की ओर से जैन दर्शन के सम्बन्ध में आचार्य श्री का यह महत्त्वपूर्ण प्रवचन हुआ। काफी जैन प्रोफेसर एवं छात्र तथा जैन दर्शन में रुचि रखने वाले अन्य प्रोफेसर विद्यार्थी एवं नागरिक भी उपस्थित थे। प्रवचन के पश्चात् जैन तत्त्वों पर काफी देर तक प्रश्नोत्तरों के रूप में अत्यन्त मनोरंजक एवं शिक्षाप्रद विचार विनिमय हुआ।

नैतिक निर्माण और जीवन शुद्धि

चुनावों में अनैतिकता और अनुचित आचरण न रहे, इस पर प्रकाश डालते हुये आचार्य श्री ने कहा— राष्ट्र में प्रचलित नई राजनैतिक एवं सामाजिक परंपराओं और व्यवस्थाओं में जन-जन का जीवन अधिकाधिक नैतिक, सात्विक और उन्नत रह सके इसके लिए अणुव्रत आंदोलन एक चारित्र्यमूलक आलोक देता हुआ सतत प्रयत्नशील है ताकि व्यक्ति प्रखर गति से बहते युग प्रवाह में तिनके की तरह न बह, एक सुदृढ़ स्तंभ की नाईं मजबूत बन चारित्रिक आदर्शों पर स्थिर भाव से टिका रह सके। अणुव्रत आंदोलन का एक-मात्र लक्ष्य यह है कि विभिन्न जीवन व्यवहारों में गुजरता मानव अपने को सच्चरित्रता पर प्रतिष्ठित रख सके। इसी दृष्टि से चुनावों को लक्षित कर इस आंदोलन के अन्तर्गत हमने एक अहिंसा सत्यमूलक नियमावली राष्ट्र के कोटि-कोटि मतदाताओं और सहस्रों उम्मीदवारों के समक्ष प्रस्तुत की है।

कुछ दिनों के बाद राष्ट्र में आम चुनाव आ रहे हैं जिनकी आज सर्वत्र सरगर्मी नजर आ रही है। जिस प्रकार अपने सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं में व्यक्ति नगण्य स्वार्थों में पड़ पतनोन्मुख बनता है उसी तरह चुनावों में भी बहुत प्रकार की बीभत्स और जघन्य वृत्तियां बरती जाती हैं। यह सचमुच मानवता के लिये भयानक अभिशाप और घृणास्पद कलङ्क है। मैं चाहूंगा किसी भी कीमत पर व्यक्ति मानवीय आदर्शों से न गिरे। आसन्न चुनाव-काल को लक्षित कर मैं राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक से कहूंगा, वह सत्य और नैतिकता से विचलित न हो, अनैतिकता, और अनाचरण का सर्वतोभावेन परिहार करे।

यदि हम व्यक्ति के सामाजिक पतन के इतिहास के पन्ने उलट

ही पायेंगे कि एक समय था जब कि इतिहास में चन्द चांदी के टुकड़ों के मात्र ऐसी गद्दारियों को बचा। समय आगे बढ़ा बहु सड़कों को बदलने लगा। पर आज तो स्थिति यहाँ तक बदतर हो गई है कि पैसा के हाथ पर मतदान आप को भी बेच डालता है। पैसे लेकर किसी के पक्ष में अपना मत देना अपने आप को बेचना नहीं तो और क्या है? क्या यह पतन की पराकाष्ठा नहीं है? रुपए पैसे व अन्य प्रकार प्रलोभन देकर, हिंसात्मक प्रभाव दिखाकर, भय धमकी एवं अश्लील आलोचना का सहारा लेकर मत पाने का प्रयास करना पैसे के लालच में आकर मत देने को तत्पर होना जाली नाम से मत देना मानवता के लिए निःसंदेह एक अमिट कालिमा है। ऐसा करने वाले अपने मानवीय स्वत्व को ठोकरों से रौंदते हैं। जागृत मानवीय चेतनाशील नागरिक ऐसा कर अपने जीवन की चादर को पाप की स्याही से काली न बनायें। यह धार्मिक पतन है जो मानव को जीवन शुद्धि के एवं सदाचार के मार्ग से पराङ्मुख बना अवनति की ओर ले जाता है।

ता० २० जनवरी १९५७ को दोपहर के १ बजे भिवानी में नागरिकों की ओर से बाजार में नागरिकों की एक विशाल सभा का आयोजन किया गया जिसमें आचार्य श्री ने उन्हें नैतिक निर्माण और जीवन शुद्धि का उत्तम सन्देश दिया।

प्रवचन के बाद सैकड़ों नागरिकों ने चुनावों में अनैतिक और अनीतिपूर्ण व्यवहार न करने की प्रतिज्ञा की। अन्य कई प्रकार की दूषित वृत्तियाँ छोड़ने का भी लोगों ने संकल्प किया।

तीसरा प्रकरण

सम्पर्क (१)

श्रीलंका निवासी बौद्धभिक्षु के साथ

जैन धर्म और बौद्ध धर्म

२६ नवम्बर १९५६ को बौद्ध गोष्ठी की समाप्ति के बाद आचार्य श्री यंग मैन्स क्रिश्चियन एसोसिएशन हाल से १९ नम्बर बाराखम्भा रोड (नई दिल्ली) श्री धर्मचन्द्रदास द्वारकादास रंगवाले के मकान पर पधारे।

दोपहर में लंका निवासी बौद्ध भिक्षु 'नारद थेरो' आचार्य श्री से मिलने आये। शिष्टाचारमूलक वार्तालाप के पश्चात् उन्होंने आचार्य श्री से पूछा—

जैन धर्म और बौद्ध धर्म में क्या अन्तर है ?

आचार्य-श्री—बौद्ध तो प्रत्येक चीज को क्षणिक मानते हैं। जैन उसे स्थिर भी मानते हैं। बौद्ध कहते हैं—

"यत् सत् तत् क्षणिकम् यथा जलधर सन्तान भावा इमे।" पर जैन कहते हैं कि पदार्थ क्षणिक हैं पर वे परिणामी नित्य भी हैं। पानी बिल्कुल ही नष्ट नहीं हो जाता। उसके पर्याय का नाश होता है पर उसका द्रव्यत्व कभी नष्ट नहीं होता। वैसे ही प्रत्येक वस्तु पदार्थ का पर्याय बदलता है पर मूल द्रव्य स्थायी रहता है।

नारद थेरो—क्या पानी पदार्थ है ?

आचार्य-श्री—नहीं पानी मूलपदार्थ नहीं है। मूल पदार्थ दो ही हैं—जीव और अजीव। [illegible] शाश्वत रहते हैं। उनमें कभी मूलतः परिवर्तन नहीं होता। [illegible] परिवर्तन भी होता है जैसे मनुष्य पशु

पक्षी आदि। पर वास्तव म यह जीव का परिवतन नहीं है, पर्यायों का परिवतन है। इसी प्रकार अजीव में भी पर्यायों का परिवतन होता है। बौद्ध लोग परमाणु को नित्य नहीं मानते। उनकी दृष्टि मे हर चीज क्षणिक है पर हम परमाणु को नित्य मानते हैं।

नारदथेरो—जन ईश्वर को मानते हैं या नहीं ?

आचाय श्री—हाँ, मानते हैं पर वे उसे सृष्टि का कर्ता हर्ता नहीं मानते। आत्मा ही परमात्मा ईश्वर है। जब तक वह कम बल से लिप्त है, तब तक आत्मा है और कर्मों से छूटते ही ईश्वर बन जाता है।

नारदथेरो—आत्मा क्या है ?

आचाय श्री—आत्मा एक स्वतन्त्र ज्योतिमय शाश्वतचेतनामयतत्व है।

नारद थेरो—क्या शरीर और मन से भिन्न अलग तत्त्व आत्मा है ?

आचाय श्री—हाँ, मन भी इन्द्रिय रूप ही है और आत्मा इन्द्रियों से भिन्न चेतना तत्त्व है। शरीर तो उस पर आवरण है, जसे दीपक पर कोई ढक्कन।

नारद थेरो—वह आवरण क्या है ?

आचाय-श्री—सूक्ष्म शरीर।

नारदथेरो—सूक्ष्म शरीर क्या है ?

आचाय-श्री—कम पिंड।

नारद थेरो—कम क्या है ?

आचाय-श्री—परमाणु पिण्ड जो आत्मा की प्रवत्ति से आकर उससे चिपक जाते हैं उन्ह कम कहते हैं।

नारद थेरो—क्या कम क्रिया हैं ?

आचाय-श्री—नहीं, वे क्रिया नहीं हैं। वे तो क्रिया के द्वारा आत्मा से चिपक जाने वाले परमाणु पिण्ड हैं।

नारद थेरो—वे दोनों बुरे होते हैं या भले ?

आचाय श्री—दोनों ही प्रकार क होते हैं। यद्यपि भले कम भी अन्तत त्याज्य हैं पर व पौद्गलिक दृष्टि से दु खदायी नहीं होते।

दो जापानी विद्वानों के साथ

श्री नारद थेरो के जाने ही दो जापानी विद्वान पता लगाते-लगाते आ पहुँचे। उन्हें प्रधानमन्त्री नेहरू ने भारत आने का निमन्त्रण दिया था और इसीलिये वे बौद्ध गोष्ठी में सम्मिलित होने के लिए आये थे। एक बार वे पहले भी भारत आ चुके थे। जब उन्हें आचार्य-श्री के सम्बन्ध में यह बताया गया कि आप तेरापंथ के आचार्य हैं तो वे बड़े खुश हुये और बोले—हम आपके साधुओं से पहले भी मिले थे। उन जापानी विद्वानों के नाम थे—हाजीमे नाकामुरा और सोमन मियो मोटो। ये संस्कृत के भी विद्वान थे।

आचार्य श्री ने उन्हें अपना परिचय देते हुये बताया कि हम किसी भी सवारी का प्रयोग नहीं करते, तो उन्होंने कहा—आप मोटर में तो चढ़ते होंगे? जब आचार्य प्रवर ने बताया कि नहीं हम मोटर में भी नहीं बैठते। यह सुनकर जापानी विद्वान बड़े आश्चर्यान्वित हुये और बड़े विस्मय के साथ इस बात को दुहराया कि अच्छा आप मोटर में भी नहीं बैठते। आचार्य-श्री ने कहा हाँ, इसीलिये हम अभी राजस्थान से ग्यारह दिन में दोसौ मील पैदल चलकर यहाँ आये हैं।

उन्होंने पूछा—तब आप इंगलैण्ड कैसे जा सकते हैं?

आचार्य-श्री ने कहा—हम वायुयान आदि का भी उपयोग नहीं करते हम तो सड़क के रास्ते से ही चलते हैं। यही कारण है कि विदेशों में जैन धर्म का प्रचार नहीं हो सका।

प्रश्न—क्या कृषि में हिंसा है और क्या आप उसका निषेध भी करते हैं?

कृषि में हिंसा है पर हम उसका निषेध भी विधान

नहीं करते। बहुत सारे जैन भी कृषि करते हैं पर उसमें हिंसा ही समझते हैं। भगवान महावीर के प्रमुख श्रावकों में कई श्रावक कृषिकार हुये हैं।

फिर आचार्य श्री ने तेरा पंथ का परिचय दिया और दयादान सम्बन्धी मान्यताओं को तीन दृष्टान्तों द्वारा विशद रूप में समझाया। दया दान का व्याख्या उन्हें बहुत ही वास्तविक जची। साधु साध्वियों के हाथ की बनी चीजें दिखाई गई तो वे बड़े प्रसन्न हुये और फिर कभी मिलने का वायदा कर चले गये।

प्रवचन (७)

राष्ट्रकवि के साथ

साहित्य साधना पर वार्ता

१ दिसम्बर १९५६ को संसद क्लब में पधारने पर राष्ट्र कवि श्री मैथिली शरण गुप्त ने आचार्य-श्री से अपने घर पधारने के लिये निवेदन किया अतः आचार्य प्रवर क्लब के कार्यक्रम के उपरान्त वहां पधारे और २५ ३० मिनट तक बड़ा सरस वार्तालाप हुआ।

श्री मैथिलीशरण जी ने कहा—मेरी बहुत दिनों से अभिलाषा थी कि आपके दर्शन करू। आज दर्शन पाकर मेरी कामना पूर्ण हुई। वसे मैं आपके प्रयत्नों से समय-समय पर आपके सन्तों द्वारा परिचित होता रहा हू उनके सत्प्रयत्नों में यथाशक्ति सहयोग देता रहा हूँ किन्तु आपसे साक्षात्कार आज ही हो पाया है।

साहित्य साधना के सम्बन्ध में चर्चा चलने पर उन्होंने कहा—मैंने भारत के सभी सन्तो के प्रति श्रद्धांजलियां अर्पित की हैं। मैंने साकेत'

लिखा है यथायरा की रचना की है। भगवान महावीर को मैं अपनी श्रद्धांजलि भेंट करना चाहता था पर मुझे उनके विषय में यथार्थ जानकारी प्राप्त नहीं हुई। जहाँ भी कहीं देखा श्वेताम्बर दिगम्बर का झमेला दिखाई दिया। इसीलिये मैंने कुछ नहीं लिखा। आप इसके सही अधिकारी हैं। आप मेरा पथ प्रदर्शन कीजिये और यथार्थ जानकारी देकर मेरी सहायता कीजिये।

अपनी नव निर्मित कृति 'राजा प्रजा' का प्रूफ दिखाया और कहा मुझे आपका अभी का प्रवचन बहुत मनोहर और वास्तविक लगा। मैं 'राजा प्रजा' में इसके भाव के कुछ पद्य प्रयुक्त करूंगा। मुझे यह कथन बहुत ही यथार्थ लगा कि यदि प्रत्येक व्यक्ति अपना अवलोकन शुरू कर दे तो दूसरों की आलोचना और दंड विधान की गुंजाइश ही न रह जाय।

आचार्य प्रवर ने कहा—हम व्यक्ति सुधार पर जोर देते हैं, क्योंकि व्यक्तियों के समूह के सिवाय राष्ट्र कुछ है नहीं। हमारे यहाँ आत्मसाधना और जनोपकारी कार्यों के साथ उसकी पूरक अन्य साधनायें भी चलती हैं। साहित्य साधना में भी सन्तों की प्रगति है। कई संत आशु-कवि हैं। किसी भी विषय पर तत्काल संस्कृत में पद्यों की रचना कर सकते हैं। समदमदस्य श्री राधाकुमुद मुखर्जी ने आशु कविता के लिये 'तृष्णा दमन' विषय दिया जिस पर मुनि श्री नथमल जी ने कविता की। राष्ट्र कवि ने आचार्य श्री को अपनी कृति 'साकेत' भेंट की।

मन्थन (४)

श्रीमती सावित्री देवी निगम के साथ

मानवता के नियम

सासरसम्स्या श्री मती सावित्री देवी निगम ने भी सतवचलव में (१ दिसम्बर १९५६ को) आचाय श्री से अपने यहाँ पधारने का निवेदन किया था। आचाय श्री राष्ट्रकवि के स्थान से उनके यहाँ पधारे। कुछ देर वहाँ ठहरे। आचाय श्री के विराजन की तजवीज छत पर थी। सारे भाई-बहिन वहीं ही बठे। कई विषयों पर वार्तालाप हुआ।

आचाय श्री—क्या आपने अणुव्रत के नियम देखे हैं ?

श्रीमती निगम—हाँ, महाराज! उनसे परिचित हूँ। ये तो मानवता के नियम हैं। मुझे उनमें निष्ठा है। यत्र-तत्र चलने वाले ऐसे रचनात्मक सुधार कार्यों में मेरी रुचि रहती है। मैं भारत सेवक समाज में भी काय करती हूँ तथा ग्रामों में भी कुछ केन्द्र खोल रखे हैं। पर मैं इन सबमें प्रथम स्थान अणुव्रत आन्दोलन को देती हूँ।

आचाय श्री—हाँ, आपको इसे प्रथम स्थान देना ही चाहिये, क्योंकि यह सुधार का आन्दोलन अपने ढंग का एक है। प्रत्येक काय से यह आन्दोलन संयम को महत्व देता है। इसके वर्गीय कायक्रम बड़े अच्छे ढंग से चले हैं और चल रहे हैं। हजारों छात्रों ने इससे नैतिक प्रेरणा पाई है। सैकड़ों व्यापारियों ने कूट तोल माप व मिलावट न करने की प्रतिज्ञा ली है। अनेकों मजदूरों ने नशा न करने का नियम लिया है।

सावित्री देवी—हाँ आपके कायक्रमों ने जनता के विचारों को मोड़ा है। आज नेता व साधारण लोग भी नैतिकता की चर्चा करते हैं। इसमें अणुव्रत आन्दोलन ने काफी मदद की है। यह आन्दोलन की

सफलता है। इसमें सन्देह क्या है कि वह भावना फलेगी और लोग इसे स्वीकार करेंगे। ये व्रत (नियम) जीवन के प्रत्येक पहलू को छूते हैं। अभी यहाँ मद्य निषेध सप्ताह चला था। उसमें आन्दोलन ने बहुत मदद दी है। मैं इसकी सफलता चाहती हूँ

आचार्य-श्री—आपने अणुव्रती बनने के बारे में क्या सोचा है ?

सावित्री देवी—मुझे तो इसमें कोई अड़चन नहीं है। मैं अपने आपको इसके लिये प्रस्तुत करती हूँ। मेरा नाम कृपया अणुव्रतियों की सूची में लिखलें।

उनके आग्रह पर आचार्य-श्री ने उनके यहाँ कुछ भिक्षा भी ग्रहण की।

मध्याह्न में आचार्य श्री वाई० एम० सी० ए० पधार गये, जहाँ साहू शान्तिप्रसाद जी जैन श्री अगरचन्द जी नाहटा आदि कई व्यक्ति सपर्क में आये (जैन आगमकोष और अनुवाद की बात सुनकर वे बड़े प्रसन्न हुये।)

पूनस्को के प्रेस प्रतिनिधि श्री एनश्रिरा ने आचार्य प्रवर के दर्शन किये।

श्री एलविरा के साथ

व्रतो की निषेधात्मक मर्यादा

यूनस्को के प्रेस प्रतिनिधि श्री एलविरा के साथ १ दिसम्बर १६५६ को आचार्य श्री की महत्वपूर्ण चर्चा हुई।

आचार्य-श्री—क्या आपने अणुव्रत आन्दोलन के नियम देखे हैं ?

एलविरा—हां, मैंने उनको देखा है। वे मुझे अधिकतर निषेधात्मक प्रतीत हुए, ऐसा क्यों है ?

आचार्य श्री—इयत्ता के लिये निषेध आवश्यक है "यह करो यह करो"—इसकी कोई सोमा नहीं है।

एलविरा—बाइबिल में भी अधिकांश नियम नकारात्मक हैं पर उसमें यह भी कहा गया है कि अपने पड़ोसी से प्रेम करो।

आचार्य श्री—ऐसा उल्लेख तो इसमे भी है कि आपस मे मैत्री रखो पर यह नियम नहीं हो सकता यह तो उपदेश हो सकता है।

एलविरा—भारत के लोग अहिंसा मे विश्वास व श्रद्धा रखते हैं और अपने जीवन को उस आदर्श तक ले जाना चाहते हैं क्योंकि आप जैसे प्रेरक यहाँ विद्यमान हैं। क्या इसका प्रचार पाश्चात्य देशों में भी हो सकता है ?

आचार्य श्री—क्यों नहीं, पर इसके लिये आप लोगों का नैतिक सहयोग अपेक्षित है।

एलविरा—मैं तो आपकी सेवा में प्रस्तुत हूं। मैं अपना अहोभाग्य समझूँगा अगर मैं इसमें कुछ काम कर सकूँ। तत्पश्चात् आचार्य प्रवर ने उनको तेरापंथ और जैन आचार विचार परंपरा के सम्बन्ध में जानकारी दी।

दलाई लामा के साथ

श्रमण संस्कृति की दो धाराओं का मिलन

२ दिसम्बर १९५६ को राष्ट्रपति भवन में पत्रकारों के सम्पर्क में सम्मेलन होने के बाद जब राष्ट्रपति जी और आचार्य-श्री दोनों ऊपर चलने लगे तब आचार्य-श्री ने पूछा—दलाई लामा यहाँ आने वाले थे, क्या वे आ गये हैं?

राष्ट्रपति जी ने पूछा—क्या आपको उनसे मिलना है? मैं जाता हूँ, ऊपर से आपको खबर करवा दूंगा। ऊपर जाकर उन्होंने अपने सेक्रेटरी से कहलवाया कि आचार्य-श्री ऊपर पधारें। ऊपर जाते ही जिस कमरे में दलाई लामा और पंचेन लामा रहते थे, प० नेहरू भी उस समय उनसे बातें कर रहे थे। आचार्य-श्री को देखकर पंडित जी लामा से बातें करते करते बीच से उनको भी आचार्य-श्री के पास ले आये और उनके दुभाषिये के द्वारा आचार्य श्री का परिचय उनको दिया। उसने तिब्बती भाषा में उसका अनुवाद कर लामाओं को बताया।

नजदीक आने पर आचार्य-श्री ने कहा—राष्ट्रपति भवन में आज श्रमण संस्कृति की दो धाराएं-जैन और बौद्ध का मिलन हो रहा है इसकी हमें बड़ी खुशी है।

पंचेन लामा ने कहा—हम शायद आपसे कहीं मिले हैं?

आचार्य श्री ने कहा—नहीं, मिले तो नहीं हैं शायद आपने कहीं हमारा फोटो देखा होगा।

उन्होंने कहा—हां, हां।

मुनि श्री नगराज जी ने कहा—कुछ साहित्य और आचार्य-श्री का परिचय आपको भेजा गया था, वह आपने देखा होगा।

फिर आचार्य श्री ने गहन जी से कहा—

पंडित जी! आप इन्हें बतलाइये—हम अब आपके बैरागी ही बनते हैं और अभी-अभी तो ही पाल का पहला अध्याय ... दिनों में पूरी करते जा रहे हैं।

पंडित जी ने कहा—मैंने इन्हें अभी अभी नहीं बताया था। इस प्रकार थोड़ी देर का यह सम्पर्क बड़ा ही रोचक और प्रेरणा-दायक रहा।

सन्त (७)

बौद्ध भिक्षुओं के साथ
विश्व शान्ति साधन की खोज

श्री लंका से बुद्ध जयन्ती पर आये हुए बौद्ध भिक्षुओं ने ५ दिसम्बर १९५६ को प्रातः बाराखम्भा रोड २२ नम्बर पर आचार्य श्री से भेंट की। आसन ग्रहण करने के बाद प्रतिनिधि मंडल के प्रधान महास्थविर 'धर्मेन्द्र' ने कहा—आप और हम लोग दो नहीं हैं। श्रमण संस्कृति की दृष्टि से एक ही हैं।

आचार्य श्री—हाँ दोनों श्रमण परम्परा की दो धाराएँ हैं।

धर्मेन्द्र—सिलोन में ३० हजार भिक्षु हैं। उनमें से प्रति हजार पर एक प्रतिनिधि के रूप में ३० भिक्षु आये हैं। बहुत सुन्दर हुआ कि दोनों धाराओं का संगम हुआ। हमें मिल जुल कर एक अच्छी योजना तैयार करनी चाहिये। यह एक अवसर है। वर्तमान दुनिया बुरी तरह से क्षुब्ध है, वह शांति की खोज में है। हम जो रास्ता मार्ग बतायेंगे, उसका सारी दुनिया में प्रचार होगा। हम उस योजना को लेकर अमेरिका, जापान,

घान, तिब्बत आदि में घूमेंगे। इस प्रकार यह विश्व के लिये शान्ति का साधन बन सकेगी।

आचार्य-श्री—हां, हमारा तो इस प्रकार की योजनाओं के लिये चिन्तन चलता ही रहता है। हम समन्वय में ही सफलता दीखती है। अणुव्रत आन्दोलन के नियमों के प्रारंभ में तद्‌विषयक जैन-बौद्ध और वैदिक तीनों धर्मों के समन्वयात्मक पद्य हमने दिये हैं। इसके बाद कुछ और प्रश्नोत्तर हुए।

आचार्य-श्री—हां आप में और तिब्बत के दलाई लामा में क्या भेद है?

धर्मेश्वर—हम भी भिक्षु हैं और वे भी, किन्तु हम उष्ण देश के हैं और वे शीत देश के। अतः स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार अपना अपना आचार व्यवहार चलता है।

आचार्य श्री—दलाई लामा बुद्ध का अवतार माने जाते हैं यह कहां तक सत्य है?

धर्मेश्वर—यह कुछ नहीं यह तो केवल तिब्बती जनता की श्रद्धा है इसलिये वहां के वे परमेश्वर हैं। हो सकता है सिलोन में कोई बौद्ध इन्हें जानता भी न हो।

आचार्य श्री—आप महायान के अनुयायी हैं या हीनयान के?

धर्मेश्वर—सिलोन में नियम निकाय और अमर निकाय है। महायान या हीनयान अलग कुछ नहीं। हमारा साहित्य पाली में है अन्य ग्रन्थ है। इधर भारतीय बौद्ध विद्वानों ने जब संस्कृत में प्रचुर साहित्य लिखा, तब उन्होंने मूल पाली साहित्य को ही प्रमाणित मानने वालों को हीनयान और अपने आपको महायान कहना प्रारंभ किया, किन्तु इसे हम स्वीकार नहीं करते।

आगन्तुक भिक्षुओं में से भिक्षु "ज्ञान श्री" आगे आये और कहने लगे—हमारे यहां कुछ नियम पालन वाले और गरुएँ रंग के वस्त्रधारी को भिक्षु कहते हैं। हमने आप जैसे साधु कभी देखे नहीं आज ही

दर्शन का अवसर मिला है। हमें सब कुछ नया-नया लगता है। आपका बाह्य आकार प्रकार भी और आचरण भी। अत हम छोटी-बड़ी सभी बातें पूछना चाहते हैं। क्या आपकी आज्ञा है? आप क्रोध तो नहीं करेंगे?

आचार्य-श्री—क्रोध कैसा? हमें तो इससे प्रसन्नता अनुभव होगी। आनंद से पूछिये।

ज्ञान श्री—अच्छा फरमाइये यह आपके मुंह पर पट्टी क्यों लगी हुई है?

आचार्य श्री—यह अहिंसा के लिये है। जब हम बोलते हैं तब जो तेज व गर्म हवा निकलती है, उससे हिंसा होती है।

ज्ञान श्री—तब श्वासोच्छ्वास में भी सूक्ष्म जंतु मरते होंगे?

आचार्य श्री—नहीं, ऐसा नहीं है। आगमों के अनुसार बोलने से जो हवा मुंह से निकलती है, उसकी बाहर की हवा से टक्कर होती है, तब वायु के जीव मरते हैं। श्वासोच्छ्वास सहज हवा है, उससे वायु के जीव नहीं मरते दूसरे सूक्ष्म जीवों की तो बात ही क्या?

ज्ञान श्री—आप भिक्षु हैं या साधु?

आचार्य-श्री—हमारी मूल परंपरा में हमें निर्ग्रन्थ या श्रमण कहा जाता है। वैसे श्रमण, निर्ग्रन्थ, भिक्षु साधु पर्यायवाची नाम हैं।

ज्ञान श्री—श्रमण का क्या मतलब है?

आचार्य श्री—आध्यात्मिक श्रम करने वाला अर्थात् तपस्या करने वाला श्रमण कहलाता है।

ज्ञान श्री—तपस्या किसे कहते हैं?

आचार्य-श्री—तपस्या उस अनुष्ठान को कहते हैं जिससे आत्मा के बन्धन टूटते हैं। वह दो प्रकार का है—बाह्य और आभ्यंतर। उपवास आदि बाह्य तपस्या है और स्वाध्याय आदि आभ्यंतर।

ज्ञान श्री—बन्धन किसे कहते हैं?

आचार्य श्री—हमारी शुभाशुभ प्रवृत्ति से ही शुभ अशुभ परमाणु

फिर आकृष्ट होते हैं और प्रवृत्ति के अनुरूप परिणत हो आत्मा के साथ चिपक जाते हैं, आत्म चेतना को आवृत्त कर लेते हैं, उन आवरण को बन्धन कहते हैं।

ज्ञान श्री—बन्धन को दूर क्यों किया जाता है? उससे क्या हानि है?

आचार्य श्री—उससे हमारा आत्म विकास रुकता है।

ज्ञान श्री—इस वाक्य में दो शब्द आए हैं—'हमारा' और आत्मा, तो क्या ये दो हैं?

आचार्य-श्री—नहीं उपचार से ऐसा कह दिया गया, वास्तव में मैं और आत्मा एक है।

ज्ञान श्री—'मैं' यह शरीर का वाचक है या आत्मा का?

आचार्य-श्री—यह आत्मवाचक है।

ज्ञान श्री—तो यह सारा शरीर किससे प्रचालित है?

आचार्य-श्री—आत्मा के द्वारा।

ज्ञान श्री—तो आत्मा एक पृथक चीज है, शरीर एक पृथक चीज है?

आचार्य-श्री—हाँ।

ज्ञान श्री—शरीर का संचालक जैसे आत्मा है, वैसे कोई आत्मा का भी चालक है?

आचार्य-श्री—नहीं, आत्मा अनादि है यह स्व चालित है इसका कोई करने वाला नहीं।

ज्ञान श्री—आत्मा अनादि है, यह आप किस बल पर जानते हैं?

आचार्य श्री—दो आधारों पर—(१) आगम (गणिपिटक) और (२) अनुभव के आधार पर।

ज्ञान श्री—आगम किसे कहते हैं?

आचार्य-श्री—आप के जैसे त्रिपिटक हैं वैसे ही हमारे यहाँ गणिपिटक हैं उन्हें आगम कहते हैं अर्थात महावीर वाणी आगम है।

इस प्रकार लगभग घटाभर पारस्परिक सात्विक विचार विमर्श हुआ। अंत मे उन्होंने जन दर्शन को विशेषत जानने की जिज्ञासा व्यक्त की।

मन्थन (८)

'मारल रिआर्मेमेन्ट' के प्रतिनिधियों के साथ

हृदय परिवर्तन का माध्यम

५ दिसंबर १९५६ की रात्रि मे मारल रिआर्मेमेंट (नैतिक पुनरुत्थान के विदेशी आंदोलन) के तीन सदस्य मि० डब्ल्यू० इ० पाटर, मि० जी० एफ० स्टीफन्स, मि० ज० एस० हडसन तथा उसमे दिलचस्पी रखने वाले ससत्सदस्य श्री राजाराम शास्त्री आचार्य श्री के दर्शन करने आये।

मारल रिआर्मेमेंट के सदस्यों म से एक ने बताया कि उनका आंदोलन हृदय परिवर्तन के माध्यम से काम करता है। अपनी कहानी सुनाते हुए उन्होंने कहा—कि मैं शांति का उपदेश करता था पर अपने घर में काफी अशांति का राज्य था। एक दिन मेरे मन म विचार उठा कि मैं जब इतना अशांत रहता हू तथा पिताजी की अशांति का कारण बना हुआ हू तब मेरे द्वारा दिये गये शांति के उपदेश का क्या असर हो सकता है? तभी मैं अपनी सारी शक्ति बटोर कर पिताजी से क्षमा मांगने के तैयार हुआ। क्षमा मांगने पर पिताजी न कहा इस क्षमा मांगने का

प्रय तो तब निकल सकेगा जब तुम इस नम्र भावना को स्थायित्व दे सको। मैंने उनके शब्द शिरोधार्य किये। तब से हमारा व्यवहार मधुर हो गया और शान्ति रहने लगी।

शास्त्री जी ने कहा—एक बार मैं चुनाव में जीता था तो लोगों ने बड़ी बड़ी सभायें करके मेरा अभिनन्दन किया फूल मालाओं से लादा, चरणों में पड़े। मेरे मन में विचार आया लोग इतना करते हैं क्या मैं इसके योग्य हूँ? तभी मुझे लगा मैंने चुनाव में न जाने क्या-क्या किया है। अब भी लोगों से कुछ और कहता हू और कर गुजरता हूँ कुछ और ही। इस प्रकार विचार करते-करते मैं आत्मोन्मुख बना। उन्हीं दिनों में मारलरिआमिट के इन कार्यकर्त्ताओं से मेरी भेंट हुई और मैं इधर झुका। अब इसका प्रचारक बन गया हू।

आचार्य श्री—हम भी यही कहते हैं कि किसी भी बात का प्रचार करना तभी सार्थक हो सकता है जब वह जीवन में पूर्णतया उतर जाय। आपको जिज्ञासा होगी कि हम अणुव्रतों का प्रचार करते हैं तो क्या हम अणुव्रती हैं? हमारे यहाँ दो धाराएं चलती हैं, महाव्रत और अणुव्रत। हम लोग महाव्रती हैं पैदल चलते हैं किसी भी सवारी का उपयोग नहीं करते। हमारे पास एक भी पैसा नहीं, जमीन, मठ मंदिर नहीं। यहाँ तक कि हमारे पास भोजन का भी कोई प्रबन्ध नहीं। हमारी भोजन व्यवस्था भिक्षावृत्ति से चलती है, हम किसी एक घर का खाना नहीं लेते बिना किसी भेद भाव के अनेक घरों में जाते हैं और थोड़ा थोड़ा लेकर अपनी आवश्यकता को पूर्ण कर लेते हैं। यह चर्या महाव्रतियों की है।

अणुव्रती वे हैं जो इनको आंशिक रूप में पालते हैं। हम अणुव्रतों का सब वर्गों में, सब जातियों में प्रचार करते हैं। हम लोग हृदय परिवर्तन पर ही जोर देते हैं। आप लोग (मो० रि० संस्थापक) 'बकमैन' से कहिये कि वे जो हृदय परिवर्तन के माध्यम से काम करते हैं, उसे स्थायित्व देने के लिये उसके लिए कुछ नियम भी आवश्यक हैं।

आंदोलन और मारल रिआर्मामेंट दोनों मिलकर कुछ करें तो नैतिक जागृति का अच्छा काम हो सकता है ।

एक कार्यकर्ता—यह इसकी शुरुआत समझनी चाहिये ।

आचार्य-श्री—आप के इस प्रचार के विषय में कुछ आक्षेप भी सुनने को मिले हैं ।

एक कार्यकर्ता—हो सकता है कि लोग इसकी नैतिक चुनौती सहन न कर सके हों ।

आचार्य-श्री—हां, ऐसा भी हो सकता है, पर मैंने साधारण व्यक्तियों से नहीं अच्छे लोगों से सुना है । कुछ लोगों का कहना है कि इसका प्रचार जो नाटकों और नृत्यों द्वारा किया जाता है उसका प्रभाव जनता पर अच्छा नहीं पड़ता । कुछ व्यक्ति इसे राजनैतिक चाल समझते हैं तो कुछ ईसाई बनाने का तरीका मात्र मानते हैं । इसमें उनकी कोई श्रद्धा नहीं उल्टा इसे घृणा की दृष्टि से देखते हैं ।

एक कार्यकर्ता—आचार्य श्री सब चीजों का सब तरह ध्यान रखते हैं । आपने इसका कितनी गहराई से अध्ययन किया है ।

आचार्य-श्री—आप की जो आलोचना की जाती है उसको यद्यपि मैं पूर्णतया ठीक नहीं मानता पर इस विषय में आप को काफी सतर्क रहना चाहिये । क्या आंदोलन के सदस्यों के लिये आवश्यक है कि वे मांस न खायें, नशा न करें ?

कार्यकर्ता—ऐसा कोई नियम नहीं है । पर हम मद्य निषेध की चेतावनी जरूर दे देते हैं ।

आचार्य-श्री—क्या सदस्यों का रजिस्टर है ?

कार्यकर्ता—नहीं ।

आचार्य-श्री—भारत में इसका प्रचार कहां कहां हुआ है ।

कार्यकर्ता—बम्बई, पूना, कलकत्ता आदि बड़े-बड़े शहरों में तथा कहीं कहीं गांवों में भी इसका कार्य चालू है ।

'इंडियन एक्सप्रेस' के समाचार सम्पादक के साथ

धन-धर्म का कोई सम्बन्ध नहीं

ता० ६ दिसंबर १९५६ को १९ बाराखम्भा रोड पर 'इंडियन एक्सप्रेस' के समाचार सम्पादक श्री चमनलाल पुरी आचार्य श्री के दर्शनार्थ आये। आते ही उन्होंने पूछा—आचार्य जी आप यहाँ कहाँ से आये हैं और क्यों आये हैं?

आचार्य प्रवर ने अपना उद्देश्य समझाते हुये आंदोलन की बात बताई और कहा अणुव्रत आंदोलन को आज राष्ट्र की पूर्ण मान्यता प्राप्त है और जन जन में इसकी चर्चा है।

पुरी— दिल्ली नगर में इसकी कैसी प्रगति है?

आ० यहाँ इसका अच्छा कार्य चल रहा है, लोगों ने इसकी भावना समझी है और यथाशक्ति इसको जीवन में उतारने का प्रयत्न किया है। थोड़े ही दिन पहले यहाँ 'विद्यार्थी अणुव्रत पर्व' मनाया था, जिसमें अनेक छात्रों ने नशा न करने की तथा नैतिक जीवन बिताने की प्रतिज्ञा ली थी। उससे पहले व्यापारियों में भी इस प्रकार का कार्यक्रम चल चुका है। उसमें मिलावट न करने की, कम तोल माप न करने की प्रतिज्ञाएं रखी गई थीं और उन्होंने उनका स्वागत किया था। इस प्रकार हम जन साधारण में विचार क्रांति पैदा करने का प्रयास कर रहे हैं। हमारे प्रचार का माध्यम अणुव्रत आंदोलन है। किन्तु इसके प्रचार में जितना सहयोग अपेक्षित है उतना नहीं मिल रहा है।

पुरी— कई बार कई समाचार पत्रों में आंदोलन की चर्चा पढ़ते हैं

किन्तु मैं भी यह मानता हूँ कि हम पत्रकार इसमें विशेष हाथ नहीं बटा रहे हैं।

आचार्य श्री—यह पत्रकारों की नम्रता है। मैं आप से यह कहूँगा कि आप इस आंदोलन की भावना को सही सही समझने का प्रयास करें। फिर आप को जैसा लगे, उसे हमें बतायें। केवल इससे दूर रह कर आप एक बहुत बड़े कर्तव्य से वंचित रह जाते हैं। मैं आप से यह नहीं कहता कि आप जबरदस्ती इसके प्रसार में समय लगावें। किन्तु इतना अवश्य कहूंगा कि यदि आप नैतिकता का प्रचार अपने जीवन का एक कर्तव्य मानते हैं तो फिर उससे क्यों पीछे रहते हैं?

सम्पर्क (१)

श्री मोरारजी देसाई के साथ

अनशन आत्मशुद्धि

ता० ६ दिसम्बर १९५६ को प्रातःकाल पंचमी समिति से निवृत्त हो अपने प्रायः सभी साधुओं सहित आचार्य प्रवर बम्बई राज्य वाणिज्य मंत्री श्री मोरार जी देसाई की कोठी पर पधारे। पाठ की तरफ के बरामदे में आचार्य-श्री एक छोटे से पट्टे पर आसीन हुए। मोरार जी भाई आए और वन्दना कर नीचे बिछे आसन पर बैठ गये। प्रायः एक घण्टे तक अति मधुर संवाद हुआ। लगभग ४० ५० भाई बहिन साथ में थे।

शिष्टाचार की वार्ता के बाद आचार्य श्री ने कहा—इस बार आपने जो अनशन किया, उसमें आप पानी के अतिरिक्त क्या लेते थे?

मो०—पानी मे कुछ नींबू का रस मिला दिया जाता था, वही मैं लेता था।

प्रा०—आपने उसमें क्या अनुभव किया ?

मो०—मुझे विशेष शान्ति का अनुभव हुआ। मानसिक द्वन्द्व नष्ट हो गये। अनशन में मेरी यह भावना बलवती बनी कि हिंसा कभी हिंसा से नहीं मरती अहिंसा से ही उसको मिटाया जा सकता है। वही हुआ। मुझ से कुछ साथियों ने कहा "शरीर निर्बल हो रहा है अनशन तोड़ दीजिए"। पर मैंने कहा-मेरा प्रण जब पूरा होगा तभी इस विषय में सोचा जायगा। शारीरिक अस्वस्थता मुझे जरूर सताती थी पर उससे मेरा मनोबल शिथिल नहीं पड़ा प्रत्युत बढ़ा। भौतिक पदार्थ प्राप्ति के लिये जो अनशन करते हैं वह ठीक नहीं। आत्मशान्ति के लिए ही उसका उपयोग होना चाहिए।

प्रा०—हाँ यह ठीक है। जीवन का या जीवन के कर्मों का उत्सर्ग आत्म शान्ति के लिए ही होना है बाह्य शान्ति तो स्वतः सध जाता है। अभी थोड़े दिन पहले सरदार शहर में हमारे एक साधु श्री सुमतिचन्द जी ने आत्म साधना के लिए आजीवन अनशन किया था। उनकी सारी घटना आचार्य श्री ने उन्हें सजीव शब्दों में कह सुनाई। श्री मोरारजी भाई रोमांचित हो उठे। बीच बीच में कई जिज्ञासायें भी की-वार्त्तालाप का अच्छा असर रहा।

अणुव्रत आंदोलन की बात चलने पर मोरारजी भाई ने कहा—अच्छा है आप प्रेरणा दे रहे हैं। आपका यही कर्तव्य है और आप उसे पूरी तरह निभा रहे हैं। आपके इन प्रयत्नों से लोग लाभ उठायें या नहीं यह उनकी इच्छा है। व्यक्ति स्वयं ही अपना सुधार कर सकता है। दूसरे केवल प्रेरणा दे सकते हैं सुधार नहीं सकते। आप अपना कार्य करते रहें।

प्रा०—अब आप पर और अधिक बजन आ गया है।

अधिवश और ज्यादा फस जाता हू। जितनी ही असग्रह की भावना करता हू उतना ही सग्रह के कामों मे ढकेल दिया जाता हूँ।

बीच मे मता न कहा—'कांग्रस के कोषाध्यक्ष भी आप ही हैं'
मो०—हाँ एसा ही कुछ योग है। मुझे इसमे कुछ रस नहीं आता। मेरी रुचि का विषय है अध्यात्मवाद। उसमे रस आता है।

आ०—सुना है केन्द्र मे दीक्षा और बालदीक्षा विषयक कोई बिल आने वाला है।

मो०—हाँ ऐसी कुछ चर्चा तो है।

आ०—किन्तु इस प्रकार क बिल अध्यात्मवाद के प्रतिकूल पड़ेंगे। यह धम क मामलों मे हस्तक्षप है। इस विषय में आप लोगों को सोचना चाहिये। बम्बई असेम्बली में जब बालदीक्षा के विरोध मे बिल आया था तब आपन जो कुछ कहा था उसका अच्छा असर रहा। लोगो को उस विषय मे सोचन का मौका मिला था।

मो०—मैं तो इस बार भी चूकनवाला नहीं हू, वसे ही बोलूगा। डटकर बिल का विरोध करूगा। पर हू अकेला। नतिक शक्ति अकेली भी बहुत बडी चीज है ऐसा मेरा विश्वास है।

समय काफी हो गया था। आचाय श्री को दूसरी जगह पधारना था। वार्ता को यहीं समाप्त किया। श्री मोरार जी भाई ने वन्दना की। आचाय श्री न वहाँ से प्रस्थान कर दिया।

राजर्षि टंडनजी के यहाँ

आचाय श्री श्री मोरार जी देसाई के यहाँ से राजर्षि श्री पुरुषोत्तम दास जी टंडन के निवास स्थान पर पधारे। टंडन जी बीमार थे इसलिए प्रणवत गोष्ठी म आन की इच्छा होत भी न आ सके। अपनी बीमारी क कारण उन्होंन कहा था—मैं आचाय श्री से मिलना तो जरूर चाहता हू पर मै तो अशक्त हू। वहाँ आ नहीं सकता। आचाय श्री यहाँ आवेंगे तो उन्हें बहुत कष्ट होगा। अत उन्हें यहाँ आन का निवेदन करो कह।

आचार्य प्रवर उनके श्रद्धाशील मानस की भावना को जानकर उनके घर पधारे। वहाँ पहुँचते ही भदन्त आनन्द कौसल्यायन (बौद्ध विद्वान) अन्दर से निकल ही रहे थे आचार्य-श्री से उनकी मुलाकात हुई। कुछ थोड़ी सी बातचीत भी हुई। टंडन जी ने लेटे लेटे ही हाथ जोड़ प्रसन्नता प्रकट की।

टंडन जी बहुत ही अशक्त थे। बोलने में कष्ट होता था। फिर भी उन्होंने कम्पित स्वर से कहा—"आप में बौद्धिक चिन्तन है, आप समाज का पुनः पाप से उद्धार कर सकते हैं, आपमें यह सामर्थ्य है"।

आचार्य श्री ने उन्हें मंगल पाठ सुनाया। श्रद्धापूर्वक हाथ जोड़े वे उसे सुनते रहे।

६ १० मील के विहार के बाद आचार्य श्री ११½ बजे वापिस निवास स्थान पर लौट आये।

मन्थन (११)

विदेशी मुमुक्षुओं के साथ

जैनागम शब्द कोष पर चर्चा

७ दिसम्बर १९५६ की रात्रि में जर्मनी के तीन विद्वान श्री अल्फ्रेड मायर, फ्रेड बाल्टर लाइफर, वान हार्ड हाइवेच और अमेरिका की एक महिला आचार्य-श्री से मिले।

आचार्य प्रवर ने उनको तेरापंथ व जैन मुनियों के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी दी। 'तेरापंथ' का अर्थ सुन वे अतीव प्रसन्न हुए।

आचार्य ने कहा—'हमारे यहाँ अनेक भाषाओं का

चाता है। 'जनागम नन्द कोष के निर्माण की एक बहुत बड़ी प्रवृत्ति चालू है। कुछ कार्य हुआ भी है।

मिस्टर धाल्टर ने कहा—हाँ हमें इसकी सूचना मिली है। जर्मन विद्वान डा० रोथ आपके यहाँ गये थे। तब उन्होंने जर्मन वृत्तपत्रों तथा जर्मनी वासियों के अन्य स्थानों में यह सूचना प्रसारित की थी कि—"आप लोग कभी अवश्य समय निकालकर आचार्य श्री तुलसी से मिलें। वे एक स्वस्थ धार्मिक संस्था के नेता हैं। इसके अनुशासन में अत्यंत व्यवस्थित रूप से आत्म साधना तथा अन्य सफल साधनाएँ चलती हैं। यहाँ जो जनागमों का एक शब्दकोष तैयार हो रहा है, उसे देखकर आश्चर्यान्वित रह गया। इसके निर्माण में अनेक साधु लगे हैं।" इस सूचना के फलस्वरूप हम आपके दर्शनार्थ आये हैं।

सन्धा (१२)

प्रधानमन्त्री श्री नेहरू के साथ

अणुव्रत आन्दोलन मे नेहरू जी की आस्था

८ दिसम्बर १९५६ को प्रातःकाल अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रसंग उपस्थित हुआ जब दो महान नेताओं का एक दूसरे के साथ चिरप्रतीक्षित सम्मिलन हुआ। आचार्य श्री ने मानव के आध्यात्मिक और सांस्कृतिक निर्माण का जो दायित्व अपने कन्धों पर ओढ़ा है, उसके कारण उनका व्यक्तित्व वैसे ही एक आकर्षण का विषय बन गया है जैसे कि हमारे नेता श्री नेहरू के व्यक्तित्व के प्रति गहनतम अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के कारण एक आकर्षण उत्पन्न हो गया है। एक राजनैतिक क्षेत्र के महान

हैं तो दूसरे आध्यात्मिक क्षेत्र में बड़ी ही महानता सम्पादन किये हुए हैं। आज वास्तव में ही गंगा यमुना की दो विशाल धाराओं का संगम हुआ।

प्रधान मन्त्री श्री नेहरू की कोठी पर

८॥ बजे आचार्य-श्री पंडित नेहरू की कोठी पर पधारे। पंडित जी की सेक्रेटरी श्रीमती विमला ने आचार्य श्री का स्वागत किया। २८ साधु और साध्वियां तथा सैकड़ों गृहस्थ साथ थे। कोठी के पिछले बरामदे में साधुओं ने पट्ट बिछाया। नेहरू जी २० मिनट बाद आये। आचार्य श्री ने साधु-साध्वियों का परिचय कराया। फिर साधु साध्वियां एक ओर बैठ गये। पंडित जी आचार्य श्री के पट्ट के पास बिछे हुए आसन पर बैठ गये और बातचीत प्रारम्भ हुई।

आचार्य श्री ने कहा—आप २० मिनट लेट हैं।

नेहरू जी—हां, आवश्यक तार आया था और मेरी बेटी बीमार है, इसलिये विलम्ब हो गया।

आचार्य श्री—और ४ वर्ष बाद मिलन हो रहा है। इस वर्ष हमारा चातुर्मास सरदार शहर था। हमारे साधु आपसे मिले थे। आन्दोलन के बारे में आपको जानकारी दी थी। उसकी प्रगति से अवगत कराया था। विद्यार्थियों के कार्यक्रम में आपने भाग लेने को कहा था। और "आचार्य श्री को यहां बुलाइये" यह भी कहा था। मैंने इस पर यहां आने का निर्णय किया। इसके साथ दूसरा कारण युनेस्को सम्मेलन भी है। इन दोनों कारणों से मैं अभी अभी यहां आया हूं। १८ नवम्बर तक तो चातुर्मास था इसलिये उससे पहले हम वहां से चल नहीं सकते थे। ता० २९ नवम्बर को चल ३० को यहां पहुंच गये।

पंडित जी ने आश्चर्य भरे शब्दों में कहा—बहुत कठिन काम है। आपने शरीर के साथ ज्यादती की।

आचार्य श्री—मैं चाहता हूं आज हम स्पष्टरूप से विचार विमर्श करें। हमारा यह मिलन औपचारिक न होकर वास्तविक हो।

हम जानते हैं कि गांधीजी व आप लोगों के प्रयत्नों से भारत को आजादी मिली। पर आज देश की क्या स्थिति है, चरित्र गिरता जा रहा है। कुछ व्यक्तियों को छोड़कर देश का चित्र खींचा जाये तो वह स्वच्छ नहीं होगा। यही स्थिति रही तो भविष्य कैसा होगा? बात ठीक है, पर किया क्या जाय? कारा बातों से चरित्र उन्नत नहीं होगा। लोगों को कुछ काम दिया जाय तब वह होगा। काम से मेरा मतलब बेकारी मिटाने का नहीं है। काम से मेरा मतलब है चरित्र सम्बन्धी कोई काम दिया जाय। यही मैं चाहता हूँ। अणुव्रत आन्दोलन ऐसी ही स्थिति पैदा करना चाहता है। हम छोटे छोटे व्रतों के द्वारा जीवन स्तर को ऊंचा उठाना चाहते हैं। पांच वर्ष पूर्व मैंने आपको इसकी गतिविधि बताई थी। आपने सुना अधिक, कहा कम। आपने आज तक कुछ भी सहयोग नहीं दिया। सहयोग से मतलब हम पैसा नहीं लेना है। यह आर्थिक आन्दोलन नहीं है।

नेहरू—मैं जानता हूं आपको पैसा नहीं चाहिये।

आ०—इस आन्दोलन को मैं राजनीति से जोड़ना नहीं चाहता।

ने०—मैं तो राजनीतिक व्यक्ति हूं, राजनीति से ओतप्रोत हूं, फिर मेरा सहयोग क्या होगा?

आ०—जैसे आप राजनीतिक हैं, वैसे स्वतन्त्र व्यक्ति भी हैं। हम आपके स्वतन्त्र व्यक्तित्व का उपयोग चाहते हैं—राजनीतिक जवाहर लाल नेहरू का नहीं। पहली मुलाकात में आपने कहा था—'मैं उसे पढ़ूंगा' पता नहीं आपने पढ़ा या नहीं।

ने०—मैंने यह पुस्तक (अणुव्रत आन्दोलन की) पढ़ी है पर मैं बहुत व्यस्त हूं। आन्दोलन के बारे में मैं कह सकता हूं।

आ०—आपने कभी कहा तो नहीं, दूसरा कोई कारण है? या तो यह हो सकता है कि आप इस आन्दोलन को उपयोगी नहीं समझते। बीच में नेहरू जी ने कहा यह कैसे हो सकता है? या यह हो सकता है कि आपको इसमें साम्प्रदायिकता जैसी कोई बात लगती है। वेषभूषा को देख

आपको यह लगता हो कि ये हमारे द्वारा कोई स्वार्थ साधना चाहते हैं पर मैं स्पष्ट कहना चाहता हू कि मैं जन हू । जन धर्म म विश्वास करता हूँ। जन श्वेताम्बर तेरापंथ सम्प्रदाय का संचालक हू । पर इस आन्दोलन के द्वारा कोई स्वार्थ साधन नहीं चाहता । यह आन्दोलन व्यापक है । जाति सम्प्रदाय आदि भेदों से परे है । इस पर भी किसी को साम्प्रदायिक लग तो दूसरी बात है—यू तो आप भी हिन्दू हैं । किन्तु राजनतिक नेतृत्व हिन्दूपन से नहीं है ।

नें०—मैं जानता हू आपका आन्दोलन साम्प्रदायिकता से परे है। ठीक चल रहा है ।

आ०—हमारे सकडों साधु साध्वियाँ चरित्र विकास के काय म सलग्न हैं। उनका आध्यात्मिक क्षत्र मे यथेष्ट उपयोग किया जा सकता है ।

न०—क्या 'भारत साधु समाज' से आप परिचित हैं ?

आ०—जिस भारत सेवक समाज के आप अध्यक्ष हैं उससे जो सम्बन्धित है, वही तो ?

नें०—हाँ भारत सेवक समाज का मैं अध्यक्ष हू। यह राजनतिक संस्था नहीं है। उसी से सम्बन्धित वह 'भारत साधु समाज' है।

न०—आप श्री गुलजारीलाल नन्दा से मिले हैं ?

आ०—पाँच वष पहले मिलना हुआ था। भारत साधु समाज स मेरा सम्बन्ध नहीं है। जब तक साधु लोग मठों और पसा का मोह नहीं छोडते तब तक वे सफल नहीं हो सकते ।

न०—साधुओं न धन का मोह तो नहीं छोडा है । मैंने नन्दा जी से कहा भी था तुम यह बना तो रहे हो पर इसमे खतरा है।

आ०—जो मैं सोच रहा हू वही आप सोच रहे हैं। आज आप ही कहिये, उनसे हमारा सम्बन्ध कसे हो ?

न०—उनसे आपको सम्बन्ध जोडन की आवश्यकता भी नहीं है। साधु समाज अगर काम करे तो अच्छा हो सकता है, ऐसी मेरी धारणा

है। पर काम होना कठिन हो रहा है।

आ०—आपको पता है अभी तीन दिनों तक अणुव्रत गोष्ठी चली थी।

न०—हां मैंने पत्रों में पढ़ा है।

आ०—उसमें लोग आपका उपयोग लेना चाहते थे पर स्थितिवश वैसा नहीं हो सका। राष्ट्रपति उपराष्ट्रपति और श्री अनन्तशयनम् अय्यंगार भी अस्वस्थ्य व पारिवारिक उलझनों के कारण 'अणुव्रत गोष्ठी' का उद्घाटन नहीं कर सके। यह कार्य यूनस्को के डाइरेक्टर जनरल डा० लूथर इवेंस द्वारा हुआ। उन्हें अणुव्रत आन्दोलन बहुत भाया। [प० नेहरू ने यह बहुत आश्चर्य से सुना।] मैंने उन्हें (लूथर इवेंस को) यूनस्को द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मैत्री दिवस मनाने का सुझाव दिया। वे सोचेंगे—ऐसा उन्होंने कहा। मैं आपसे सुझाव लेना चाहता हूं। क्या विचार है?

न०—कैसे?

आचार्य-श्री ने उसका स्पष्टरूप समझाया और कहा, यह दिवस विश्व मैत्री की दृष्टि से आपके पंचशील की आधार शिला बन सकता है।

न०—पंचशील! मैंने चलाया तो नहीं, काम में जरूर लिया है। (पूर्व प्रसंग को छूते हुए कहा) यह (मैत्री दिवस मनाने का) काम तो अच्छा है पर चलने से ही। यह चले तो इसके सम्बन्ध में मैं कह सकता हूं कुछ कर सकता हूं।

आ०—पंचशील के बारे में आप निश्चिन्त हैं कि सब लोग ठीक चल रहे हैं।

न०—नहीं, ऐसा तो नहीं है।

आ०—इस विषय में आपको सोचना चाहिये।

न०—सोचने का समय नहीं है। बहुत व्यस्त हूं। सोचने का अवकाश मिल नहीं रहा है।

आ०—डा० लूथर इवेन्स ने कहा था कि मैत्री दिवस के बारे में

विज्ञान भवन में मैं कुछ बोलूं। उन्होंने सरकार को पत्र भी लिखा होगा किन्तु उन्हें अनुमति नहीं मिली।

न०—यह अस्वीकृत क्यों किया गया मुझे पता नहीं है।

आ०—यह तो मुझे भी मालूम नहीं है।

इसके पश्चात् कुछ अतरंग बात भी हुई। तेरापंथ और उसकी स्थिति के बारे में वार्तालाप हुआ। लगभग ४८ मिनट तक विचार विनिमय होता रहा। पांच वर्ष पहले हुई मुलाकात में पंडित जी ने सुना अधिक और बोले कम। इस बार चर्चा में बहुत अधिक रस लिया।

वार्तालाप की समाप्ति पर पंडित जी ने कहा—'आन्दोलन की गतिविधि को मैं जानता रहूं ऐसा हो तो बहुत अच्छा रहे। आप नदा जी से चर्चा करते रहिये। मुझे उनके द्वारा जानकारी मिलती रहेगी। मेरी उसमें पूरी दिलचस्पी है।

वार्तालाप की समाप्ति के बाद नेहरू जी आचार्य श्री को कोठी से नीचे तक पहुंचाने आये।

मन्थन (१३)

श्री अशोक मेहता के साथ

चुनाव शुद्धि पर चर्चा

प्रवचन के बाद ६ दिसंबर १९५६ को समाजवादी नेता श्री अशोक मेहता आचार्य जी के साथ विचार विनिमय करने आये। श्री मेहता ने पूछा—आजकल आपका कार्यक्रम कहां चलता है?

आचार्य श्री—हमारे साथ-साथियां देश के विभिन्न भागों में

है । पर काम हाता कठिन हो रहा है ।

आ०—आपको पता है, अभी सात दिनों तक 'अणुव्रत गोष्ठी' चला थी ।

ने०—हाँ मैंने पत्रों में पढ़ा है ।

आ०—उसमें लोग आपका उपयोग लेना चाहते थे, पर स्थितियाँ वसा नहीं हो सका । राष्ट्रपति उपराष्ट्रपति और श्री अनन्तशयनम् आय्यगार भी अस्वस्थ व पारिवारिक उलझनों के कारण 'अणुव्रत गोष्ठी' का उद्घाटन नहीं कर सके । यह काय यूनस्को के डाइरेक्टर जनर डा० लूथर इवेंस द्वारा हुआ । उन्हें अणुव्रत आन्दोलन बहुत भाया (प० नहरू ने यह बहुत आश्चय से सुना ।) मैंने उन्हें (लूथर इवेंस को) यूनस्को द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर 'मत्री दिवस' मनाने का सुझाव दिया । वे सोचेंगे—एसा उन्होंने कहा । मैं आपसे सुझाव लेना चाहता हूँ । क्या विचार है ?

ने०—क्या ?

आचाय श्री ने उसका स्पष्टरूप समझाया और कहा यह विश्व मत्री की दृष्टि से आपके पचशील को आधार मिला सकता ।

ने०—पचशील ! मैंने चलाया तो नहीं, काम मे जरूर लिया है । (पूव प्रसग को छेड़ते हुए कहा) यह (मत्री दिवस मनाने का) काम तो अच्छा है पर चलने से ही। यह चले तो इसके सम्बन्ध में मैं कह सकता हूँ, कुछ कर सकता हू ।

आ०—पचशील के बारे मे आप विश्वस्त हैं कि सब लोग ठीक चल रहे हैं।

ने०—नहीं एसा तो नहीं है ।

आ०—इस विषय में आपको सोचना चाहिये ।

ने०—सोचने का समय नहीं है । बहुत व्यस्त हूँ । सोचने का अवकाश मिल नहीं रहा है ।

आ०—डा० लूथर इवेंस ने चाहा था कि मत्री दिवस के बारे में

विज्ञान भवन म मैं कुछ बोलू । उन्होंने सरकार को पत्र भी लिखा होगा किन्तु उ हे अनुमति नहीं मिली ।

न०—यह अस्वीकृत क्यों किया गया, मुझ पता नहीं है ।

आ०– यह तो मुझे भी मालूम नहीं है ।

इसके पश्चात कुछ अतरग बातें भी हुई । तेरापथ और उसकी स्थिति क बारे म वार्तालाप हुआ । लगभग ४८ मिनट तक विचार विनिमय होता रहा । पांच वष पहल हुई मुलाकात म पडित जी न सुना अधिक और बोले कम । इस बार चर्चा म बहुत अधिक रस लिया ।

वार्तालाप की समाप्ति पर पडित जी न कहा—"आन्दोलन की गतिविधि को मैं जानना रहू ऐसा हो तो बहुत अच्छा रहे । आप नदा जी से चर्चा करत रहिये । मुझ उनक द्वारा जानकारी मिलता रहेगी । मेरी उसमे पूरी दिलचस्पी है ।

वार्तालाप की समाप्ति क बाद नहरू जी आचाय श्री को कोठी से नावे तक पहुँचान आये ।

प्रवचन (१३)

श्री अशोक मेहता के साथ

चुनाव शुद्धि पर चर्चा

प्रवचन के बाद ६ दिसबर १६५६ को समाजवादी नता श्री अशोक मेहता आचाय श्री के साथ विचार विनिमय करने आये । श्री मेहता ने पूछा—आजकल आपका कायक्रम कहाँ चलता है ?

आचाय-श्री—हमारे साधु-साध्वियां देश के विभिन्न भागों में,

जहाँ जहाँ वे पयटन करते हैं, वहाँ हमारा जन जन में नतिक निर्माण-कारी काम चल हो रहा है। दिल्ली म अच्छा कायक्रम चल रहा है।

श्री मेहता—अणुव्रती व्रत लेते हैं, व उनका पालन करते हैं या नहीं इसका आपको क्या पता रहता है?

आचाय श्री—प्रतिवप होने वाले अणुव्रत अधिवेशनो मे जब अणुव्रती परिषद के बीच अपनी छोटी छोटी गलतियों का भी प्रायश्चित्त करते हैं इससे पता चलता है वे व्रत पालन की दिशा मे सावधान हैं। कई लोग वापस हट भी जाते हैं। इससे भी ऐसा लगता है कि जो प्रतिवप व्रत लेते हैं वे उन्हें दृढ़ता से पालते हैं। अणुव्रतियों मे अधिकाश जो हमारे सम्पक म आते रहते हैं उनकी सार सम्हाल तो मैं और सौ सवासौ जगह अलग अलग घूमने वाले हमारे साधु-साध्वियां लेते रहते हैं। कठिनाई के कारण अगर कोई व्रत नहीं पाल सकता तो उसे अलग कर दिया जाता है और ऐसा हुआ भी है। इस पर से खरे उतरने वाले अणुव्रतियो का भाग नब्बे प्रतिशत रहता है।

हम नतिक सुधार का जो काम कर रहे हैं उसमे हमे सभी लोगों के सहयोग की अपेक्षा है। रुपये पसे के सहयोग की हमे अपेक्षा नहीं है। हम चाहते हैं अच्छे लोग यदि समय समय पर अपने आयोजनों में इसकी चर्चा करते रहें तो इससे आन्दोलन गति पकड सकता है। अत हम आपसे भी चाहेंगे कि आप हमें इस प्रकार का सहयोग दें।

श्री मेहता—उपदेश करने का तो हमारा अधिकार है नहीं, क्योंकि हम लोग राजनतिक व्यक्ति हैं। राजनीति मे जिस प्रकार हमने निर्लोभ सेवा की है, उस पर से हमें उसके सबध में कहने का अधिकार है। पर धम का हम उपदेश नहीं कर सकते और करना भी नहीं चाहिये। बस मैं तो कभी कभी इसकी चर्चा करता हू और आगे भी करता रहूगा।

चुनाव के सबध मे किये जाने वाले कायक्रम को लेकर जब उन्हें उनकी पार्टी का सहयोग देने के लिये कहा गया तो उन्होंने कहा— मैं

तो अभी यहाँ रहने वाला हूँ नहीं। हमारी पार्टी के दूसरे सदस्य इस कार्यक्रम में जरूर भाग लेंगे। पर काम केवल घोषणा से नहीं होने वाला है। इसके लिये तो खड़े होने वाले उम्मीदवारों और [illegible] को जागरूक बनाने की आवश्यकता है। अतः आप जनता में भी [illegible] करें।

आचार्य श्री—हाँ यह तो हम कर ही रहे हैं। अभी जब हम [illegible] में से गुजर रहे थे तो एक जगह देहाती लोग मेरे पास आये और [illegible]— महाराज! हम अब वोट को जानते नहीं हमारे पास [illegible] लेने आयेंगे, आप ही बता दीजिये कि हम वोट किसको देवें [illegible] चोरों को तो हम जानते हैं नहीं आप कहेंगे उन्हें वोट देंगे।

मैंने कहा—भाई! यह तो तुम स्वयं जानो पर एक [illegible] लोगों से जरूर कहूँगा कि वोट लेने के लिये कम से कम [illegible] तो मत बनो। इस प्रकार जनता में हमारा प्रयास [illegible] है [illegible] उम्मीदवारों में भी [illegible] करना चाहते हैं।

कुछ विशिष्ट व्यक्तियों का [illegible]

व्याख्यान के बाद दिन में श्री एन० [illegible] आये। काफी समय तक विभिन्न विषयों पर [illegible]।

आहार के बाद संसत्सदस्य सेठ गजाधर [illegible] आदि के बारे में कुछ देर तक बात चली।

तदनन्तर कांग्रेस के महामन्त्री श्री [illegible] श्रीमती मदालसा जी आई। उनसे [illegible] सप्ताह' के बारे में विचार विनिमय हुआ। [illegible] मिलाई और अपने सुझाव भी रखे। [illegible] 'सामूहिक ध्यान' का कार्यक्रम हुआ।

श्री गुलजारी लाल नन्दा के साथ

नैतिक सुधार के आन्दोलन

ता० ९ दिसबर १९५६ को प्रार्थना के बाद केन्द्रीय योजना मंत्री श्री गुलजारीलाल नन्दा ने आचार्य श्री के दर्शन किये। बातचीत के सिलसिले में उन्होंने कहा—मैं आज सुबह आपके दर्शनार्थ आने वाला था। मैंने पता भी लगाया पर आप सुबह कहीं प्रवचन करने गये हुये थे। मेरा तो आप से पुराना सम्पर्क है। नेहरू जी ने मुझे कहा था कि आचार्य श्री तुलसी जो काम कर रहे हैं, उससे मुझे अवगत रहना चाहिये।

आचार्य श्री—हाँ, पाँच वर्ष पहले आप मिले थे, उसके बाद मिलना नहीं हुआ। आपने जो 'भारत साधु समाज' नामक संगठन किया है, उसके विकास आदि के लिये काफी समय देना पड़ता होगा?

नन्दा—हाँ, जो काम प्रारम्भ किया है उसके लिये समय तो देना ही पड़ता है अन्यथा वह चीज पनप नहीं सकती।

आचार्य-श्री—देश में नैतिक सुधार के जो काम चालू हैं उनसे भी आपको परिचित रहना चाहिये। क्योंकि वे भी देश के लिये ही हैं।

नन्दा—यह तो ठीक है, नैतिक उत्थान का कार्य किधर से भी हो, वह प्रशंसनीय है। मैं आपके आन्दोलन से परिचित हूं। लेकिन अपने अपने क्षेत्रों के अनुसार सुधार का काम अपने अपने तरीकों से हो रहा है। उसमें एकरूपता नहीं आती और संगठन का महत्व भी उसमें नहीं आता। अतः मिलकर काम किया जाये तो अधिक व्यवस्थित और अधिक सुन्दर काम होने की सम्भावना रहती है। आप भी इस मे हमारा सहयोग कर सकें तो अच्छा रहे।

श्री महेन्द्र मोहन चौधरी के साथ

अणुव्रत आन्दोलन की भावना

१० दिसम्बर १९५६ को सायं प्रतिक्रमण करने के बाद कांग्रेस कमेटी के जनरल सेक्रेटरी श्री महेन्द्रमोहन चौधरी आचार्य श्री के दर्शन करने आये। आचार्य श्री ने उनको अणुव्रत आन्दोलन की जानकारी दी। विभिन्न वर्गों में चलते हुये नैतिक काम से अवगत कराकर आचार्य-श्री ने कहा—जनता को तो हमने इसकी काफी भावना दी पर अब हम चाहते हैं कि ऊंची श्रेणी के लोग इसमें आयें। जब तक ऊंचे के लोग इसमें नहीं आयेंगे, तब तक जन साधारण इसका मूल्यांकन नहीं कर सकते। पानी ऊपर से नीचे आता है और सारी धरती को आप्लावित कर देता है। यही बात प्रत्येक कार्यक्रम पर लागू होती है।

श्री महेन्द्रमोहन चौधरी ने कहा—हां यह बात तो ठीक है और आपके बारे में तो यह बात हो भी गई है। जबकि राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री मोरारजी भाई, ढेबर भाई, नेहरू आदि से आपकी बात हो चुकी है। आप अपनी विचारधारा दे चुके हैं तथा उन्हें प्रभावित कर लिया है तो ऊंची श्रेणी के लोग तो सम्मिलित हो गये। पर मैं यह मानता हूं कि इस प्रकार चार पांच सुधरे हुये व्यक्तियों से जगत का सुधार नहीं होता। उसके लिये तो आम जनता के साथ सम्बन्ध जोड़ना आवश्यक है। उनमें नैतिक भावनाओं के बल पर परिवर्तन करना चाहिये।

आचार्य श्री ने कहा—हम लोग तो इस ओर भी पूर्ण सचेष्ट हैं। हमारे संघ के भिक्षुओं के १२० दल विभिन्न प्रान्तों में जन-मानस को जगाने का काम करते हैं। हम पैदल चलते हैं, इसीलिये गांव निवासियों से भी अच्छा सम्पर्क रहता है। कोटि कोटि जनता में अपने विचार

अज्ञान का यह सुगम रास्ता है। ग्रामीण जनता में श्रद्धा है, विश्वास है। साधुओं के सम्पर्क से वे अपनेको कृत-कृत्य समझते हैं और उनकी बात बिना किसी नतु नच के स्वीकार करते हैं।

सम्पर्क (१९)

यू पी आई के डायरक्टर के साथ

आत्मवाद बनाम भोगवाद

१२ दिसम्बर १६५६ को युनाइटेड प्रेस आफ इण्डिया के डाइरेक्टर श्री सी० सरकार आचार्य श्री से भेंट करने आये।

आचार्य श्री ने कहा—आज विश्व में दो दृष्टियाँ प्रमुख हैं—एक आत्मवाद को देखती है तो दूसरी भोगवाद की ओर दौड़ती है।

आत्मवाद सत्य है मौलिक है उसमें दिखावा नहीं। किनारे पर चलने वालों के लिये यह कुछ नहीं। उसका मूल्य तो गहराई में जाने वाले पाते हैं। साधारण व्यक्ति गहरे उतरने वाले नहीं होते। यही कारण है कि विश्व के अधिकांश लोग आत्मवाद से पराङ्मुख हैं। वे भोग की ओर झुके जा रहे हैं क्योंकि भोग में चमक है। उसमें परवाने पड़ ही जाते हैं। वे यह नहीं सोचते कि उन्हें अन्त में तिल तिल जलना पड़ेगा।

आज लोगों की यही दशा है। बाहर का दिखावा ही बड़प्पन का मापदण्ड है। जिसके पास करोड़ों की सम्पत्ति है मोटरों की कतार है गगनचुम्बी अट्टालिकाएं हैं ठाटबाटपूर्ण सामग्री है—वही बड़ा माना है। उसे ही सर्वत्र प्रमुख स्थान मिलता है। इस बड़प्पन के पीछे मनुष्य प्रायः मर्यादा से च्युत होने में भी नहीं सकुचाता।

आज हम इस मूल्यांकन की दृष्टि को बदलना है। नैतिक मूल्यों का प्रतिष्ठापन करना है। इसके लिए हमें भगीरथ प्रयत्न करने होंगे। मैं समझता हूं कि जननायक जन सेवक व्यापारी वक्ता साहित्यकार और पत्रकार का यह परम कर्तव्य हो जाता है कि वे चरित्र विकास की योजनाओं में यथाशक्ति सक्रिय सहयोग दें। यदि वे ऐसा नहीं करते हैं तो वे अपने कर्तव्य से च्युत होते हैं। साधु-सन्तों का तो लोगों को सन्मार्ग पर लाना चारित्रिक बनाना आदि काम सदा से रहा है और इस जिम्मेदारी का निभाना भी है। अभी अभी हम २०० मील की लम्बी यात्रा करके राजस्थान से यहां आये हैं। हम किसी वाहन का उपयोग नहीं करते पैदल ही चलते हैं। हमारे उपकरण सीमित होते हैं।

सरकार—तो क्या आप इतने वस्त्रों से ही काम चला लेते हैं?

आचार्य श्री—हां हम शीतकाल में भी इन्हीं वस्त्रों से गुजारा कर लेते हैं। हम रुई का बना भी कोई वस्त्र काम में नहीं लाते।

सरकार—ठीक है आप में साधना और ब्रह्मचर्य की इतनी गर्मी रहती है कि बाहर सर्दी पास भी नहीं आती।

आचार्य श्री—क्या आप अणुव्रत-आन्दोलन से परिचित हैं?

सरकार—हां मैंने उसके नियम पढ़े हैं और उसके कार्यक्रमों से भी पूर्ण परिचित हूं। प्रायः पत्रों में इसकी चर्चा मिलती रहती है। यह आन्दोलन राष्ट्र के लिये हितकर है। मैं अपने आपको इसके सहयोग में प्रस्तुत करता हूं।

तत्पश्चात् आचार्य श्री ने उन्हें तेरापंथ की विस्तृत जानकारी दी। संघ संगठन व विधान की बात बताई। वे इससे बहुत ही प्रभावित हुए।

'टाइम्ज आफ इंडिया' के डिपुटी चीफरिपोर्टर के साथ

अणुव्रत आन्दोलन का उद्गम और विस्तार

१२ दिसबर १६५६ को तीसरे पहर मे अग्रेजी के प्रमुख दैनिक टाइम्ज आफ इडिया' के डिप्टो चोफ रिपोर्टर श्री रामेश्वरन आचाय श्री की सेवा मे उपस्थित हुए। उन्होने कहा—मैंने आप के अणुव्रत आदोलन की बहुत चर्चा सुनी है तथा आप व साधुओं से मिलन का सुअवसर भी प्राप्त होता रहा है पर आदोलन के प्रवतक से साक्षात्कार तो आज ही हुआ है। मै चाहता हू कि मेरी जिज्ञासाओं का समाधान आप से पाऊं।

कृपया बताइये—अणुव्रत आदोलन का प्रारम्भ किस आधार पर हुआ ?

आचाय-श्री—देश के नवयुवक मुझ से बार बार कहा करते थे कि रूढ़िया से आच्छन्न कायक्रमों मे हमारी कोई श्रद्धा नहीं। हम चाहते हैं कि आपके हाथो एसा कोई रचनात्मक काय हो जिससे देश की सुषुप्त चेतना जाग सके और हमे विशेषत नवयुवकों को जीवन निर्माण की सही दिशा मिल सके। मैं देश की दयनीय दशा को देखकर सोचा करता था कि राष्ट्र का चरित्र दिनों दिन पतनोन्मुख होता जा रहा है। उसके लिये कोई उपक्रम किया जाय। बस नौजवानों की प्रेरणा और मेरे चिंतन का परिणाम अणुव्रत आदोलन का सूत्रपात है।

रामेश्वरन—इसे प्रारम्भ हुए कितने वष हुए हैं ?

आचाय श्री—लगभग ८ वर्षों मे यह चल रहा है। सरदार शहर

(राजस्थान) में इसका उद्घाटन हुआ था और इसका प्रथम वार्षिक अधिवेशन देहली के चांदनी चौक में हुआ था जिसमें लगभग ६५० व्यक्तियों ने अणुव्रत की प्रतिज्ञाएँ ली थीं। आज तो यह संख्या लाखों म है।

रामेश्वरन—आप कसे जानते हैं कि वे अपने व्रत निभाते हैं?

आचार्य-श्री—हम घूमते रहते हैं। अतः हमारा अणुव्रतियों से सहज मिलना हो जाता है। तब उनके आचरण इधर उधर के व्यवहार तथा अन्य व्यक्तियों स सारी जानकारी मिल जाती है। साधु साध्वियों के दर्शों द्वारा भी जांच होती रहती है। इसके अतिरिक्त प्रतिवर्ष एक अधिवेशन होता है, उसमें प्राय अणुव्रती भाई बहिन सम्मिलित होते हैं तथा अपनी छोटी से छोटी भूल का भी प्रायश्चित करते हैं। यही उनके व्रत-पालन का प्रम ण है।

रामेश्वरन—भारत क कौन-कौन से भागों मे अणुव्रती बने हैं?

आचार्य श्री—राजस्थान दक्षिण भारत, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, उडीसा पजाब आदि प्रान्तों म काफी सख्या म अणुव्रती हैं। वैसे तो प्राय भारत के सभी प्रान्तों में अणुव्रती हैं।

रामेश्वरन—क्या किसी ने अपना नाम वापस भी लिया है?

आचार्य-श्री—हाँ लगभग दस प्रतिशत ने अपना नाम वापस लिया है।

रामेश्वरन—कौन-कौन लोग इसमें सम्मिलित हुए हैं?

आचार्य-श्री—सभी धम जाति और वर्ग के लोग इसमे आये हैं। धर्म की दृष्टि स हिन्दू जन मुसलमान और ईसाई अणुव्रती बने हैं। जाति की अपेक्षा राजपूत ब्राह्मण, वणिक, हरिजन आदि सम्मिलित हैं और वर्ग की अपेक्षा मत्री, उद्योगपति मजदूर ससद सदस्य विधान सभाई वकील व्यापारी न्यायाधीश विद्यार्थी अध्यापक आदि सभी वर्गों क लोग अणुव्रती हैं

तत्पश्चात 'तेरापथ' के बारे में भी कुछ चर्चा हुई।

दो बहनों की भेंट

मध्याह्न में अखिल भारतीय महिला कांग्रेस कमेटी की

सुश्री मकुल मुखर्जी तथा सुश्री कृष्णा दव ग्राचाय श्री के दशनाय ग्रायीं।

ग्राचाय-श्री—क्या ग्राप न ग्रणुव्रत ग्रान्दोलन का साहित्य पढ़ा है?

मु०—साहित्य देखा जरूर है किन्तु पढन का ग्रवसर नहीं मिला। पर मनिजी (महेन्द्र मुनि) से इस विषय मे काफी चर्चा हुई है। उनमे इसके पहलुग्रो पर ग्रनक वार विचार विमश हुग्रा है।

ग्राचाय श्री—ग्रच्छा तो ग्राप इसकी गतिविधि स परिचित हैं ही। कहिये ग्रापन इसमे सहयोग देन क बारे म क्या सोचा है? क्योंकि कोई भी काम बल तभी पकड़ता है जब उसमे ग्रनक व्यक्ति लग जाते हैं ग्रौर ग्रपन ग्रपने क्षत्र म उसकी भावना का प्रसार करते हैं। प्रचार का यह एक सुगम तरीका है कि जो लोग जहां काम करते हैं वहां उसकी चर्चा करते रह ग्रौर उसक ग्रनकूल वातावरण बनाते रहें।

मु०—इसम सहयोग की बात ही क्या है। यह तो हम सबका क म है कि एसे चारित्रिक ग्रान्दोलना को सब काम छोड़कर, हम गति दें। मैं ग्रपन सम्पक म ग्रान वाले भाई-बहिनों स इसकी चर्चाए करूगी। हमारी कमेटी की २६ प्रान्तीय शाखाए हैं ग्रौर ४०० समितियां हैं। हमे ग्रगर ग्रणव्रत ग्रान्दोलन का साहित्य मिले तो हम उसे सारी जगह भिजवा दें तथा इसके ग्रध्ययन की हिदायत भी ददें।

तत्पश्चात ग्राचाय श्री न साध साध्वियो के ग्रध्ययन क बारे म विस्तत जानकारी दी। ग्राचाय श्री न कहा—हमारे यहाँ प्राकृत, सस्कृत हिन्दी ग्रग्रजी तथा ग्रनक प्रान्तीय भाषाग्रों का सुचारु ग्रध्ययन चलता रहता है। किन्तु ग्रध्ययन किन्हीं वतन भोगी पडितों द्वारा नहीं होता। साध ही एक दूसरे को पढ़ाते हैं। यहां परम्परा ग्राज भी चालू है। तत्पश्चात साधु-साध्वियों द्वारा नव निर्मित कलात्मक वस्तुए तथा सूक्ष्म लेखन क पन्न दिखाये। हाथ से बनी इन कलात्मक वस्तुग्रों को देखकर उन्हें ग्राश्चय हुग्रा ग्रौर उन्होंन यह जाना कि तेरापथी साधुग्रों का जीवन श्रममय है। व ग्रपनी ग्रावश्यकता की बहुत-सी चीजें खुद ही बना लेते हैं।

श्री गुलजारीलाल नंदा के साथ दूसरी बार

साधु दीक्षा और कानून

१३ दिसम्बर १९५६ को प्रथम प्रहर में योजना मन्त्री श्री नंदा ने पुनः आचार्य श्री से भेंट की। साधारण बातचीत के बाद आचार्य श्री ने कहा—धर्म करने का अधिकार सब स्थानों में सब वर्गों में और सब कालों में खुला रहा है। इस पर किसी की भी जबरदस्ती नहीं चल सकती और होनी भी नहीं चाहिये। लेकिन हम सुनते हैं कि सरकार एक ऐसा कानून बनाना चाहती है कि कोई भी बिना लाइसेंस के साधु नहीं बन सकेगा। मैं समझता हूं कि ऐसा करना सीधा अध्यात्मवाद पर प्रहार करना है। व्रत ग्रहण करने में उसकी योग्यता और वैराग्य वृत्ति ही प्रामाणिक मानी जाती है। वय से उसका सम्बन्ध जोड़ना ठीक नहीं और कानून से रोकना तो आत्म-साधना का अधिकार छीनना है।

नंदा—मैं भी ऐसा समझता हूं कि वैराग्य पर आयु का कोई प्रतिबन्ध नहीं। पर आजकल साधु वेश में अनेक ढोंगी चोर और जघन्यवृत्ति के आदमी बनते जा रहे हैं इसीलिये ऐसी चर्चा चलती है।

आचार्य श्री—पर इससे मतलब नहीं सधेगा, जो अनैतिकता से काम करने वाले हैं वे तो फिर भी अपना धंधा इसी प्रकार चलाते रहेंगे। दुविधा केवल उनको होगी जो अपने नियमों से चलते हैं। देखिये—बाल विवाह कानून निषिद्ध है फिर भी वे होते ही रहते हैं। कानून से ... ...तुदलता इसीलिये हम इसे उपयोगी नहीं

दीक्षा के विषय में हम तो व्यक्ति के ज्ञान और व्यवहार को ही कसौटी मानते हैं। हमारे यहाँ दीक्षा देने का अधिकार एक मात्र आचार्य को ही है, अन्य किसी को नहीं। आचार्य भी काफी समय तक उसके आचार विचार और स्वभाव को परख करते हैं। तदनन्तर प्रव्रजित करते हैं। ऐसी दीक्षा को कानून से बन्द करना कहाँ तक उचित है?

नन्दा—मैं इस विषय पर विचार करूँगा। अब तक तो इस प्रकार का कोई बिल संसद में नहीं आया है। कुछ लोगों का उसे लाने का विचार तथा प्रयत्न अवश्य है। अच्छा आपने "भारत साधु समाज" के साथ मिलकर कार्य करने के विषय में क्या सोचा है?

आचार्य श्री—नैतिक और चारित्रिक विशुद्धि का जहाँ तक सवाल है, हम उसके साथ हैं और अन्य विषयों से सम्बन्ध कम सम्भव लगता है। क्योंकि उसमें कुछ उद्योग भी सम्मिलित हैं, जो हमारी मर्यादा के अनुकूल नहीं बैठते।

नन्दा—नहीं, ऐसा कोई औद्योगिक धन्धा तो उसके जिम्मे नहीं है। उसका लक्ष्य तो अध्यात्मवाद को फैलाना तथा साधु समाज को सुधारना है।

आचार्य-श्री—फिर भी हम लोग कोई भी चिट्ठी नहीं देते तथा अपने शास्त्रीय नियमों के अनुसार किसी सभा या समिति के अध्यक्ष, मंत्री और सदस्य नहीं बन सकते। और वैसे हम यही सुधार का काम कर रहे हैं। यह आवश्यक नहीं कि सब लोग एक ही प्रकार से काम करें।

इस प्रकार आधा घंटे तक विचार विमर्श हुआ।

दो जर्मन सज्जनों के साथ

जीवन शुद्धि

१३ दिसम्बर १९५६ को मध्याह्न मे जर्मन दूतावास के श्री वाल्टर लाइफर और श्री वानहार्ट हाइवेच ने आचार्य श्री से भेंट की। शिष्टाचार के बाद निम्न प्रश्नोत्तर हुए —

लाइफर—आज दुनियाँ व्यथित है, बड़े राष्ट्र छोटे राष्ट्रों को दबोच रहे हैं। परस्पर आक्रमण होते हैं। उनसे कैसे बचा जा सकता है और यहाँ अहिंसा कैसे काम कर सकती है?

आचार्य श्री—अहिंसा मे आत्म-शक्ति होती है। उसमे शुद्ध प्रेम होता है। हम जब निश्छल प्यार करेंगे अपनी तरफ से भय मुक्त कर देंगे और किसी भी प्रकार से बाधक न बनेंगे तो आक्रमण स्वतः बन्द हो जायेगा।

लाइफर—अणुव्रत आन्दोलन का एक नियम है— ४५ वर्ष के बाद विवाह न करना' ऐसा क्यों? भारत मे १८–२० वर्ष की अवस्था मे विवाह हो जाते हैं, पर पाश्चात्य देशों में तो कहीं कहीं ४०–५० वर्ष के बाद प्रथम विवाह होता है।

आचार्य श्री—ब्रह्मचर्य का सम्बन्ध संयम से है। वह यदि यौवन में न हो सका तो ढलती आयु में तो अवश्य हो यह इस नियम का उद्देश्य है। यहाँ (भारत मे) कुछ ऐसा चलता है कि ६०–७० वर्ष के बूढ़े दूसरा तीसरा विवाह करने के लिये तयार होजाते हैं। अपने मन पर काबू नहीं कर पाते। ऐसी स्थिति में यह नियम उपयोगी है।

लाइफर—अणुव्रतों का प्रचार क्या सब धर्मों में और सब देशों में किया जा सकता है?

आचार्य श्री—हाँ इसके नियमों का चयन ही कुछ इस प्रकार से किया गया है कि वे देश विदेश सब जगह चल सकते हैं और सब धर्म वाले ग्रहण कर सकते हैं। क्योंकि ये नियम आत्मा है या नहीं, ईश्वर कर्ता है या अकर्ता ऐसे सैद्धांतिक भेद डालने वाले नहीं, लेकिन नैतिक नियम हैं। जीवन में उतारने की चीजें हैं। इनमें कोई दो मत नहीं हो सकते।

लाइफर—आन्दोलन ऐहिक सुख सुविधा के लिये है या अदृष्ट जीवन के लिये ?

आचार्य श्री—यह जीवन विशुद्धि के लिये है। जीवन शुद्ध होगा तो यहाँ भी शान्ति मिलेगी और इतर लोक में भी।

लाइफर—आत्मा ही सुख दुख का कर्ता है या कोई अन्य ?

आचार्य श्री—आत्मा ही सुख-दुख का कर्ता है। कोई अन्य शक्ति नहीं।

लाइफर—हम जो अच्छा काम करते हैं क्या उसके लिये ईश्वर का आशीर्वाद आता है ?

आचार्य-श्री—अच्छा अनुष्ठान स्वयं ही आशीर्वाद है। ईश्वर कोई आशीर्वाद नहीं भेजता ?

लाइफर—हमारे यहाँ ऐसा माना जाता है कि ईश्वर अनुग्रह करता है पर ऐसा नहीं कि वह अनुग्रह धार्मिक पर ही करे वह एक पापी पर भी कर सकता है। वह उसकी व्यक्तिगत चीज है। किन्तु वह प्रायः करता धार्मिक पर ही है क्योंकि उसके लिये वही उत्तम भाजन होता है। फिर भी कभी-कभी देखा जाता है कि जो आजीवन पापों में लिप्त रहा, वह भी अन्तिम समय में धर्म प्राण बन जाता है। यह प्रभु का अनुग्रह ही कहा जा सकता है। यहाँ तर्क नहीं चलता, केवल श्रद्धा काम देती है।

आचार्य-श्री—पूर्व अवस्था में जो व्यक्ति पापी रहा और अन्तिम अवस्था में धार्मिक बनता है वह उसके आत्म-सुधार का ही परिणाम

हम पदल चलते हैं। रात म नहीं चलते। अभी इन तीन वर्षों में हमने ८ हजार मील की यात्रा की है। हम बीच बीच मे गावों मे ठहरते हैं। वहाँ उपदेश करते हैं। हम चातुर्मास के सिवाय एक मास से अधिक कहीं भी नहीं ठहरते। बीमारी का अपवाद है। हम रात्रि भोजन नहीं करते। हरी घास पर नहीं चलते। मांस भी जन साधुओं के लिये वर्ज्य है।

प्र०—भारत म जन कितने हैं ?

उ०—जन गणना में जनों की संख्या १५ लाख आई है पर मेरा खयाल है जन ४० लाख से कम नह होने चाहिये।

प्र०—आपकी भोजन की विधि क्या है ?

उ०—हम भोजन नहीं पकाते और न हमारे लिये पकाया हुआ लेते हैं। गृहस्थ लोग अपने लिये जो बनाते हैं उसका ही कुछ अंश ग्रहण कर हम अपना काम चला लेते हैं।

प्र०—दूसरे पकाते हैं उसमे भी तो हिंसा होती होगी ?

उ०—हाँ पर वे तो स्वय अपने लिए पकाते ही हैं। क्योंकि सारे तो साधु होते नहीं।

प्र०—साधु बनने म न्यूनतम अवस्था कितनी है ?

उ०—अवस्था की दृष्टि से शास्त्रों में ६ वर्ष का विधान आया है पर साथ साथ मे योग्य होना भी आवश्यक है। अयोग्य भले हो ६० वर्ष का क्यों न हो, दीक्षा नहीं हो सकती

प्र०—कोई मनुष्य जानवर पर अत्याचार करे तो आप उस समय क्या करेंगे।

उ०—हम मारने वाले को उपदेश देंगे। हिंसात्मक तरीकों से बचाना हमारा काम नहीं है। क्योंकि हम हृदय परिवर्तन को ही धर्म मानते हैं।

प्र०—क्या आप पशुओं पर अत्याचार नहीं करने का उपदेश करते हैं ?

उ०—अवश्य, इसीलिए तो हम किसी भी प्रकार की सवारी नहीं करते।

प्र०—पर मोटर प्लेन आदि में तो किसी जानवर को कष्ट नहीं होता तो फिर आप उनमे क्यों नहीं बठते ?

उ०—उनम बस तो किसी जानवर को कष्ट होता नहीं दीखता, पर उनक नीचे आकर या उनके प्रयोग से छोट छोट जीव तो बहुत मरते ही हैं और बड जीव भी तो उनसे मर सकते हैं।

प्र०—कृषक खती करते हैं। व तो अहिंसक नहीं हो सकते ?

उ०—हाँ, वे पूर्ण अहिंसक नहीं हो सकते।

प्र०—स्त्रियों के लिये क्या आपक धर्म मे समानता है ?

उ०—हाँ जितन अधिकार पुरुष को हैं उतन ही स्त्रियों को भी हैं। आत्म विकास का सबको समान अधिकार है।

प्र०—क्या व भी पदल चलती हैं ?

उ०—हाँ। साध्वियाँ हजारों मोल पदल घूमती हैं।

प्र०—क्या व उपदेश भी करती हैं ?

उ०—हाँ बड़ी-बड़ी सभाओं में भी उनका उपदेश होता है और बहुत से लोग उनसे प्रभावित होकर अनक बुराइयों का त्याग करते हैं।

हमारा दूसरा महाव्रत है सत्य। हम जीवन भर असत्य नहीं बोलते और वसा सत्य भी नहीं बोलते जिससे किसी का नुकसान होता हो। इसलिये हम न्यायालयों मे कभी गवाही नहीं देते।

तीसरा महाव्रत अचौर्य है। हम कोई भी चीज बिना पूछ नहीं लते। मकान भी पूछ कर ही लते हैं और जब हमे मकान मालिक मना ही कर देता है तो हम उसी वक्त उसे खाली कर देते हैं।

प्र०—क्या आप पसा नहीं रखत ?

उ०—नहीं हमने तो अपना स्वय का धन भी छोड़ दिया है।

प्र०—क्या आप जातिवाद को मानते हैं ?

उ०—नहीं, भगवान महावीर ने जातिवाद को अतात्विक माना है।

हम पदल चलते हैं। रात म नहीं चलते। अभी इन तीन वर्षों में हमने ५ हजार मील की यात्रा की है। हम बीच बीच मे गाँवों म ठहरते हैं। वहाँ उपदेश करते हैं। हम चातुर्मास के सिवाय एक मास से अधिक कहीं भी नहीं ठहरते। बीमारी का अपवाद है। हम रात्रि भोजन नहीं करते। हरी घास पर नहीं चलते। मांस भी जन साधुओं के लिए वर्ज्य है।

प्र०—भारत मे जन कितने हैं ?

उ०—जन गणना में जनो की सख्या १५ लाख आई है पर म' खयाल है जन ४० लाख से कम नह होने चाहिए।

प्र०—आपके भोजन की विधि क्या है ?

उ०—हम भोजन नहीं पकाते और न हमारे लिये पकाया हु लेते हैं। गृहस्थ लोग अपने लिये जो बनाते हैं उसका ही कुछ ग्रहण कर हम अपना काम चला लेते हैं।

प्र०—दूसरे पकाते हैं, उसम भी तो हिंसा होती होगी ?

उ०—हाँ पर वे तो स्वय अपने लिए पकाते ही है। क्योंकि सारे तो साधु होते नहीं।

प्र०—साधु बनने मे न्यूनतम अवस्था कितनी है ?

उ०—अवस्था की दृष्टि से शास्त्रों में ९ वय का विधान आया है पर साथ साथ म योग्य होना भी आवश्यक है। अयोग्य भले ही ६० वय का क्यों न हो, दीक्षा नहीं हो सकती

प्र०—कोई मनुष्य जानवर पर अत्याचार करे तो आप उस समय क्या करेंगे।

उ०—हम मारने वाले को उपदेश देंगे। हिंसात्मक तरीकों से बचाना हमारा काम नहीं है। क्योंकि हम हृदय परिवर्तन को ही धम मानते हैं।

प्र०—क्या आप पशुओं पर अत्याचार नहीं करने का उपदेश करते हैं ?

उ०—अवश्य इसीलिए तो हम किसी भी प्रकार की सवारी नहीं करते।

प्र०—पर मोटर प्लेन आदि में तो किसी जानवर को कष्ट नहीं होता तो फिर आप उनमें क्यों नहीं चढ़ते ?

उ०—उनमें चढ़ने से किसी जानवर को कष्ट होता नहीं दीखता, पर उनके नीचे आकर या उनके प्रयोग से छोटे छोटे जीव तो बहुत मरते ही हैं और बड़े जीव भी तो उनसे मर सकते हैं।

प्र०—गृहस्थ श्रावक क्या करते हैं। वे तो अहिंसक नहीं हो सकते ?

उ०—हाँ वे पूर्ण अहिंसक नहीं हो सकते।

प्र०—स्त्रियों के लिये क्या आपके धर्म में समानता है ?

उ०—हाँ जितने अधिकार पुरुष को हैं उतने ही स्त्रियों को भी हैं। आत्म विकास का सबको समान अधिकार है।

प्र०—क्या वे भी पैदल घूमती हैं ?

उ०—हाँ। साध्वियाँ हजारों मील पैदल घूमती हैं।

प्र०—क्या वे उपदेश भी करती हैं ?

उ०—हाँ बड़ी-बड़ी सभाओं में भी उनका उपदेश होता है और बहुत से लोग उनसे प्रभावित होकर अनेक बुराइयों का त्याग करते हैं।

हमारा दूसरा महाव्रत है सत्य। हम जीवन भर असत्य नहीं बोलते और ऐसा सत्य भी नहीं बोलते, जिससे किसी का नुकसान होता हो। इसलिये हम न्यायालयों में कभी गवाही नहीं देते।

तीसरा महाव्रत अचौर्य है। हम कोई भी चीज बिना पूछे नहीं लेते। मकान भी पूछ कर ही लेते हैं और जब हमें मकान मालिक मना ही कर देता है तो हम उसी वक्त उसे खाली कर देते हैं।

प्र०—क्या आप पैसा नहीं रखते ?

उ०—नहीं, हमने तो अपना स्वयं का धन भी छोड़ दिया है।

प्र०—क्या आप जातिवाद को मानते हैं ?

उ०—नहीं भगवान महावीर ने जातिवाद को अतात्विक माना है।

प्र०—क्या आप पुनर्जन्म को मानते हैं ?

उ०—हाँ क्योंकि आत्मा शाश्वत है। जब तक वह मुक्त नहीं बन जाती तब तक एक शरीर से दूसरे शरीर में आती रहती है। अतः पूर्व जन्म और पुनर्जन्म दोनों ही हैं।

प्र०—क्या विदेशों में भी जैन धर्म का प्रचार है ?

उ०—हाँ, डा० हर्मन जकोबी जैनधर्म के बड़े ज्ञाता थे और भी बहुत से जैन श्रावक हैं। जर्मन भाषा में तो जैन दर्शन का बड़ा साहित्य है। रात में हम रजोहरण से धरती की जगह को पूंजकर चलते हैं। हम लोग धातु मात्र नहीं रख सकते। अतः कांटा निकालने के लिये भी हम काठ की बनी हुई चींपड़ी और शूल रखते हैं।

प्र०—आप धातु क्यों नहीं रखते ?

उ०—वह परिग्रह माना गया है। जीवनयापन के लिये वह आवश्यक भी नहीं है।

प्र०—क्या जैन साधु श्रम भी करते हैं ?

उ०—हाँ पात्र निर्माण, लेखन, चित्र, रजोहरण आदि चीजें वे अपने हाथ से ही तैयार करते हैं।

जब उन्हें पात्र पत्र आदि दिखाये गये तो वे बड़ी प्रसन्न और आश्चर्यान्वित हुई और कहने लगीं—

प्र०—क्या आप इन्हें बेचते भी हैं ? आप हमें दे सकेंगे क्या ?

उ०—नहीं ऐसे तो दे नहीं सकते। तुम भी अगर साध्वी बन जाओ तो तुम्हें भी दे सकते हैं। वह हंसने लगीं और कहने लगीं—यह तो हमसे नहीं होगा।

आचार्य श्री ने कहा—एक दूसरी बात और है हम जिस प्रकार सवारी पर नहीं चढ़ते उसी प्रकार हमारी चीजें भी किसी सवारी में नहीं चढ़तीं।

वह हँसती हुई कहने लगीं—पैदल तो हम से अमेरिका नहीं जा सकता।

प्र०—क्या आपकी साध्वियां दूसरों की सेवा कर सकती हैं ?

उ०—हां वे आध्यात्मिक सेवा कर सकती हैं। हम गृहस्थों से न तो शारीरिक श्रम लेते हैं और न देते हैं।

प्र०—क्या आप भूखे को भोजन दे सकते हैं ?

उ०—हां, पर उसी अवस्था में जब वह हमारे जैसा ही हो। हम जैसे शरीर पोषण के लिए नहीं खाकर संयम निभाने के लिए खाते हैं उसी प्रकार अगर कोई पूर्ण संयम व्यक्ति संयम पालन के लिये खाये तो हम उसे भी भोजन दे सकते हैं। लेकिन सेवा को हम आध्यात्मिक धर्म नहीं मानते। वह तो सामाजिक कर्तव्य है। कर्तव्य और धर्म में अंतर है। धर्म कर्तव्य अवश्य है किन्तु सारे कर्तव्य धर्म नहीं। हम केवल धार्मिक काम ही कर सकते हैं।

प्र०—जैन श्रावक तो करते होंगे ?

उ०—वे सारे नहीं अंत यथावश्यक करते रहते हैं।

प्र —कलकत्ते में मैंने जैन मंदिर देखा था। क्या आप मूर्ति-पूजा करते हैं ?

उ०—नहीं हम न तो मूर्ति पूजा ही करते हैं और न फोटो को ही नमस्कार करते हैं। यहां तक कि गुरु के फोटो को भी वन्दना नहीं करते। जैनों में कई सम्प्रदाय हैं। उनमें हम तेरापंथी हैं। हम लोग मूर्ति पूजा नहीं करते। हमारे संघ में ६५० साधु-साध्वियां हैं। संघ में एक ही आचार्य होता है। सारे साधु देश के कोने कोने में घूमते रहते हैं। धर्म का प्रवचन करना उनका मुख्य काम है।

तत्पश्चात आचार्य श्री ने उन्हें अणुव्रत आंदोलन की जानकारी दी। आचार्य श्री ने पूछा—क्या तुम भी अमेरिका में इस सब धर्म सम्मत आंदोलन का प्रचार कराओगी ? मैत्री दिवस के बारे में भी आचार्य श्री ने उन्हें समझाया और कहा—क्या तुम स्वयं इस पर चल कर अमेरिका में लोगों को भी यह बताओगी ?

...र किया।

साथ में आयी हुई एक पत्रकार महिला ने अणुव्रतों का अध्ययन कर इस पर कुछ साहित्य लिखने का वादा किया और प्रसन्न होकर फिर दुबारा आने का वादा कर तीनों चली गयीं।

उपराष्ट्रपति के साथ

सक्रिय जीवन का प्रभाव

१५ दिसम्बर १९५६ को प्रातः आचार्य श्री उपराष्ट्रपति डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन की कोठी पर पधारे। उन्होंने श्रद्धापूर्वक हाथ जोड़ कर अभिनन्दन किया। आचार्य श्री ने कहा—हम लोग अभी सरदार शहर (राजस्थान) से आ रहे हैं। क्योंकि आजकल दिल्ली सांस्कृतिक और धार्मिक वातावरण की क्रीड़ा स्थली बनी हुई है। हम भी अपनी भावना उसमें देने आये हैं। आपको पता होगा। जनगोष्ठी का आयोजन हुआ। तीन दिन 'अणुव्रत गोष्ठी' का कार्यक्रम चला और परसों भारत से अमेरिका विदा होने से पूर्व नेहरूजी ने "अणुव्रत-सप्ताह" का उद्घाटन किया।

उ० रा०—लेकिन मैं इनमें से किसी में भी सम्मिलित नहीं हो सका।

आ०—हाँ हमने सुना था कि आपकी पत्नी का देहावसान हो गया था। संसार का यही स्वरूप है। जन्म-मृत्यु का अविच्छिन्न तांता लगा रहता है। आचार्य श्री ने प्रसंगोपात्त "शान्त सुधारस" की 'विनय

विनय वस्तु तत्त्व गीतिका भी फरमायी, जो कि उपराष्ट्रपति ने बड़े ध्यान से सुनी।

उ० रा०—आप यहाँ अभी कितने दिन और रहेंगे?

आ०—अभी कुछ दिन तो ठहरना होगा क्योंकि "अणुव्रत-सप्ताह" चल रहा है। उसके भाग के भी अलग-अलग वर्गों के कार्यक्रम बन रहे हैं।

उ० रा०—जैन-मंदिर में हरिजन प्रवेश के विषय में आपका क्या अभिमत है?

आ०—जहाँ धर्माभिलाषी व्यक्ति प्रवेश न पा सके वह क्या मंदिर है? किसी को अपनी अच्छी भावना को फलित करने से रोकना मैं धर्म में बाधा डालना मानता हूँ। वस हम तो अमूर्तिपूजक हैं। जैनों में मुख्य दो परम्पराएं हैं—श्वेताम्बर और दिगम्बर। दोनों ही परम्पराओं के दो प्रकार के सम्प्रदाय हैं—एक अमूर्तिपूजक और दूसरा मूर्तिपूजक। जैन सम्प्रदायों में मूर्तिपूजा के विषय में मौलिक दृष्टि से प्राय सभी एक मत हैं। कुछ एक चीज को लेकर थोड़ा पार्थक्य है जो अधिकांश बाह्य व्यवहारों का है जो क्रमश कम होता जा रहा है। अभी जैन सेमिनार में श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों सम्प्रदायों के साधुओं ने भाग लिया। वहाँ मुझे भी प्रमुख वक्ता के रूप में निमंत्रित किया गया था और अच्छा सहिष्णुता का वातावरण वहाँ था।

उ० रा०—समन्वय का प्रयत्न तो होना ही चाहिये। आज के समय की सब से बड़ी यह माँग है और इसी के सहारे बड़े-बड़े काम किए जा सकते हैं।

आ०—आपको पहले राजदूत के रूप में और अब उपराष्ट्रपति के रूप में राजनीति में प्रवेश हमें कुछ अस्पष्ट सा लगा था कि एक दार्शनिक किधर जा रहे हैं पर अब आपकी सांस्कृतिक रुचियों और अन्य कामों को देखकर लगा कि यह तो एक प्राचीन प्रणाली का निर्वाह हो रहा है। वर्तमान की जो राजनीति है उसमें कोई विचारक हो

कर सकता है और उसे एक नई मोड़ दे सकता है क्योंकि उसके पास साधन का नया तरीका होता है और नया चिन्तन होता है। वह जहाँ भी जाता है सुधार का काम शुरू कर देता है।

उ० रा०—आज द्रव्य हिंसा का तो फिर भी कुछ अशों मे निषेध हो रहा है पर भाव हिंसा का प्रभाव तो और भी जोरों से चल रहा है, उसके निषेध के लिए कुछ अवश्य होना चाहिये।

आ० हाँ, अणुव्रत आन्दोलन इस दिशा मे सक्रिय है।

उ० रा०—मैं ऐसा मानता हूँ कि जीवन उदाहरण का जो असर होता है वह उपदेश या बोध से नहीं होता। इसीलिये आप जो काम करते हैं, उसका जनता पर स्वत सुन्दर असर होता है। क्योंकि आपका जीवन उसके अनुरूप है।

आ०—आज सदभावना की बड़ी कमी है। यही कारण है कि आज लोग परस्पर तने रहते हैं और द्वन्द्वों के शिकार होते हैं। हमने सोचा है कि सदभावना की वृत्ति लाने के लिए एक 'मैत्री दिवस' मनाना चाहिए जिसमें सब परस्पर क्षमा याचना करें। दूसरो द्वारा हुए सब कटु-व्यवहारों को भूलकर निःशल्य बनें। वार्तालाप के दौरान मे नेहरू जी से भी मैंने यही कहा था और उन्होंने इसका समर्थन भी किया।

उ० रा०—यह चीज तो अच्छी है पर लोग इसे भावनापूर्वक पकड़ें तभी ऐसे दिन मनाने का महत्त्व है। अन्यथा तो जैसे अन्य निर्दिष्ट दिन रूढ़ि मात्र होते हैं वैसा ही यह हो जायगा। यदि इसकी भावना को जागृत रखा जा सके तो यह एक बहुत ही उपादेय सूझ है।

मन्थन (७१)

'स्टेट्समैन' के दिल्ली संस्करण के सम्पादक के साथ

अनैतिकता का निवारण और पत्रकार

१५ दिसबर १९५६ को स्टेट्समैन के दिल्ली संस्करण के सम्पादक श्री कोनेलन ने आचार्य-श्री के दर्शन किये। आचार्य-श्री ने उन्हें अणुव्रत आन्दोलन का परिचय देते हुए कहा—आज भारत में ही नहीं सारे संसार में अनैतिकता का दौर है उसे दूर करना प्रत्येक समझदार मनुष्य का कर्तव्य है। अतः पत्रकारों पर भी यह उत्तरदायित्व है कि वे आज के अनैतिक वातावरण को शुद्ध करने में अपना सहयोग दें। पर अक्सर देखा जाता है, वे इस ओर कम ध्यान देते हैं वे अपने अखबारों में लूट खसोट और लड़ाई की बातों को जितना स्थान देते हैं उतना नैतिक प्रवृत्तियों को नहीं देते, उनकी दृष्टि मे राजनीति का जितना प्राधान्य है उतना संयम का नहीं है। आज की ही बात है, मैं डा० राधा कृष्णन के यहाँ गया तो फोटोग्राफर भी वहाँ पहुंच गया और वह इसलिये कि डा० राधा कृष्णन भारत के उपराष्ट्रपति हैं, और उनकी प्रत्येक प्रवृत्ति को पत्रकार महत्व देते है। मैं यह नहीं कहता कि मेरा फोटो लेना चाहिये। मैं तो उसका निषेध करता हूँ। पर कहने का तात्पर्य यह है कि पत्रकार नैतिक दृष्टि से कहाँ क्या हो रहा है इसका ध्यान कम रखते हैं।

कोनेलन ने आपकी बात स्वीकार करते हुए कहा—हाँ, यह तथ्य वास्तव में सही है।

आचार्य-श्री ने फिर उनसे कहा—आज संसार की जो तनावपूर्ण

स्थिति है उसे मिटाना जरूरी है। इसके लिये हमने एक योजना रखी है कि सारे राष्ट्र कम से कम एक दिन एक दूसरे से व्यवहार मांगें, एवं राष्ट्रपति दूसरे राष्ट्रपतियों से, एक सेनापति दूसरे सेनापतियों से और इसी प्रकार एक पत्रकार दूसरे पत्रकारों से अपने गलत व्यवहार की क्षमा मांगें तो इससे मैत्री भाव बढ़ेगा और आपसी तनाव कम होंगे। आपको यह बात पसन्द आई ? उसके 'हां यह तो अच्छा है' कहने पर आचार्य श्री ने कहा—तो आप इसमें क्या सहयोग दे सकते हैं ? उसने कहा—इस विषय पर अपने अधिकारियों से बातचीत करूंगा। वही व्यक्ति जो पहले आने में संकोच करता था, फिर आने का वायदा कर वापस चला गया।

प्रवचन (२३)

लोकसभा के अध्यक्ष के साथ

साधुदीक्षा और कानून

१६ दिसम्बर १९५६ को प्रातःकालीन प्रवचन के बाद लोक सभा के अध्यक्ष श्री अनन्त शयनम् अय्यंगार ने आचार्य श्री के दर्शन किये। वे साथ में नारंगी अमरूद आदि फल लाये थे और बड़ी श्रद्धा के साथ ही उन्हें भेंट करना चाहा। पर आचार्य श्री ने कहा—हम वनस्पति को सचित्त (सजीव) मानते हैं अतः उसे छूते भी नहीं। हम तो केवल त्याग ही की भेंट चाहते हैं।

अय्यंगार—तो हमारा आत्म समर्पण लीजिये। भारत में अंग्रेज लोग तराजू लेकर आये थे पर उन्होंने भारतीय संस्कृति के विरुद्ध तोला। उन्होंने पैसे वालों को भौतिक सामग्री सम्पन्नों को बड़ा माना। जो

इम्पीरियल होटल मे ठहरता है वही उनकी दृष्टि में महान है। पर भारत उसे महान मानता है जो वराग्य सम्पन्न है सेवा भावी है और त्यागी है। त्यागियों के आगे यहाँ के सम्राट झुके और उनको अपना आदर्श माना। मैं समझता हू आप उसी क प्रतीक हैं।

आचार्य श्री—आपका 'हिंदू कोड बिल' क विषय में क्या ख्याल है ?

अय्यगार—दुनिया परिवतनशील है। उसमें परिवतन होते ही रहते हैं। सुधार के लिय आवश्यक है कि आज की समाज व्यवस्था मे भी परिवतन आये। मनु के सिद्धान्त आज काम नहीं करते। अत जरूरी है कि कोई उचित व्यवस्था हो। सुधार ससार में होता ही रहता है। मैं अभी चीन गया था वहाँ मैंने अच्छी बातें देखीं। वहाँ वश्यावृत्ति नहीं है, घुड़दौड़ नहीं होती डाका बन्द है और कोई भिखारी नहीं है। चीन की सरकार न व्यापार भी अपने हाथों में ले रखा है। यह इसलिये कि अधिक शोषण न हो और कोई अधिक मुनाफा न ले सक। मेरी आपस विनती है कि आप उपदेश के अधिकारी हैं अत आपको भी उपदेश करना चाहिय कि लोग ज्यादा ब्याज न लें, मजदूर की प्रति भावना न रखें।

आचार्य-श्री—हम तो अपना कतव्य निभा रहे हैं। एसी भावनाए देन म सचेष्ट हैं पर आप लोगों का भी कुछ कतव्य है। आप लोगों का भी उचित सहयोग अपेक्षित रहता है।

अय्यगार—मेरी इन विषयों में इच्छा तो रहती है पर क्या करू ससद के कामों मे व्यस्त रहना पड़ता है।

आचार्य श्री—पर यह चरित्र-सुधार का काम ससद के कामों मे भी बड़ा है।

अय्यगार—हाँ यह बुनियादी काम है इसलिये सहज बड़ा हो जाता है।

आचार्य-श्री—आज भारत में विविध विचार फल रहे हैं। पाश्चात्य लोग तो बड़ी आस्था और श्रद्धा स यहाँ आते हैं कि भारतीय सस्कृति

महान है, उदार है उसमें से हमें कुछ जीवन निर्माण के सूत्र पकड़ने हैं। पर यहां के लोग सोचते हैं कि पश्चिम से जो धारा बह रही है वह जीवनदायिनी है। आश्चर्य है कि लोग अपने घर को न देखकर केवल बाहर की ओर ताकते हैं।

आचार्य-श्री—इस बार बौद्ध धर्म को इतना महत्त्व दिया गया, उसका क्या आधार है ?

अणगार—बौद्ध धर्म एक भारतीय धर्म है। उसमें भारत की रुचि रहनी स्वाभाविक है। दूसरे बौद्ध धर्म एक सशक्त धर्म है। बहुत सारे देशों द्वारा यह स्वीकृत है और तीसरी बात यह कि यह सरकार की एक नीति भी थी।

आचार्य-श्री—दीक्षा बिल के बारे में आप क्या सोचते हैं ?

अणगार—लाइसेंस प्राप्त ही दीक्षित हो सकता है इसका मैं समर्थक नहीं पर साथ में ऐसा भी समझता हूं कि छोटे-छोटे बच्चों की दीक्षा नहीं होनी चाहिये। क्योंकि उनके विचार अपरिपक्व रहते हैं। भुक्त भोगी होकर जो दीक्षित होता है वह अधिक सुस्थिर रह सकता है, इसलिये कि वह सत्य को अच्छी तरह परख लेता है। पर कानून के द्वारा इस पर कोई पाबन्दी नहीं लगनी चाहिये।

राष्ट्रपति के निजी सचिव के साथ जैन आगमों के शब्द कोष का निर्माण

ता० १७ दिसम्बर १९५६ को राष्ट्रपति के प्राइवेट सेक्रेटरी श्री विश्वनाथ वर्मा जी ने आचार्य श्री के दर्शन किये। औपचारिक बातों के बाद आचार्य-श्री ने कहा—इस बार अणुव्रत आन्दोलन को यहाँ अच्छी गति मिली है। अणुव्रत सप्ताह का कार्यक्रम अच्छे ढंग से चल रहा है। विभिन्न वर्गों के लोगों को इसके द्वारा नैतिक जागृति की सजीव प्रेरणा मिला है। राष्ट्रपति जी से भी उस दिन (२-१२-५६ को) इस विषय पर महत्त्वपूर्ण वार्तालाप हुआ था। उन्होंने यह कहा था—मैं तो ऐसा चाहता हूँ कि ऐसी नैतिक धाराएँ यहाँ भारत में निरंतर बहती रहें और जन जीवन में जो मल आगया है उसे धोकर बहा दें। आप जो निष्काम रूप में यह कार्यक्रम चला रहे हैं उससे देश की एक बहुत बड़ी जरूरत को आप पूरा कर रहे हैं। लोगों में इसके प्रति आस्था बढ़ेगी। वे इसका मूल्यांकन स्वयं करेंगे और अपना सहयोग भी देंगे। राष्ट्रपति जी की इसमें अच्छी आस्था है उस दिन उनसे अनेक विषयों पर बातचीत हुई। पर एक विषय छूआ भी न गया, जो कि उनकी दिलचस्पी का विषय था। 'प्राकृत सोसाइटी' से उनका विशेष लगाव है। वे उसके कार्य कलापों में विशेष रुचि रखते हैं। हमारे यहाँ प्राकृत का एक बहुत बड़ा काम हो रहा है। समस्त जैन आगमों का शब्द कोष तैयार किया जा रहा है। संस्कृत में भी प्रत्येक शब्द दिया जायेगा। सूक्ष्म अन्वेषण के साथ यह काम किया जा रहा है। विशेष बात यह है कि इसमें किसी वेतन भोगी पंडित का सहयोग नहीं है केवल संघ के साधु साध्वियाँ सारा कार्य कर रहे हैं। हमारे अध्ययन-अध्यापन के लिये कोई वेतन भोगी नहीं रहते।

वर्मा—मैं आपके कार्यक्रमों से परिचित रहा हूं। अणुव्रत आन्दोलन में मेरी बड़ी दिलचस्पी है। राष्ट्रपति जी चरित्रात्मक कामों में बड़ी दिलचस्पी रखते हैं। उनका स्वयं का जीवन नैतिक है। वे सरल व सादगी का जीवन पसन्द करते हैं। इसीलिये जैसे आन्दोलन में उनकी गहरी निष्ठा है वे ऐसी चीजों के सहारे देश की भलाई देखते हैं। साहित्यिक कामों में भी वे अच्छी रुचि रखते हैं। वे आपके कार्यों से परिचित हैं।

आचार्य प्रवर ने तेरापन्थ का परिचय दिया और सूक्ष्म लेखन तथा अनेकों कलात्मक वस्तुयें दिखाईं। उन्होंने कहा—आप तो सजीव कला के निर्माता हैं तथा भारतीय संस्कृति के संरक्षक हैं। आज ऐसा सूक्ष्म लेखन कहीं नहीं मिलता। मैंने यहीं देखा है। ये कृतियाँ अमूल्य हैं।

मन्थन (२५)

हिन्दू महासभा के अध्यक्ष तथा मन्त्री के साथ

चुनाव शुद्धि

१८ दिसम्बर की रात के समय हिन्दू महासभा के अध्यक्ष श्री एन० सी० चटर्जी और महामन्त्री श्री वी० जी० देशपांडे आचार्य श्री से वार्तालाप करने आये। आचार्य श्री ने उनको अणुव्रत आन्दोलन की गतिविधियों से अवगत कराया। 'अणुव्रत सप्ताह' का विवरण बताते हुये आचार्य श्री ने कहा—"इस सप्ताह के अन्तर्गत हम एक दिन 'चुनाव-शुद्धि' का रखना चाहते हैं। हमारे मुनि तथा अन्य कार्यकर्त्ता भारत की सभी पार्टियों के प्रमुखों से सम्पर्क कर रहे हैं और ऐसा समझा जाता है कि सभी

उस आयोजन में भाग लेंगे और यह सोचेंगे कि चुनावों में बरती जाने वाली अनैतिकता को कैसे मिटाया जा सके। आम चुनाव सामने आ रहे हैं इसलिए इस दिशा में कुछ काम करना आवश्यक है। कई पार्टियों के नेताओं ने इस विचार का हार्दिक स्वागत किया और यह कहा है कि वे इसमें अपना पूरा सहयोग देंगे। हमने भी इस विषय में कुछ सोचा है और कुछ व्रत भी बनाये हैं। आपका इसमें क्या विचार है?

श्री चटर्जी ने कहा—आप जो सुधार का काम कर रहे हैं, वह महत्वपूर्ण है और मैं समझता हूँ कि उसे आप अन्य अनैतिकवादी नेताओं से भी अच्छे ढंग से सम्पादित कर सकेंगे क्योंकि आपके पास एक संगठित शक्ति है। आपको लोगों का पूरा सहयोग भी मिलेगा, क्योंकि लोग ऐसा चाहते हैं। चुनाव के सम्बन्ध में आपने जो सोचा है वह उचित है और ऐसा करना भी चाहिये।

श्री देव पांडे ने कहा—महाराज! आपको मंत्रियों से भी कुछ कहना चाहिये। क्योंकि वे भी आज राष्ट्र का बहुत धन खर्च कर रहे हैं। ऐशो आराम में अपना समय बिताते हैं। राष्ट्र के निर्माण में बहुत कम ध्यान देते हैं। जो मोटर उन्हें सरकारी काम के लिए दी जाती हैं उनका वे निजी कामों में उपयोग करते हैं। यह वधानिक दृष्टि से गलत है। अतः आप यदि सुधार का काम करना चाहते हैं तो आपको यह सब बातें उन से स्पष्ट कहनी होंगी। उसमें भय नहीं रहना चाहिए। चाहे कोई सत्ताधारी हो या सामान्य व्यक्ति हो। उसके दोषों की आपको निर्दयतापूर्वक आलोचना करनी चाहिये। हो सकता है इस कारण आप को संघर्ष मोल लेना पड़े। परन्तु ऐसी बातों से आपको संघर्ष करना ही चाहिए।

आचार्य श्री ने कहा—देखिये! हम काम अवश्य करना चाहते हैं पर कोई संघर्ष खड़ा करके नहीं। क्योंकि संघर्ष से सुधार नहीं होगा, बल्कि दुविधा खड़ी होती है। सुधार तो शांति से किया जाना चाहिए। आपको यह विश्वास रखना चाहिये कि हमारा लगाव किसी भी पार्टी

से नहीं । जो बातें जिसे कहनी होती हैं, वे हम निःसंकोच कहते हैं,। हमें भय किस बात का सही कहने पर भी यदि कोई नाराज हो जाता है तो हमें क्या और छिछली बातों में हम जाना नहीं चाहते ।

श्री देशपांडे ने कहा—फिर आप काम करो कर सकेंगे ? देश की सम्पत्ति यों ही बर्बाद होती रहे और मंत्री लोग ऐसे ही मौज उड़ाते रहें सब अनैतिकताएं चलती रहें तब सुधार क्या हुआ ? चुनावों में नीति बरती जाय यह आवश्यक है पर ऐसा करना असम्भव है ।

आचार्य प्रवर ने कहा—देशपांडेजी ! आपका रुख मुझे विचित्र-सा लगा । आप बात ठीक ढंग से नहीं कर रहे हैं । मैंने पहले ही कह दिया था कि हम किसी पार्टी विशेष पर आक्षेप करना नहीं चाहते । हम बुराई को मिटाना चाहते हैं—बुरे को नहीं । एक दूसरे पर केवल छींटाकशी करना हिंसा है । ऐसा हम नहीं करते । हमें ऐसी आलोचना इष्ट नहीं है । क्योंकि व्यक्तिगत आलोचना से तो हम दूसरों को भड़का सकते हैं, उसका परिष्कार नहीं कर सकते ।

यह स्पष्टोक्ति सुनकर देशपांडे ने कहा—जैसा आप उचित समझें वैसा करें । चुनाव सम्बन्धी जो विचार आपने कहे, वे अच्छे हैं परन्तु यदि सभी पार्टियां इसको महत्व दें तो कुछ कार्य हो सकता है ।

तत्पश्चात उम्मीदवारों के लिए और मतदाताओं के लिये बनाये गये व्रत उन्हें सुनाये । दोनों ने व्रतों की सराहना की । और पास में बैठे श्री रामकरण जी बरसाणी से पूछा कि क्या वे इन व्रतों को अन्तिम रूप देकर हमें इनकी नई प्रतियां दे सकेंगे ।

चटर्जी ने प्रसन्नता पूर्वक कहा—मैं भी इस आन्दोलन में आने का प्रयास करूंगा । यदि न आ सका तो श्री देशपांडे जी को अवश्य भेजूंगा" इतना कह दोनों वन्दना करके चले गये ।

परराष्ट्र मन्त्री के साथ

जीवन मे नैतिकता की कमी

१६ दिसम्बर १६५६ को परराष्ट्र मन्त्री डा० सयद महमूद आचार्य श्री से भेंट करने आये। औपचारिक बातों के पश्चात आचार्य प्रवर ने कहा—लोग मेरे पास आते हैं और अलग-अलग कमियों की बात करते हैं। कोई कहता है—देश की आर्थिक दशा गिर गई है, कुछ कहते हैं—हमारी शिक्षा प्रणाली दूषित है कई कहते हैं—हम बहुत काल तक परतन्त्र रहे हैं इसलिये अब तक स्वतन्त्रता का दिमाग में उभार नहीं आया और इसीलिये हमारे कार्यकलाप विकसित नहीं होते।

पर मैं तो मानता हूं कि सबसे बड़ी कमी नैतिकता की है। इसकी कमी जब तक दूर नहीं होगी तब तक अन्य वस्तुओं की पूर्णता भी अपूर्ण ही रहेगी। हमने इसी कमी को पूरा करने के लिये एक आन्दोलन चलाया है। उसमे हमने वे व्रत रखे हैं जो हर एक वर्ग के दूषणों को खदेड निकालें। क्या आपने उसका साहित्य पढ़ा है?

मन्त्री—हाँ उसका विशेष साहित्य तो नहीं पर नियम अवश्य सरसरी दृष्टि से पढ़े हैं और एक दिन मे अणुव्रत सेमिनार में भी सम्मिलित हुआ था। आपने यह काम शुरू करके अच्छा काम किया है। मैं समझता हूँ गाँधी जी के बाद मे आपने ही इस प्रकार नैतिक काम की ओर तवज्जह दी है। अन्य आन्दोलन तो बहुत से दलों द्वारा चल रहे हैं पर आचार विशोधन के क्षेत्र मे किसी और तरफ से कोई कदम नहीं था। जो कदम आपने उठाया है वह देश के लिये अत्यन्त जरूरी है।

'हिन्दुस्तान टाइम्स' के सम्पादक श्री दुर्गादास के साथ

चरित्र निर्माण और पत्रकार

२१ दिसम्बर १९५६ को प्रातःकाल सब्जीमण्डी में दिल्ली के प्रमुख पत्र हिन्दुस्तान टाइम्स के सम्पादक श्री दुर्गादास जी ने आचार्य-श्री के दर्शन किये।

उन्होंने कहा—मुझे आपके दर्शन करने का पहले भी अवसर मिला था। मुझे पंचवर्षीय योजना के सम्बन्ध में भोपाल के मुख्यमन्त्री ने आमन्त्रित किया था। वे जब उज्जैन में आपके सम्पर्क में आये थे, तब मैं भी उनके साथ था। वैसे मुझे नैतिक विषयों में रस है। अतः जब कभी मुझे ऐसे अवसर मिलते हैं, मैं लाभ उठा ही लेता हूँ। आपके अणुव्रत आन्दोलन के नियम गांधी जी के "रामराज्य" के नियम हैं। उसमें भी तो यही है कि सबके प्रति समवृत्ति रहे, उदारता का प्रसार हो, लोग अनैतिक न रहें' और यही आपका कहना है।

आचार्य-श्री ने कहा—आप लोगों को भी केवल राजनीति में ही नहीं, नैतिक और चरित्रनिर्माण मूलक अन्य विषयों में भी भाग लेना चाहिये। मैं देखता हूँ कि पत्रकार राजनीतिक विषय में जितना रस लेते हैं उसके अनुरूप अन्य विषयों को उनका यथाविधि सहयोग नहीं मिलता। उनको चाहिये कि वे विशुद्ध चरित्रात्मक विषयों को भी बल दें।

दुर्गा०—मुझे क्षमा करें इस विषय में कुछ भेद है। सामान्यतया तो ।। अपने इस कर्तव्य को निभा रहे हैं। पर पूर्ण रूप से इसमें जुट

जाना इसमें ही अपना दिमाग लगाना और इसका ही अपने इर्द गिर्द वातावरण रखना और इस भार को अणुव्रत आन्दोलन कंधों पर ले लेना मुश्किल है, क्योंकि यह ५० मन का पत्थर है। कोई भी इसे उठाने के लिए तैयार नहीं। इसे उठाने वाला नीचे दब जाता है। आज जो नेता इसके विषय में बोलते हैं वह भी एक नीति है। उन्हीं नेताओं और अधिकारियों के आचरण की जब चर्चा की जाती है और उनकी ओर अंगुली उठाई जाती है तब उनकी जबान बंद कर दी जाती है और अंगुलियाँ काटने का प्रयत्न किया जाता है। ऐसी परिस्थिति में आन्दोलन को कोई भी पत्र अपनी नीति नहीं बना सकता।

मैं समझता हूँ यह काम तब तक जोर नहीं पकड़ेगा जब तक आप ऊपर के व्यक्तियों को सम्मिलित न कर लें। हमारे मंत्री, संसत्सदस्य विधान सभाओं के सदस्य और अधिकारी लोग इसे अपना लेते हैं तो समझना चाहिये कि एक विशिष्ट लौ जल पड़ेगी और वह आग बढ़ती जायेगी। हमारी भारतीय संस्कृति विषम मार्ग से गुजर रही है। यदि उसको बचा न लिया गया तो आगामी दस वर्षों में उसका अवसान हो जायगा। इन वर्षों में उसे उभार मिल गया तो उसमें ताजा खून समा जायगा और नया जीवन मिल जायगा। अब यह आप लोगों पर निर्भर है कि आप उसकी रक्षा कर पाते हैं या नहीं।

आ०—मैं तो ऐसा नहीं मानता। इन दिनों में जिन व्यक्तियों से भेंट हुई उन सबने इसकी सफलता की कामना की है। राष्ट्रपति भवन में जो आयोजन हुआ था, उसमें राष्ट्रपति ने स्वयं कहा था—मैं चाहता हूँ कि अणुव्रत आन्दोलन देश में फले-फूले और जनता के चरित्र का विकास करे। प्रधानमंत्री नेहरू जी से भी मेरी ५० मिनट तक बहुत खुलकर बातचीत हुई है। बातचीत पहले भी हुई थी। पर इस बार जिस निःसंकोच और स्पष्ट भाव से बातचीत हुई वैसे पहले नहीं हुई थी। बातचीत अनेक विषयों पर हुई। मुझसे उन्होंने यह भी पूछा
भारत ... सम्मिलित नहीं हुए ? मैंने

और उनका मेल कैसे सम्भव हो ? उन्होंने अभी तक मठों का मोह नहीं छोड़ा है, परों से उनका गठबन्धन उसी तरह है। फिर हम अकिंचनों का उसमें क्या लगाव ? पंडित जी ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया और कहा—आपको उसमें सम्मिलित होने की कोई आवश्यकता नहीं। मैंने उनसे कहा—इसलिये पंडित जी विदेशों में भारत का कितना सम्मान है, कितनी ख्याति बढ़ रही है ? विदेशी लोग भारत को एक आदर्श राष्ट्र मानते हैं परन्तु आन्तरिक स्थिति कितनी बिगड़ी हुई है कुछ व्यक्तियों को छोड़ दें तो भारत का मानचित्र खोखला नजर आता है। आपकी सरकार पर भी जो श्रद्धा है, वह भी उन व्यक्तियों के व्यक्तित्व और नैतिक जीवन के कारण है। अन्यथा आपकी सरकार का जो धरातल है वह आपके सामने है। क्या आप आशा करते हैं कि राष्ट्र की नींव इस धरातल पर मजबूत रह सकेगी ? आप इस विषय में क्यों नहीं सोचते और चरित्र निर्माण के कामों को प्रोत्साहन क्यों नहीं देते ?

मैंने उनसे यह भी कहा कि—आज जो राष्ट्रों में आपसी सम्बन्ध बनाने की दौड़ लग रही है, वह भी एक नीति के अतिरिक्त कुछ नहीं और उसका स्पष्ट पता तब चलता है, जब किसी बात के कारण आपस में तनाव बढ़ता है। इसलिये हमने यह सोचा है कि वर्ष में एक दिन ऐसा मनाया जाय, जिस दिन अपनी भूलों के लिये शुद्ध व पवित्र हृदय से व्यक्ति-व्यक्ति परस्पर क्षमा माँगें और दूसरों को क्षमा करें। यह रिवाज के तौर पर नहीं, हृदय से होना चाहिये। यदि कुछ ऐसा हो तो आप का क्या विचार है ?

नेहरू जी ने कहा—यह काम तो बहुत सुन्दर है पर मैं इसे नहीं कर सकता। अगर इसको शुरु किया जाय तो मैं इसके बारे में कुछ कह सकता हूं और कुछ कर भी सकता हूं। इसी प्रकार इस बारे में उपराष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन, राजर्षि टंडन, ढेबर भाई, मोरार जी भाई आदि से भी बातचीत हुई। सभी ने इस कार्यक्रम को पसन्द किया

और कुछ सुझाव भी दिये।

इस प्रकार सरकार की टक्कर का खतरा तो स्वत दूर हो जाता है और वसे हमारा यह दृष्टिकोण भी नहीं है कि कोई पत्र इसे अपनी नीति बनाये। कोई उचित और उपयोगी चीज होगी तो पत्र उसे स्वत अपनी नीति बना लेंगे। मैं आपको तो इसलिए कहता हू, कि आप चिन्तक हैं और चिन्तक के दिमाग को मैं काम में लेना चाहता हूँ। मन्त्रियों और अधिकारियों को मैं उतना महत्त्व नहीं देता, क्योंकि वे चुनाव के माध्यम से अपने पदों पर आते हैं। आज हैं और कल नहीं। पर विचारक सदा विचारक रहता है। अत मैं उनको विशेष महत्त्व देता हू।

दुर्गा०—ठीक है मैं तो आपकी सेवा में प्रस्तुत हू और मैं मध्यस्थ भावना वाला हू। मुझे कुछ कडा लिख देने मे भी भय नहीं है।

लगभग आधे घंटे तक बातचीत हुई। प्रवचन का समय हो गया था। आचार्य प्रवर प्रवचन करने के लिए पधार गये।

मन्थन (८)

राष्ट्रकवि के साथ

२१ दिसंबर १६५६ को रात्रि म राष्ट्रकवि श्री मथिलीशरण गुप्त ने अपने सहोदर सियारामशरण गुप्त व अपने परिवार के अन्य सदस्यों सहित आचार्य श्री के दर्शन किये।

औपचारिक वार्तालाप के बाद जन तत्वों पर चर्चा हुई। उन्होंने जिज्ञासु भाव से अनेक आशंकायें प्रकट कीं। आचार्य श्री ने उनका उचित समाधान किया। स्याद्वाद तथा नय-वाद आदि पर भी लम्बी देर तक

बातचीत होती रही। उन्होंने कहा—जैसा कि मैंने पहले भी आपसे समक्ष निवेदन किया था—मेरी यह हार्दिक भावना है कि भगवान महावीर पर कुछ कवितायें लिखूँ। यह मेरे जीवन की अन्तिम साध है। किन्तु मेरे सामने एक समस्या है कि उनके जीवन सम्बन्धी विविध विचार भिन्न भिन्न तरीकों से माने जाते हैं। उनमें एकरूपता नहीं है। कौन सही है और कौन गलत यह मैं कैसे निर्णय करूँ। यदि आप मेरा पथ प्रदर्शन करें तो मैं अपनी कामना पूर्ण कर सकूँगा। इस विषय में विस्तृत वार्तालाप फिर कभी करूंगा।

वार्तालाप कवि-गोष्ठी के रूप में परिणत हो गया। कई सन्तों ने अपनी अपनी रचनायें सुनाई। राष्ट्रकवि ने भी अपनी कवितायें सुनाई। रचना सरल व सुगम थी। श्री सियारामशरण गुप्त ने भी 'खामेमि सव्वे जीवे" का हिन्दी पद्यानुवाद सुनाया। उन्होंने सम्पूर्ण गीता का हिन्दी में पद्यानुवाद किया है और कहा कि जनागमों के कई स्थलों को वे हिन्दी के पद्यों में रखना चाहते हैं। राष्ट्रकवि ने यह भी कहा कि वे अणुव्रत के बारे में कवितायें लिखेंगे।

भारत सेवक समाज के मंत्री का आगमन

भारत सेवक समाज के मंत्री श्री चांदीवाला जी कठौतिया भवन में आचार्य श्री के दर्शन करने आये। आचार्य श्री ने उनको अणुव्रत आंदोलन की गतिविधि से परिचित कराया तथा अभी अभी चले अणुव्रत सप्ताह की सफलता से भी अवगत कराया। मैत्री दिवस के बारे में विस्तृत जानकारी दी और कहा—मन यह विचार और भी कई जगह रखा है। सभी जगह इसका सत्कार हुआ है। इस बार हम इसको प्रयोग के रूप में ३० दिसंबर को मना रहे हैं।

चांदीवाला ने कहा—हाँ यह योजना सुन्दर है और इस प्रकार की बन्धुत्व भावना संसार में फैले तो युद्ध और अशांति का वातावरण दूर सकता है। मेरा इसमें एक सुझाव भी है कि यह दिन महात्मा गांधी

का निधन दिवस रखा जाय तो और भी महत्व की भावना से जुड़ जायेगा और विशाल पमाने पर देश विदेश मे मनाया जायेगा।

चाँदीवाला ने भारत सेवक समाज के कार्यकर्ताओ की सभा में आचार्य श्री को प्रवचन करने का निमत्रण दिया।

मन्थन (२६)

नैतिकता के एक प्रचारक के साथ

क्रमिक विकास का महत्व

२८ नवम्बर १६५६ को प्रातःकालीन प्रवचन के बाद कई व्यक्ति आचार्य श्री से बातचीत करने आये। तेरापथ व अणुव्रतों के बारे मे विस्तृत बातचीत हुई। एक व्यक्ति श्री मोहन नकलानी आचार्य श्री के पास आया और उसने कहा—महाराज! प्रारम्भ से ही नैतिक विषयों में मेरी रुचि रही है। मैं पहले थियोसाफिकल सोसाइटी मे प्रचारक था। अब मैं चाहता हू कि अणुव्रतो के प्रचार में अपना समय लगाऊ। आंदोलन के प्रति मेरा आकर्षण इसलिये हुआ कि यह क्रमिक विकास को महत्व देता है। व्यक्ति एक साथ ऊचा नहीं चढ़ सकता। वह धीरे धीरे प्रगति कर सकता है। देखिये अग्रेजी मे मैंने अणुव्रत आदोलन के नियम उप नियमों को रखने का प्रयास किया है (कई पत्र दिखाये)। आचार्य प्रवर ने उन्हें विशेष जानकारी देते हुये कहा—आपके विचार अच्छे हैं। नैतिकता का प्रचार वास्तविक प्रचार है। निष्काम सेवा करने का यह अच्छा मौका है।

वे कई दिन तक आचार्य श्री के पास आते रहे और जानकारी प्राप्त करते रहे।

केन्द्रीय श्रम उपमन्त्री के साथ

काफिर (नास्तिक) कौन

२९ दिसबर १९५६ को सायकाल प्रतिक्रम के समय श्री आबिद अली दर्शनार्थ आये। आचार्य प्रवर ने कहा—आप ठीक समय पर पहुँचे हैं। हम लोग अभी प्रतिक्रमण करके निवृत्त हुये हैं।

श्री आबिद अली—प्रतिक्रमण क्या करते हैं?

आ०—प्रतिक्रमण के छ अग हैं—(१) सबसे पहले पापों से निवृत्ति करना, (२) वीतराग की स्तुति करना, (३) मुक्त आत्माओं को वदन करना (४) प्रतिक्रमण करना (५) शारीरिक स्थूल स्पन्दनों को रोक कर समाधि पूर्वक चिंतन करना (६) उसके बाद प्रत्याख्यान किया जाता है। आपके जैसे नमाज पढ़ी जाती है, वैसे ही हमारे यहाँ प्रात काल और सायकाल दोनों वक्त किया जाता है। आपके नमाज की क्या विधि है?

श्री आबिद अली—हमारा नमाज एक प्रकार का व्यायाम है, जिसमे शारीरिक और आध्यात्मिक दोनों प्रक्रियायें समाविष्ट हैं। पहले हम सनिक की तरह तनकर खड़े हो जाते हैं। फिर दोनों कानों मे अगुली डालकर इस प्रकार झुकते हैं और ऐसे बैठते हैं (सारी प्रक्रिया करके बताई) उसके बाद इस प्रकार उठते हैं। इसमे पैर से लेकर शिर तक का सुन्दर व्यायाम थोड़े ही समय मे हो जाता है। इसी प्रकार आध्यात्मिक पहलू भी इससे सुन्दर ढग से सधता है। दोनों कानों को बद करने का अर्थ है कि हमें कोई बाहरी आवाज न सुनाई दे। अल्लाह की स्मृति मे ही अपने को केन्द्रित करना चाहते हैं। घुटनों के बल पर बैठकर इस प्रकार सिर धरती पर लगाने का भी यही मतलब है कि हम

उस सब शक्तिमान अल्लाह के आगे सवथा नतमस्तक हैं—नमाज की प्रार्थना में संकीर्णता नहीं अत्यन्त उदारता का परिचय है। उसमें ऐसा नहीं कहा गया है कि 'हे मुसलमानों के पालक' प्रत्युत कहा गया है—"हे सबको पालने वाले अल्लाह मुझ सन्मार्ग बता, सराह रास्ते से बचा।'

डा०—देश में हमने एक रचनात्मक काम चालू कर रखा है। उसका सम्बन्ध सभी वर्गों से है उसको हमने किसी जाति या धम विशेष से सम्बद्ध नहीं किया है। मानवता के सामान्य नियम उसमें लिये गये हैं जो सभी धर्मों के मूल हैं। आज परस्पर एक दूसरे के प्रति कटुता बढ़ती जा रही है। हिन्दू-मुस्लिम के बीच दरारें पड़ गई हैं। क्या ये दरारें हिंसा को प्रोत्साहन नहीं देतीं? इन्हें पाटने के विषय में आप क्या सोचते हैं? हम एक "मैत्री दिवस' (अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर) मनाने की सोच रहे हैं। आपका उसमें क्या सहयोग रहेगा?

श्री आबिद अली—जितना मैं इस विषय में कर सकूँगा उतना करने का प्रयास करूंगा। आपकी सेवा में प्रस्तुत हू।

डा०—क्या आपके कुरान में कहीं ऐसा उल्लेख है कि हिन्दू को काफिर समझना चाहिए?

श्री आबिद अली—हिन्दुओं को तो नहीं पर नास्तिक को अवश्य काफिर कहा है। हमारे यहां क्यामत का होना माना जाता है। जिसका अर्थ है कि जितने भी लोग मरते हैं, वे जी उठेंगे। खुदा उनको उनकी करनी के मुताबिक बदला देगा। उस समय लोग अपने अपने अपराधों की क्षमा के लिये खुदा से मुहम्मद से सिफारिश करायेंगे। मुहम्मद ने कहा है कि मैं उन दो व्यक्तियों की सिफारिश खुदा के आगे नहीं करूंगा—(१) जो व्यक्ति यह कहा करता है कि ये धर्मस्थान मुसलमानों के नहीं हैं दूसरों के धर्मस्थानों की बदइज्जती करता है और दख्ल देता है, और (२) जो व्यक्ति दूसरों को "मुसलमान नहीं" कह कर तकलीफ देता है।

ये दोनों बातें हमारे सिद्धान्तों की प्रतीक हैं। धर्मों में उदारता ही विशेष है। उसी के सहारे सब धर्म जीते हैं।

हिन्दुस्तान टाइम्स के सम्पादक श्री दुर्गादास जी के साथ दूसरी बार

अणुव्रत आन्दोलन की आधार भूमि

३ दिसम्बर १९५६ की रात्रि मे हिन्दुस्तान टाइम्स के सम्पादक श्री दुर्गादास जी दुबारा आचार्य श्री के दर्शनार्थ आये। उन्होंने कहा—मैंने अणुव्रत आन्दोलन के विषय मे विविध बातें सुनी थीं। बहुत सी जिज्ञासाएं इस विषय मे हुआ करती थीं। इस बार अच्छा हुआ कि यथेष्ट समाधान आपसे पा लिया। मैं चाहता हूं, आपके इस संगठन के इतिहास की झलक भी आपसे प्राप्त कर लूं तथा उसके विस्तार की आधार भूमिका की भी जानकारी ले लूं।

आचार्य श्री ने तेरापथ का इतिहास बताते हुये कहा—'तेरापथ का उद्भव आज से लगभग दो सौ वर्ष पूर्व हुआ था। उद्भव का कारण था—तात्कालिक साधु समाज का आचार शैथिल्य। तेरापथ के प्रवर्तक श्री भिक्षु स्वामी ने जिस अभिलाषा से दीक्षा ली थी, वह भावना पूरी होती दिखाई न दी।

उन्होंने जैन आगमों का विशद मथन करने के बाद गुरुवर से निवेदन किया कि हम शास्त्रोक्त पथ से विपरीत चल रहे हैं।

गुरु ने कहा—अभी पंचम काल है। जितनी साधना हो, उतनी ही अच्छी।

भिक्षु स्वामी ने कहा—जब हम घर कुटुम्ब धन धान्य सबको त्याग कर आये हैं, फिर भी अपना लक्ष्य नहीं साध सकते यह कैसे हो सकता है? पंचम काल का सहारा लेना तो हमारी कमजोरी है।

लम्बी चर्चा के बाद उन्होंने कहा—मैं इस से सहमत नहीं। इस प्रकार कोई सही मार्ग न निकलता देख आपने संघ से सम्बन्ध विच्छेद कर लिया। आचार्य श्री को यह बात अखरी और उन्होंने उनका डटकर विरोध करने की मन मे ठान ली।

उन्होंने कहा—भिक्षु ! तुम कहाँ जाओगे ? मैं तुम्हारे पीछे श्रावकों को लगा दूँगा।

भिक्षु स्वामी ने स्मित स्वर में कहा—यदि आप गाँव-गाँव में मेरे पीछे श्रावकों को लगा देते हैं तो मुझे कम परिश्रम करना पड़ेगा और लोगों मे मैं अपनी विचार धारा शीघ्र फैला सकूँगा।

आचार्य भिक्षु ने पहला प्रहार उन चीजों पर किया, जो कि आचार शिथिलता के कारण पनप रही थीं। उन्होंने कहा—

१—साधुओं को स्थानक मे नहीं रहना चाहिये।

२—साधु संघ के एक ही आचार्य हों।

३—आचार्य के अतिरिक्त कोई भी अपना शिष्य न बनाये।

४—भजनात्मक नीति रहे खण्डनात्मक नहीं।

आचार्य भिक्षु का दृष्टिकोण था कि साधुओं के निवास के लिये सार्थर्मिक। स्थानक या कोई मकान नहीं बनना चाहिये। साधुओं को तो उसमें ठहरना भी नहीं चाहिये। क्योंकि साधु बनने वाला व्यक्ति अपने एक घर को छोड़कर आता है और उसके लिये जगह-जगह स्थानक बनने लगें तो उसकी माया ममता घटी नहीं प्रत्युत बढ़ी है। वह गृहस्थों से भी कहीं अधिक वजनदार ममतावान बन गया क्योंकि उसके एक घर के बदले अनेक घर हो जाते हैं। इसीलिये आपने कहा—साधुओं के लिये कहीं कोई स्थानक न हो। जहाँ कहीं भी साधु जायें वहाँ गृहस्थों से अपने आचारानुकूल स्थान माँग कर विश्राम करे।

दूसरी बात था—संघ मे एक ही आचार्य हो। अनेक आचार्य होने से संघ मे एक परंपरा नहीं रह सकती और मनुष्य स्वभाव की सहज कमजोरी के कारण शिष्य पुस्तक श्रावक आदि को लेकर प्रतिद्वन्द्विता भी

हिन्दुस्तान टाइम्स के सम्पादक श्री दुर्गादास जी के साथ दूसरी बार

अणुव्रत आन्दोलन की आधार भूमि

३० दिसम्बर १९५६ को रात्रि में हिन्दुस्तान टाइम्स के सम्पादक श्री दुर्गादास जी दुबारा आचार्य श्री के दर्शनार्थ आये। उन्होंने कहा—मैंने अणुव्रत आन्दोलन के विषय में विविध बातें सुनी थीं। बहुत सी जिज्ञासाएँ इस विषय में हुआ करती थीं। इस बार अच्छा हुआ कि यथेष्ट समाधान आपसे पा लिया। मैं चाहता हूं, आपसे इस संगठन के इतिहास की झलक भी आपसे प्राप्त कर लूं तथा उसके विस्तार की आधार भूमिका की भी जानकारी ले लूं।

आचार्य श्री ने तेरापंथ का इतिहास बताते हुये कहा—'तेरापंथ का उद्भव आज से लगभग दो सौ वर्ष पूर्व हुआ था। उद्भव का कारण था—तात्कालिक साधु समाज का आचार शैथिल्य। तेरापंथ के प्रवर्तक श्री भिक्षु स्वामी ने जिस अभिलाषा से दीक्षा ली थी, वह भावना पूरी होती दिखाई न दी।

उन्होंने जैन आगमों का विशेष मंथन करने के बाद गुरुवर से निवेदन किया कि हम शास्त्रोक्त पथ से विपरीत चल रहे हैं।

गुरु ने कहा—अभी पंचम काल है। जितनी साधना हो उतनी ही अच्छी।

भिक्षु स्वामी ने कहा—जब हम घर, कुटुम्ब धन धान्य सबको त्याग कर आये हैं, फिर भी अपना लक्ष्य नहीं साध सकते, यह कैसे हो सकता है? पंचम काल का सहारा लेना तो हमारी कमजोरी है।

लम्बी चर्चा के बाद उन्होंने कहा—मैं इस से सहमत नहीं। इस प्रकार कोई सही मार्ग न निकलता देख आपने संघ से सम्बन्ध विच्छेद कर लिया। आचार्य जी को यह बात खटकी और उन्होंने उनका डटकर विरोध करने की मन में ठान ली।

उन्होंने कहा—भिक्षु! तुम कहाँ जाओगे? मैं तुम्हारे पीछे श्रावकों को लगा दूंगा।

भिक्षु स्वामी ने स्मित स्वर में कहा—यदि आप गाँव-गाँव में मेरे पीछे श्रावकों को लगा देते हैं तो मुझे कम परिश्रम करना पड़ेगा और लोगों में मैं अपनी विचार धारा शीघ्र फैला सकूँगा।

आचार्य भिक्षु ने पहला प्रहार उन बातों पर किया, जो कि आचार शिथिलता के कारण पनप रही थीं। उन्होंने कहा—

१—साधुओं को स्थानक में नहीं रहना चाहिये।

२—साधु संघ के एक ही आचार्य हों।

३—आचार्य के अतिरिक्त कोई भी अपना शिष्य न बनाये।

४—अहंनात्मक नीति रहे ध्वंसनात्मक नहीं।

आचार्य भिक्षु का दृष्टिकोण था कि साधुओं के निवास के लिये साधकों की प्रेरणा से कोई मकान नहीं बनना चाहिये। साधुओं को तो उसमें ठहरना भी नहीं चाहिये। क्योंकि साधु बनने वाला व्यक्ति अपने एक घर को छोड़कर आता है और उसके लिये जगह-जगह स्थानक बनने लगें तो उसकी माया ममता घटी कहाँ प्रत्युत बढ़ी है। वह गृहस्थों से भी कहीं अधिक वजनदार ममतावान बन गया क्योंकि उसके एक घर के बदले अनेक घर हो जाते हैं। इसीलिये आपने कहा—साधुओं के लिये कहीं कोई स्थानक न हो। जहाँ कहीं भी साधु जायें, वहाँ गृहस्थों से अपने आचारानुकूल स्थान माँग कर विश्राम करें।

दूसरी बात थी—संघ में एक ही आचार्य हो। अनेक आचार्य होने से संघ में एक परम्परा नहीं रह सकती और मनुष्य स्वभाव की सहज कमजोरी के कारण शिष्य पुस्तक श्रावक आदि को लेकर प्रतिस्पर्द्धा भी

यही कारण है कि आज तक तेरापथ सघ सबसे समन्वय करता हुआ दिनों दिन प्रगति पर है।

तेरापथ के अतिरिक्त और भी अनकों विषयों पर वार्तालाप हुआ।

मन्थन (३)

राष्ट्रपति के साथ तीसरी बार

जैन आगम कोष का महत्वपूर्ण निर्माण

४ दिसम्बर १६५६ को प्रात आचार्य जी राष्ट्रपति भवन पधारे, जहाँ राष्ट्रपति जी क साथ लगभग सवा घट तक तेरापथ सघ मे चल रही साहित्य साधना, ग्रन्थ निर्माण, विद्या प्रसार तथा अणुव्रत आन्दोलन के बहुमुखी कायक्रमों पर अत्यन्त आत्मीय रूप म विचार विमश चला।

वार्तालाप क बीच आचाय श्री न बताया कि जन आगमों पर तुलनात्मक विश्लेषणात्मक एव समीक्षात्मक अनुशीलन के लिये पर्याप्त तथा व्यवस्थित सामग्री उपलब्ध हो सक इस दृष्टि से आगम कोष का विशाल साहित्यिक काय हमारे यहाँ चल रहा है।

राष्ट्रपति जी न कोष के काय को ब्योरेवार समझने मे बडी दिलचस्पी ली। आचाय श्री न कोष का प्रकार प्रणाली सचयन विधि आदि से उन्हें अवगत कराया। साथ ही कहा—

जन वाङ्मय विभिन्न विषयों के अलभ्य शब्दों का विशाल आगार है। खेद इसी बात का है कि जितना अपेक्षित था उसम मन्थन और गवेषण नहीं हो पाया अन्यथा सस्कृत एव हिन्दी जगत को उसके शब्द कोष की श्रीवृद्धि करने वाले उपयुक्त शब्द मिल पाते। उदाहरणार्थ—

हो सकती है। पर जहां एक आचार्य होता है, वहां इन दोनों की संभावना नहीं रहती।

तीसरी बात थी—आचार्य ही शिष्य बनायें, इससे एक बहुत बड़ा खतरा टल गया क्योंकि जब प्रत्येक साधु शिष्य बनाने के चक्कर में पड़ जाते हैं तो फिर कोई मर्यादा नहीं रहती और न कोई योग्य अयोग्य का विवेक ही रहता है। फिर तो यही ध्यान रहता है कि मेरे अधिक से अधिक शिष्य कैसे हों? और मैं अमुक साधु को इस विषय में कैसे पछाड़ सकूं। माता पिता की आज्ञा बिना मूंड लेना, फुसलाकर या प्रलोभन देकर बहला लेना आदि अनेक दोष केवल शिष्य वृद्धि के ख्याल से आ जाते हैं। उनका निराकरण करने के लिये यह बड़ा उपयोगी सिद्ध हुआ।

चौथी बात है—मंडनात्मक नीति रखना और खंडन नहीं करना। अपने जो सिद्धान्त हैं उनकी प्ररूपणा करना उनके उपयोग के बारे में बताना तथा उनके प्रचार के लिये भूमिका तयार करना। यह तो ठीक पर दूसरों का खंडन करना और व्यक्तिगत आक्षेप करना, इससे वे सहमत नहीं थे क्योंकि किसी की आलोचना करके या निंदा करके उसको सुधारा नहीं जा सकता प्रत्युत उसे बुरा ही बनाया जा सकता है और न कोई दूसरे की कटु आलोचना करके बड़ा ही बन सकता है। इससे तो उसकी मनोवृत्ति दूषित ही होती है।

यही कारण है कि आज तक तेरापंथ की तरफ से किसी की व्यक्तिगत कटु आलोचना नहीं की गई, जबकि तेरापंथ के विषय में अनेकों पुस्तकें और पेम्फलेट आदि मिलेंगे, जो केवल विरोध में ही लिखे गये हैं।

आचार्य भिक्षु ने इन नियमों के आधार पर संघ को अत्यन्त व्यवस्थित तथा आचारनिष्ठ बनाया।

यद्यपि तेरापंथ का विरोध अब तक होता रहा है आचार्य भिक्षु के समय में तो भोजन पानी स्थान आदि मिलने में भी कठिनाई होती थी। आज भी विरोध की समाप्ति नहीं हुई है। किन्तु हमारी तरफ से सदा यही रहा कि 'जो हमारा हो विरोध हम उसे समझें विनोद"।

यही कारण है कि आज तक तेरापथ संघ सबसे समन्वय करता हुआ दिनों दिन प्रगति पर है।

तेरापथ के अतिरिक्त और भी अनकों विषयों पर वार्तालाप हुआ।

मन्थन (३२)

राष्ट्रपति के साथ तीसरी वार
जैन आगम कोष का महत्वपूर्ण निर्माण

४ दिसम्बर १९५९ को प्रात आचार्य जी राष्ट्रपति भवन पधारे जहाँ राष्ट्रपति जी के साथ लगभग सवा घंटा तक तेरापथ संघ में चल रही साहित्य साधना, ग्रन्थ निर्माण, विद्या प्रसार तथा अणुव्रत आन्दोलन के बहुमुखी कार्यक्रमों पर अत्यन्त आत्मीय रूप में विचार विमर्श चला।

वार्तालाप के बीच आचार्य श्री ने बताया कि जैन आगमों पर तुलनात्मक, विश्लेषणात्मक एवं समीक्षात्मक अनुशीलन के लिये पर्याप्त तथा व्यवस्थित सामग्री उपलब्ध हो सके, इस दृष्टि से आगम कोष का विशाल साहित्यिक कार्य हमारे यहा चल रहा है।

राष्ट्रपति जी ने कोष के कार्य को ब्योरेवार समझने में बड़ी दिलचस्पी ली। आचार्य श्री ने कोष का प्रकार, प्रणाली सचयन विधि आदि से उन्हें अवगत कराया। साथ ही कहा—

जैन वाङ्मय विभिन्न विषयों के अलभ्य शब्दों का विशाल आगार है। खेद इसी बात का है कि जितना अपेक्षित था उसमें मन्थन और गवेषण नहीं हो पाया, अन्यथा संस्कृत एवं हिन्दी जगत को उसके शब्द कोष की श्रीवृद्धि करने वाले उपयुक्त शब्द मिल पाते। उदाहरणार्थ—

जसे मटर (Matter) के लिये पुदगल जितना सादृश्य बोधकता के लिहाज से उपयुक्त है, उतना 'भूत' या कोई दूसरा शब्द नहीं है, पर इस ओर उपेक्षा रहने से यह प्रचलित नहीं हो पाया।

राष्ट्रपति जी ने आचार्य श्री के नेतृत्व में निर्मित हो रहे आगम कोष के कार्य के लिये हर्ष प्रगट करते हुए कहा—यह साहित्य का बहुत बडा काम हो रहा है जिसकी आज आवश्यकता है।

जैन वाङमय में विभिन्न विषयों के उपयुक्त अर्थबोधक ऐसे-ऐसे शब्द मिल सकते हैं यह जानकर राष्ट्रपति जी को बहुत प्रसन्नता हुई।

तत्वज्ञान, दर्शन, काव्य गद्य आदि विविध साहित्यक प्रवत्तियों का विहगावलोकन कराते हुए आचार्य प्रवर ने जैन सिद्धान्त दीपिका तथा विजय यात्रा आदि की भी चर्चा की।

राष्ट्रपति जी की उत्सुकता एवं जिज्ञासा देख आचार्य श्री ने उन्हें जैन सिद्धान्त दीपिका के एक प्रकरण का कुछ हिस्सा सुनाया। मुनि श्री नथमल जी ने विजय यात्रा के दो गद्य-गीत उन्हें बताये।

राष्ट्रपति जी ने बडी अभिरुचि से यह सब सुना और इन साहित्यिक कृतियों के लिए बधाई दी।

आचार्य श्री ने बातचीत के बीच उन्हें यह भी बताया कि दर्शन और विज्ञान का तुलनात्मक अध्ययन कई साधु कर रहे हैं। जैन दर्शन के स्याद्वाद और आइन्स्टीन की थ्योरी आफ रिलेटिविटी (Theory of Pelativity) परमाणु और एटम आदि तुलनात्मक खोजपूर्ण सामग्री भी तैयार की गई है। आचार्य श्री ने मुनि श्री नगराज जी की ओर संकेत किया। मुनि श्री नगराज जी ने इन विषयों पर अपने द्वारा किये गये शोध कार्यों से राष्ट्रपति जी को विशदतया अवगत कराया।

राष्ट्रपति जी बोले—आज विकास का बहुत अच्छा कार्य हो रहा है। इसमें एक बात और मैं कहना चाहूंगा—परमाणु आदि विषयों में विज्ञान जहाँ तक पहुँचा है वहाँ तक तो प्राचीन वाङमय के आधार पर सिद्ध करते ही हैं। उसके साथ-साथ परमाणु आदि विवेचनीय विषयों में

विज्ञान द्वारा प्राप्त विवरण के अतिरिक्त और जो अधिक तथा विस्तृत बातें प्राचीन वाङ्मय में प्राप्त हों उन्हें भी प्रकट किया जावे तो आगे चल कर विज्ञान जब उन तथ्यों तक पहुँचेगा तब प्राचीन वाङ्मय का और अधिक महत्व वैज्ञानिकों और विद्वानों की दृष्टि में आयगा।

मुनि श्री नगराज जी ने कहा—इस दृष्टि से भी गवेषणा काम किया जा रहा है। जैसे विज्ञान की दृष्टि से अन्तिम अविभाज्य अणु इलेक्ट्रन (Electron) माना गया है जैन आगमों की दृष्टि से वह अन्तिम अणु नहीं है वह अनन्त अणुओं के संघात से बना स्कन्ध है। इस दृष्टि पर विशेष ध्यान दिया जायगा।

राष्ट्रपति जी जिज्ञासापूर्ण उत्सुकता से आचार्य श्री से पूछने लगे—जो रिसर्च स्कॉलर साहित्य शोध का इस प्रकार का काम करते हैं वे दिन रात लाइब्रेरियों में बैठे रहते हैं वहीं इस काम में लगे रहते हैं पुस्तकों की सुविधा उन्हें वहां रहती है पर आप लोग जो पर्यटन करते रहते हैं, यह काम किस प्रकार करते हैं ?

आचार्य श्री ने राष्ट्रपति जी को एक पोथी खोल कर दिखाई जिसमें विभिन्न विषयों के पचासों हस्तलिखित ग्रन्थ थे। आचार्य श्री ने कहा—साधु चर्या के नियमानुसार हम अपनी कोई भी वस्तु गृहस्थों के पास नहीं छोड़ सकते, क्योंकि प्रत्येक चीज का प्रतिलेखन जो करना होता है। इसलिये अपनी प्रत्येक वस्तु अपने साथ अपने कंधों पर लिये चलते हैं। प्रत्येक साधु ऐसी दो पोथियां लिये चलता है।

राष्ट्रपति जी कहने लगे—यह तो आपकी चलती फिरती लाइब्रेरी है। वास्तव में बहुत बड़ा काम आप कर रहे हैं। पर्यटन प्रचार आदि और सब काम करते हुए साहित्य का इतना बड़ा काम आपके यहाँ हो रहा है यह बहुत खुशी की बात है।

सूक्ष्माक्षरों के पत्र को राष्ट्रपति जी ने बड़ी अभिरुचि के साथ देखा। वों स्पष्ट नहीं दिखाई देता था इसलिए उन्होंने अपने यहां का एक एक आधा फुट लम्बा आई ग्लास मंगाया और उससे पत्र को देखा। बड़ा

आश्चर्य और हर्ष उन्होंने प्रगट किया। अणुव्रत आन्दोलन के विषय में भी वार्तालाप हुआ। राष्ट्रपति जी ने कहा—मैंने तो उस दिन सभा में भी कहा था कि मैं समर्थक का पद लेना चाहूंगा।

इस प्रकार अनेक विषयों पर बड़ा महत्त्वपूर्ण वार्तालाप हुआ।

मन्थन (३३)

फ्रांस के राजदूत के साथ

'भुला दो और क्षमा करो' की महत्वपूर्ण भावना

ता० ५ जनवरी १९५७ को सायंकाल फ्रांस के राजदूत स्त-कोम्त स्तानिस्लास ग्रास्त्रोराग अपने सहोदर सहित आचार्य श्री के पास आये। उन्होंने अपनी स्मृति को ताजा करते हुये कहा—पांच वर्ष पूर्व मैं आपसे मिला था। आचार्य श्री ने उन्हें अणुव्रत आन्दोलन का परिचय देते हुये कहा—यद्यपि हम जैन हैं पर आन्दोलन के नियम पूर्णतः असाम्प्रदायिक हैं। नियम सर्वजनोपयोगी हैं। आन्दोलन ने जन जीवन को काफी झकझोरा है। विचारों की दृष्टि से तो वह लगभग भारत व्यापी हो चुका है पर मैं चाहता हूं कि विदेशों में भी इससे लाभ लिया जाय। ये नियम वहां के लिये भी लाभप्रद हैं, ऐसा मैं सोचता हूं। हम चाहते हैं कि भारत की तरह अन्य देश भी इसमें सम्मिलित हों, और यह काम आप लोगों के द्वारा सम्भव हो सकता है।

दूसरी बात है—संसार में सहिष्णुता और सद्भावना अधिकाधिक बढ़े, इसलिये हमने एक 'मैत्री दिवस' का भी आयोजन किया, जिसका

उदघाटन राष्ट्रपति जी ने किया था। हम सोचते हैं कि यह दिन अन्तर्राष्ट्रीय रूप से मनाया जाए ताकि आपस के सबधो मे पवित्रता पैदा हो सके।

राजदूत—मत्री की भावना को उत्तेजित करने के क्या उपाय हैं ?

आचार्य श्री—इसका एक मात्र उपाय है 'फारगेट ऐंड फारगिव' (भुला दो और क्षमा करो)—के सिद्धान्त को जीवन मे उतारना। हम औरों की भूलों को भुला दें तथा अपनी भूलों के लिये औरों से क्षमा माँगें। यदि यह भावना बलवती बन जाय तो काफी तनाव मिट सकते हैं। एक दिन की भावना का प्रसार भी काफी काम करेगा ऐसा मेरा विश्वास है। हम इसको अन्तर्राष्ट्रीय रूप देना चाहते हैं। आप बताइये कि एक दिन कौनसा रखा जाए जो सभी दलों के लिये अनुकूल हो सके।

राजदूत—कोई भी एक दिन निर्धारित किया जा सकता है पर मेरे विचार से दूसरों के मतों का विशिष्ट दिन नहीं होना चाहिये। क्योंकि ऐसा करने से उसमे साम्प्रदायिकता की बू आजाती है। स्मृति की दृष्टि से एक जनवरी सब श्रेष्ठ है।

आचार्य श्री—अभी यूनस्को के डायरेक्टर जनरल डा० लूथर इवेन्स ने भी इस विषय मे अपनी अभिरुचि दिखाई और उन्होंने कहा था कि वे इस पर विचार करेंगे। हम चाहते थे कि समस्त विदेशी राजदूतों व अन्य अधिकारियों के बीच हम इस भावना को रखें और इसकी महत्ता से उन्हें परिचित करावें। आप अपने इष्टमित्रों को इसकी पूर्ण जानकारी दन का प्रयत्न करें।

राजदूत—हाँ, जो लोग इसमें रुचि रखते हैं तथा जिन पर मेरा विश्वास है, उनसे मैं अवश्य कहूगा अपनी निजी हैसियत से अपने देश मे इसका प्रसार करने का प्रयत्न करूगा।

समय थोडा था। उन्हें जल्दी जाना था। उन्हें कलात्मक चार्ट तथा सूक्ष्म लेखन-पत्र दिखाया गया, जिन्हें उन्होंने काफी गौर से देखा और कला की बारीकियों से युक्त इन चीजों को देख वे बड़े प्रसन्न हुए।

परिशिष्ट १

१

बिडलाजी से वार्तालाप

सेठ जुगलकिशोर जी आचार्य श्री से बातचीत करने आये। अनेक धार्मिक दार्शनिक और अनुभूत विषयों पर बात हुई।

उन्होंने आचार्य श्री से पूछा—क्या आपको लगता है कि भारत का उज्ज्वल भविष्य आने वाला है ?

आचार्य श्री ने दृढ़ता के साथ कहा—हाँ मुझे ऐसा लगता है कि आने वाले भारत के दिन उजले होंगे। अपने दिल्ली प्रवास के समय राष्ट्रपति और पंडित नेहरू से लेकर अनेक मामूली मजदूरों से मिलकर मैं अपने मन में ऐसा अनुभव करता हूँ कि जैसे सभी नैतिकता के प्रति निष्ठा की भावना व्यक्त करते हैं। अगर यह भावना कुछ स्थायी हो सकी और

हम भी लोगों को अपना सहयोग देते रहे तो ताज्जुब नहीं है कि भारत एक नई करवट ले ले। पंडित जी मुझे भी इधर दो तीन बार मिलन से मुझे अन्तर लगता है। वे उत्तरोत्तर गम्भीर बनते जा रहे हैं। जन साधुओं के आचार-व्यवहार को जानकर विद्वान जी कहने लगे—मुझे विश्वास है कि जैनी साधुओं में ६० प्रतिशत साधक हैं। पर हमारे साधुओं की स्थिति इससे उल्टी है हालांकि हिन्दुओं में भी कोई साधक नहीं है ऐसी बात नहीं है। पर उनमें कम मिलेंगे। उनकी संख्या १० प्रतिशत से अधिक नहीं होगी ६० प्रतिशत ढोंगी हैं।

मैं चाहता हूं दिल्ली को आप अपना कार्य केन्द्र बनावें। वहां से सारे भारतवर्ष में आध्यात्मिकता की चेतना फूंके।

पंडित जी से आप दो-तीन बार मिले यह बड़े हर्ष की बात है। वे तो ऐसे आदमी हैं, जो धर्म की बात सुनते ही चिढ़ जाते हैं। आप सम्भव हो तो उनसे और मिलिये। अगर आपने एक जवाहरलाल जी को आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर कर दिया तो बहुत बड़ा काम कर लेंगे। इस प्रकार यह वार्ता प्रसंग बहुत सुन्दर रहा।

२

आटोग्राफ का रूप

आचार्य श्री विद्यार्थियों में प्रवचन कर बाहर आ रहे थे। कई विद्यार्थी आचार्य श्री का आटोग्राफ लेने को उत्सुक खड़े थे। पेन्सिल और किताब देते हुये विद्यार्थियों ने कहा—आप इसमें अपना हस्ताक्षर कर दीजिये।

आचार्य श्री ने मुस्कराते हुये कहा—देखो बच्चो! मैंने जो बातें आज कही हैं उन्हें जीवन में उतारने का प्रयास करो। वही हमारा सच्चा आटोग्राफ होगा। ऐसे हस्ताक्षरों से क्या होगा। बच्चों ने देखा इस छोटी सी बात के पीछे आचार्य जी का कैसा गूढ़ उपदेश है।

परिशिष्ट १

१

बिड़लाजी से वार्तालाप

सेठ जुगलकिशोर जी आचार्य श्री से बातचीत करने आये। अनेक धार्मिक दार्शनिक और अनुभूत विषयों पर बात हुई।

उन्होंने आचार्य श्री से पूछा—क्या आपको लगता है कि भारत का उज्ज्वल भविष्य आने वाला है?

आचार्य श्री ने दृढ़ता के साथ कहा—हाँ, मुझे ऐसा लगता है कि आने वाले भारत के दिन उजले होंगे। अपने दिल्ली प्रवास के समय राष्ट्रपति और पंडित नेहरू से लेकर अनेक मामूली मजदूरों से मिलकर मैं अपने मन में ऐसा अनुभव करता हूँ कि जैसे सभी नैतिकता के प्रति निष्ठा की भावना व्यक्त करते हैं। अगर यह भावना कुछ स्थायी हो सके और

हम भी लोगों को अपना सहयोग देते रहें तो ताज्जुब नहीं है कि भारत एक नई करवट ले ले। पंडित जी में भी इधर दो तीन बार मिलने से मुझे अन्तर लगता है। वे उत्तरोत्तर गम्भीर बनते जा रहे हैं। जैन साधुओं के आचार-व्यवहार को जानकर बिड़ला जी कहने लगे—मुझे विश्वास है कि जैनों साधुओं में ६० प्रतिशत साधक हैं। पर हमारे साधुओं की स्थिति इससे उल्टी है हालांकि भिक्षुओं में भी कोई साधक नहीं है ऐसी बात नहीं है। पर उनमें कम मिलेंगे। उनकी संख्या १० प्रतिशत से अधिक नहीं होगी, ६० प्रतिशत ढोंगी हैं।

मैं चाहता हूं दिल्ली को आप अपना कार्य केन्द्र बनायें। वहां से सारे भारतवर्ष में आध्यात्मिकता की चेतना फूंके।

पंडित जी से आप दो-तीन बार मिले यह बड़े हर्ष की बात है। वे तो ऐसे आदमी हैं जो धर्म की बात सुनते ही चिढ़ जाते हैं। आप समय हो तो उनसे और मिलिये। अगर आपने एक जवाहरलाल जी को आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर कर दिया तो बहुत बड़ा काम कर लेंगे। इस प्रकार यह वार्ता प्रसंग बहुत सुन्दर रहा।

२

आटोग्राफ का रूप

आचार्य श्री विद्यापीठ में प्रवचन कर बाहर आ रहे थे। कई विद्यार्थी आचार्य श्री का आटोग्राफ लेने को उत्सुक खड़े थे। पेंसिल और किताब देते हुये विद्यार्थियों ने कहा—आप इसमें अपना हस्ताक्षर कर दीजिये।

आचार्य श्री ने मुस्कराते हुये कहा—देखो बच्चो! मैंने जो बात आज कही है उन्हें जीवन में उतारने का प्रयास करो। वही हमारा सच्चा आटोग्राफ होगा। इन हस्ताक्षरों से क्या होगा। बच्चों ने देखा इस छोटी सी बात के पीछे आचार्य जी का कैसा गूढ़ उपदेश है।

३

अध्यापक बनाम विद्यार्थी

पिलानी बालिका विद्यापीठ मे प्रवचन कर आचार्य श्री आ रहे थे कि एक परिचित विद्यार्थी आचार्य श्री से पूछने लगा—अब आप का आगे का क्या कार्यक्रम है ?

आचार्य श्री ने कहा—अब तो ४ १५ बजे प्रोफेसरों की एक सभा में प्रवचन है।

उसने हँसते हुये कहा—तब तो हम भी उसमे सम्मिलित हो सकेंगे ? क्या कि आज प्रात काल प्रवचन मे आपने हम विद्यार्थियों को वास्तविक प्रोफेसर कहा था, क्यों सही है न ?

आचार्य श्री ने सस्मित उत्तर दिया—पर तब तो वह प्रोफेसरों की सभा नहीं रहेगी। फिर तो प्रोफेसर ही विद्यार्थी बन जायेंगे। तब वहाँ तुम्हारे आने का प्रश्न नहीं रहता। वह हस कर प्रणाम करके चल दिया।

४

पैरों में पीड़ा है क्या ?

सेठ मगलकिशोरजी बिड़ला गाव के बाहर तक आचार्य श्री को विदा करने आये। रास्ते में वे बातें करते जा रहे थे। आचार्य श्री को बार-बार रुकना पड़ता था। ८–१० बार ऐसा हुआ।

बिड़लाजी ने सोचा—आचार्य श्री के पैरों मे पीड़ा है, अत वे ठहर ठहर कर चल रहे हैं। उन्होंने पूछा—आपके पैरों मे पीड़ा है क्या ?

आचार्य श्री ने कहा—नहीं, पीड़ा नहीं हैं। हमारा यह नियम है कि हम चलते समय बात नहीं करते। अत मुझे ठहरना पड़ता है। वे कहने लगे—तब तो आपको बहुत कष्ट होता है। मुझे भी आपसे चलते समय बात नहीं करनी चाहिये।

५

मैं उपवास करूँगा

उस दिन उपासना में ही कुछ ऐसा आश्चर्यजनक प्रसंग आया, जिसकी कोई कल्पना भी नहीं थी। सदा की भाँति आचार्य श्री छोटे साधुओं को अध्ययन करा रहे थे। अपने व्यस्त कार्यक्रम में शिष्यों के अध्यापन को आप कितना महत्त्व देते हैं यह इससे स्पष्ट हो जाता है। अध्ययन में 'शान्त सुधारस' नामक ग्रन्थ के पढ़ते ही श्लोक में एक शब्द आया—'अम्भोधर'

आचार्य श्री शब्द की व्युत्पत्ति, समास अर्थ आदि की पूरी छानबीन करने लगे। उन साधुओं से यह न हो सका तो उनसे बड़े साधुओं को बुलाया गया। उनमें से किसी ने कुछ बताया किसी ने कुछ। उन्होंने अर्थ बता दिया। समास बताया—अम्भ धरतीति अम्भोधरः इत्यत्र तत्पुरुष। धातोरिति सूत्र से सिद्ध किया। पर उनका यह प्रयोग गलत था।

आचार्य श्री ने कहा—मुझे आशा नहीं थी कि तुम लोगों में इतनी पोल है।

अब उन से भी बड़े साधुओं की बारी आई। आचार्य श्री कहने लगे—उन्हें क्या बुलायें। वे तो शायद बता देंगे। उन्हें भी बुलाया गया। वे भी ठीक-ठीक नहीं बता सके।

आचार्य श्री ने कहा—सभी एक सा बताते हैं कहीं मैं ही तो गलती पर नहीं हूँ।

आन्तरिक वेदना अनुभव करते हुये आचार्य श्री कहने लगे—क्या 'तत्पुरुषे कृति' सूत्र से यह नहीं साधा जा सकता? तुम में से किसी ने भी इस सूत्र पर ध्यान नहीं दिया। मैं यह तो कभी कल्पना ही नहीं करता था कि इस प्रकार तुम सब लोग ही गलत बताओगे। क्या हमारा संस्कृत का अध्ययन यही है? एक छोटा सा भी शब्द तुम

नहीं बता सके । मुझे यह देखकर चिंता होती है कि संस्कृत के क्षेत्र में विकास के स्थान पर ह्रास होता जारहा है । यदि यही क्रम चलता रहा तो भविष्य की स्थिति और भी अधिक चिंतात्मक होगी । मुझे इस पर दुःख है । इसके लिए तुम को दोषी कैसे ठहराऊँ ? मैं समझता हूँ इसमें मेरी ही गलती है । अतः मुझे अपना आत्म शोधन करना चाहिये । और इसके लिये मुझे एक उपवास करना पड़गा । सब अवाक् रह गये । सबने निवेदन भी किया कि यह तो हमारी ही गलती है । आप उपवास क्यों करें ? हम अपनी कमजोरी सुधारने की कोशिश करेंगे । पर आचार्य श्री ने उसे स्वीकार नहीं किया ।

६

एक घटना

नारायण गाँव की बात है । एक सर्वथा अपरिचित व्यक्ति आचार्य श्री के पास आया और अपनी बात सुनाने लगा—आचार्य जी ! आज से सात दिन पहले मेरे मन में बहुत बेचनी थी । रास्ता नहीं मिल रहा था । रात को कुछ भारी मन से सो गया । मुझे योग की तरफ बचपन से ही रुचि रही है और उसकी खोज में मैं बहुत से योगियों से भी मिला था । पर मुझे पूरा संतोष नहीं हुआ । यहाँ मैं सिन्ध से शरणार्थी होकर आया हू । घर पर मैं और मेरी माताजी के सिवाय और कोई नहीं है । माताजी को छोड़कर जंगल में जाना मुझे उचित नहीं लगा और यहाँ घर में मेरा मन नहीं लगता था । मेरे मन में यह द्वन्द्व चल रहा था । स्वप्न में मुझे मेरे गुरु दिखाई दिये । उन्होंने मुझसे कहा—तुम चिंता क्यों करते हो । आज से सात दिन बाद यहाँ पर एक आचार्य आयेंगे वे तुम्हें रास्ता दिखायेंगे । उन्होंने मुझे जो आकार प्रकार बताया वह सारा आप में मिलता है । मेरे भाग्य से आप पधार गये । आपके दर्शन से मुझे इतनी आत्म शांति मिली कि उसे मैं शब्दों में नहीं बता सकता । फिर वह आचार्य श्री को अपने घर ले गया ।

आखिर आचार्य श्री ने जब वहाँ से विहार किया तो वह इतना रोया कि वह एक शब्द भी नहीं कह सका।

कुछ दिन बाद उसने आचार्य श्री को एक पत्र लिखा। उसमें अपने हृदय के भावों को उड़ेल दिया।

७

पानी झर रहा था

आचार्य श्री जगणियाँ गाँव मे पधारे। दोपहर का समय था। पाँच चार झोंपड़ियों मे साधु अलग-अलग ठहरे हुये थे। लू चल रही थी। पानी भी थोड़ा ही मिला था। आचार्य श्री के पास मटकी (घड़े) में पानी पड़ा था। पास में बैठे हुये एक साधु से कहा—पानी को व्यर्थ क्यों जाने देते हो? उसने कोशिश की। पर टपक-टपक कर चूने वाले पानी को कैसे बचाया जा सकता था। मटकी एक पट्ट पर छोटे-छोटे पत्थरों पर रखी हुई थी। उसके नीचे कल्प की टोकसी रखने की चेष्टा की, पर वह भी नहीं हो सका, तो आचार्य श्री ने सुझाया—जहाँ पानी टपकता है वहाँ एक कपड़ा रख दो। पानी कपड़े म से होकर नीचे पात्र मे आ जायेगा। ऐसा ही किया गया।

शाम तक पात्र मे लगभग आधा सेर पानी भर गया। वह पानी काम मे ले लिया गया।

पर पानी को काम मे लेने से भी अधिक सतोष इस बात का था कि इस सूक्ष्म दृष्टि से कितना पानी बचाया जा सकता है।

८

धर्म या पाप

एक ६-७ वर्ष का बच्चा दौड़ा-दौड़ा आया और आचार्य श्री से पूछने लगा—महाराज माता पिता की सेवा में पाप होता है या धर्म? इतने मे एक और व्यक्ति भी कुछ बातचीत करने आये। पर एक ओर बैठ गये। आचार्य श्री ने पहले बच्चे के प्रश्न को प्रमुखता दी। कहने

लगे—माता पिता की धार्मिक सेवा मे धर्म और सांसारिक सेवा मे सांसारिक धर्म। उसे जसे समाधान मिल गया।

आचार्य श्री ने कहा—तो बताओ, यह प्रश्न तुमको किसने सुझाया? उसने सारा भेद खोलते हुये कहा कि अमुक व्यक्ति ने मुझे आप से यह प्रश्न पूछने को कहा था। आचार्य श्री कहने लगे—देखो, लोग बच्चों के दिलों मे साम्प्रदायिकता का कैसा विष भर देते हैं? नहीं तो भला इन्हें ऐसे प्रश्नों से क्या सरोकार?

९

इलायची की भेंट

आचार्य श्री 'अस्थल भोर' (रोहतक के पास) पधारे। वहाँ के महन्तजी इलायची लिये वहाँ आये। उन्होंने कहा—मैने आपका नाम तथा आपके कार्यों की बहुत प्रशंसा सुनी थी। इच्छा थी आप से मिलूं। आज मिलना हुआ है। यह मेरी भेंट (इलायची को चरणों में रखते हुये) स्वीकार करें।

आचार्य श्री ने कहा—ये सजीव हैं। इनको छूना हमारी मर्यादा के विपरीत है। दूसरी बात यह है कि हम भेंट नहीं लेते।

१०

एक प्रश्न

एक भाई ने पूछा—आप अणुव्रतों के प्रवर्तक कैसे हैं?

आचार्य श्री ने कहा—नहीं भाई, मैं अणुव्रतों का प्रवर्तक तो नहीं हू। अणुव्रत अनादि काल से चले आ रहे हैं। पर मैं वर्तमान अणुव्रत आन्दोलन का प्रवर्तक अवश्य हूँ। सब लोग हसने लगे।

आचार्य श्री ने मुस्कराते हुये कहा—तुम अभी इतनी चिन्ता क्यों करते हो ? पहले दो-चार करोड़पतियों को विशिष्ट अणुव्रती बनने के लिये प्रेरित तो करो। फिर मैं देखूंगा कि वे अणुव्रती बन सकते हैं या नहीं ?

हसते हसते उनका तर्क समाप्त हो गया।

१३

दो कबूतर

तीसरे प्रहर वाचन के समय आचार्य श्री की दृष्टि सहसा ऊपर बैठे हुये दो कबूतरों पर पड़ी। इधर से उधर उड़ते पक्षियों को देखकर आचार्य श्री ने कहा—इनका भी कोई जीवन है ? न कोई काम और न कोई प्रयोजन। आगे उनका निर्देश था—वे मनुष्य जो बिना प्रयोजन इधर उधर दौड़ धूप करते हैं और न जिनका कोई अध्ययन और चिंतन है—उनका जीवन कैसे बीतता होगा ?

मनुष्य जीता है प्रकृति से। खाने पीने की चीजें गौण हैं। हम खाते हैं तो बस प्रकृति की सहायता के लिये। अतः मनुष्य का भोजन ज्यादा घी दूध और गरिष्ठ व स्वादिष्ट चीजों वाला हो यह आवश्यक नहीं है। साधारण भोजन से हमारा काम चल सकता है। मनुष्य मनुष्य की प्रकृति भिन्न होती है। अतः उसे ऐसी चीजों से अवश्य बचना पड़ता है, जो उसके प्रतिकूल हों। प्रतिकूल का निराकरण हो जाने पर अनुकूल स्वयं शेष रह जाता है। भोजन यदि ज्यादा भारी और बहुमूल्य न हो, तो भी जीवन शक्ति में कमी नहीं आने वाली है।

१४

केवल फोटो चाहिये

आज सायं पचमी समिति पधारते वक्त सड़क पर एक यूरोपियन आया और फोटो लेने लगा। आचार्य श्री अपने ध्यान में थे, आगे निकल गये। वह फोटो नहीं ले सका।

आगे भाड़ी में जाकर सारे साधु अलग अलग चले गये। पीछे से आचार्य श्री अकेले थे और जगह की एषणा कर रहे थे कि अचानक वह यूरोपियन कमरा लिये सीधा आचार्य श्री के पास पहुच गया। आचार्य श्री ने उससे पूछा—भाई कौन हो तुम ? पास में ही श्री बुलीचन्दजी स्वामी थे। उन्होंने देखा—कोई नया सा आदमी आचार्य श्री के पास खड़ा है। वे झट से दौड़कर आये। उन्हें देखते ही वह यूरोपियन कुछ डरा। उसने देखा कि ये मुझे पीटेंगे। अत डरकर बोला—मैंने और कुछ नहीं किया है। केवल फोटो लिया है। मैं बल्जियम का रहने वाला हूं। मैंने आप जैसे साधु पहले कभी नहीं देखे थे। अत फोटो लेने की इच्छा हुई, क्षमा करें। धन्यवाद कह वह वहां से चला गया।

१४

बालक की जिज्ञासा

पास के एक छज्जे पर कुछ कबूतर बठे थे। उन्हें देखकर एक बच्चे ने झट से प्रश्न किया—क्या ये कबूतर आपके पाले हुये हैं ?

आचार्य श्री ने कहा—नहीं साधु कबूतरों को कभी नहीं पालते।

तो ये यहां क्यों बठे हैं ?—बच्चे ने पूछा।

आचार्य श्री—अगर कोई जानवर आजाये तो हम उसे वापस उड़ा तो सकते नहीं। अत ये यहां बठे हैं।

इतने में कबूतर उड़ गये।

बच्चे ने हाथ ऊपर कर कहा—वे उड़ गये, वे उड़ गये।

आचार्य श्री ने कहा—हमने तो नहीं उड़ाये थे न। हम न तो किसी को पालते हैं और न किसी को उड़ाते हैं।

बालक—हाँ, हाँ कहता हुआ वहीं बठ गया।

एक छोटे से बच्चे और आचार्य प्रवर का वार्तालाप दर्शन के कितने गहन तत्व का स्पर्श करता है।

जो आनन्द स्वयं आचार्य श्री और निश्छल बच्चे में बह रहा था, उससे आस पास बैठे हुये लोग भी प्रवाहित हुये बिना नहीं रहे।

१६

अल्लाह ने भी अनुमति दे दी

वह मुसलमान था। अवस्था लगभग ६५ वर्ष की होगी। सफेद दाढ़ी, गोरा चेहरा, बड़ी बड़ी आंखों से उसका व्यक्तित्व बाहर झांक रहा था।

वह आचार्य श्री के पास आया। अणुव्रतों की बात चल पड़ी। नियम सुनाये गये। आचार्य श्री ने पूछा—अणुव्रती बनोगे ?

उसने कहा—मैं खुदा से पूछूंगा। उसकी आज्ञा हुई तो अवश्य अणुव्रती बनूंगा।

वह वह वह मकान की ऊंची छत पर गया और लगा खुदा को पुकारने। जोर जोर से चिल्लाया। मन ही मन कुछ गुनगुनाने लगा। कुछ ही क्षणों बाद वह अतीव प्रसन्न हो, आचार्य श्री के पास आया और कहने लगा—आचार्य जी ! खुदा ने भी अनुमति दे दी है। मैं अणुव्रती बनूंगा। क्या आपका इसमें सहयोग मिलेगा ?

आचार्य—हाँ, आध्यात्मिक कार्यों में हमारा सहयोग रहता ही है।

मुसलमान—आपका यहाँ नुमाइन्दा कौन है ?

मुनि महेन्द्रजी की ओर इशारा करते हुये आचार्य श्री ने कहा—ये हमारे नुमाइन्दा हैं। इनसे आप समय समय पर बातचीत कर सकते हैं।

वह बुड्ढा मुसलमान कहने लगा—मेरे लिये कोई काम हो तो फरमाइये।

आचार्य श्री ने कहा—तुमको कम से कम १० मुसलमान अणुव्रती बनाने होंगे।

दृढ़तापूर्वक उसने यह संकल्प किया कि वह ऐसा करेगा।

१७

अन्तिम दर्शन की प्रतीक्षा

एक बहिन अपने जीवन की अंतिम घड़ियों में प्रतीक्षा कर रही थी कि कब आचार्य श्री के दर्शन हों और वह अपने इस शरीर से मुक्त हो। नहीं तो भला यह क्षीण सा अस्थिपंजर क्या ३६ दिन तक बिना खाये पीये रह सकता था ? आचार्य श्री पधारे। प्रवचन हुआ। प्रवचन समाप्त होते ही आचार्य श्री ने कहा—चलो सथारे वाली बहिन को दर्शन दे आयें। धूप काफी चढ़ चुकी थी। बालू म पर भी जलने थे। अत पास में खड़े भाई ने कहा—अभी गरमी बहुत है फिर शाम के समय पचमी से आते वक्त दर्शन दीजियेगा। आचार्य श्री ने कहा—नहीं अभी ही जाना है। आयु का क्या भरोसा। उसका घर काफी दूर था। दर्शन देकर स्थान पर आये। और थोड़ा देर मे सुना—बहिन ने सदा के लिये आँखें मूद ली। आचार्य श्री अभी उसे दर्शन देने नहीं जाते तो क्या बहिन अपनी अज्ञान आत्मा के भार से अपने देह को शान्तिपूर्वक छोड़ सकती ?

१८

अनुशासन की कठोरता

दिल्ली से सरदारशहर लौटते हुए वर्षा के कारण बहादुरगढ़ में सारा संघ रुक गया था। आगे जाना सभव न हो सका। अष्टमी का दिन था। पर कुछ साधु भूल से विगय ले आये। आचार्य श्री ने उन्हें कड़ा उलाहना देते हुये कहा— आज अष्टमी है यह तुम लोगों को ध्यान क्या नहीं रहा ? माना तुम रास्ते चलते हो वर्षा के कारण आहार थोड़ा आने की सभावना हो सकती है पर नियम नियम है। उसे ऐसे तोड़ा नहीं जा सकता। अलग विचरने वाले साधु-साध्वी भी तो इसे निभाते हैं। तुम्हारी असुविधायें उन्हें भी हो सकती हैं।

इस बात मे छिपी हुई अनशासन की कसम्पता और नियम की प्रटलता को सहज ही प्रांका जा सकता है।

१६

कार्यनिष्ठा का एक उदाहरण

आचार्य प्रवर सब्जी मण्डी कठौतिया भवन में विराज रहे थे। एक दिन प्रातःकाल मुनि श्री महेन्द्रकुमारजी से कहा—नई दिल्ली दूर तो बहुत है पर कुछ आवश्यक काय है चले जाओ। प्रातःकालीन आहार वहीं कर लेना व सायंकालीन यहीं आकर कर लेना। मुनि श्री महेन्द्र कुमार जी चल गये। सायंकालीन आहार के समय तक वापस नहीं पहुँचे। आचार्य श्री को चिंता हुई। वह सायंकालीन आहार न कर सकेगा। सूर्यास्त के साथ साथ मुनि श्री महेन्द्र कुमार जी सदर, पहाड़गंज, नई दिल्ली दरियागंज चाँदनी चौक आदि मे २० मील का दौरा कर सब्जी मण्डी पहुँचे। आचार्य श्री ने पूछा सवेरे तो आहार कर लिया होगा ? मुनि श्री महेन्द्र कुमार जी ने कहा—केवल एक कवल। आचार्य श्री ने कहा यह क्से ? उन्होंने कहा—आहार के प्रयत्न करता, इतना समय नहीं था। सहज रूप से किसी भक्त के यहाँ इतना ही प्रसाद मुझे मिला। आचार्य श्री ने उपस्थित अन्य साधुओं व कार्यकर्ताओं से कहा—कार्यनिष्ठा इसी को कहते हैं। काम की धुन मे २० मील का विहार व कवलाहारी व्रत मनुष्य को पीड़ाकारक नहीं होता। युवक साधुओं के लिये यह एक अनुकरणीय उदाहरण है। देहली के कार्यक्रम में महेन्द्र का परिश्रम मौलिक रहा है। केवल आज के अनूठे उदाहरण के लिए मैं इसे ५१ 'परिष्ठापन' पारितोषिक रूप मे देता हू। आचार्य श्री का वात्सल्य एसे प्रसगों पर बहुत बार निखर जाया करता है और युवक साधुओं को कार्यनिष्ठा की एक अदभुत प्रेरणा दिया करता है।

२५ „ — कालूँवी, भिवानी
२६ „ — हरक, सातो
२७ „ — जाट कालिज (रोहतक) कलाउड
२८ „ — रोहथ, बहादुरगढ़
२९ „ — नांगलोई, करौल बाग दिल्ली

सरदार शहर से करौल बाग (दिल्ली) तक १६१ मील का माग ११ दिन म २५ बिहार करके तय किया गया।

दिल्ली में

३० नवम्बर — बौद्ध गोष्ठी में भाषण

१ दिसम्बर ५६— ससद् भवन म प्रवचन, राष्ट्र कवि गुप्त जी श्रीमती सावित्री निगम, पुनस्का व श्री एन बिरा भावि से मुलाकात प्रश्न समाधान अन गोष्ठी में प्रवचन

२ „ — अणुव्रत गोष्ठी, राष्ट्रपति भवन में समारोह दलाईलामा से भेंट

३ „ —

४ „ —

९ ,, — गाड़ियाकम में प्रवचन, श्री मनोहर मेहता, श्री उपाध्याय और श्री गणेशीलाल मेहता के साथ भेंट

१० ,, — प्रवचन, श्री महेन्द्रमोहन चौधरी से भेंट

११ ,, — मॉडर्न हायर सेकण्डरी स्कूल में प्रवचन

१२ — प्रवचन, श्री सरदार, श्रीमती सुचेता कृपलानी, श्री कृष्णदेव और श्री रामेश्वरम से भेंट

१३ ,, — प्रवचन, राष्ट्रीय चरित्र सप्ताह, अणुव्रत सप्ताह का उद्घाटन, श्री गणेशीलाल मेहता और अन्य जिज्ञासुओं के साथ चर्चा

१४ ,, — अणुव्रत सप्ताह का दूसरा दिन, अमेरिकन महिलाओं की भेंट

१५ — अणुव्रत सप्ताह का तीसरा दिन, उपराष्ट्रपति और इंग्लैण्ड के पूर्व एडीटर की भेंट

१६ ,, — सप्ताह का चौथा दिन, हरिजन बस्ती में और सभा के प्रधान के साथ चर्चा वार्ता

१७ — सप्ताह का पाँचवाँ दिन—जिस में राष्ट्रपति के निजी सचिव श्री विश्वनाथ शर्मा से भेंट

१८ — प्रवचन, सप्ताह का छठा दिन—महिलाओं में भाषण, श्री एन० सी० चटर्जी और श्री देशपांडे से भेंट

१९ — मिनर्वा में प्रवचन, सप्ताह का सातवाँ दिन—विक्टोरिया कार्यालय और बार एसोसिएशन में, राजस्थान के राज्यपाल श्री गुरुमुख निहालसिंह और परराष्ट्रमंत्री डा० सैयद महमूद के साथ चर्चा

२० — व्यापारियों में भाषण

२१ ,, — प्रवचन, 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के संपादक

१६ ,, — मोता विलाणी
१७ ,, — बिड़ला मांटसेरी स्कूल मे प्रवचन
१८ ,, — संस्कृत साहित्य गोष्ठी
१९ ,, — बालिका विद्यापीठ इंजीनियरिंग कालेज और शिवगंगा कोठी मे प्रवचन व भाषण
२० ,, — नागरिकों की सभा मे चुनाव एवं चरित्र शुद्धि सम्बन्धी सार्वजनिक भाषण
२१ ,, — पिलानी से मडला कलाँ
२२ ,, — मलसीसर टमकोर
२३ — मोतीबाग ढाढर
२४ ,, — चरू
२५ — दूधवा, बालरासर
२६ ,, — सावसर पूलासर
२७ ,, — सरदार शहर

लौटते हुए २०६ माल का भाग १७ दिन म २७ विहार करके पूरा किया गया।